फरवरी, 2023

I.S.S.N. 2457-0494

उच्चतम न्यायालय
निर्णय पत्रिका

विधि साहित्य प्रकाशन
विधायी विभाग
विधि और न्याय मंत्रालय
भारत सरकार

संपादक-मंडल

डा. रीटा वशिष्ट,
सचिव, विधायी विभाग

श्री के. बिस्वाल,
विशेष सचिव, विधायी विभाग,
(विभागाध्यक्ष) वि.सा.प्र.

डा. अनुराग दीप, एसोसिएट प्रोफेसर,
भारतीय विधि संस्थान

डा. आर्येन्दु दि्ववेदी,
प्राचार्य, मां वैष्णों देवी ला कालेज
फैजाबाद रोड, चिनहट, लखनऊ, उ.प्र.

श्री कुलदीप चौहान,
चेयरमैन, एस.आर.सी. ला कालेज
129, सेक्टर-1, मंगल पाण्डेय नगर,
मेरठ, उ.प्र.

डा. मिथिलेश चन्द्र पांडेय,
सेवानिवृत्त प्रधान संपादक,
वि.सा.प्र.

श्री दयाल चन्द ग्रोवर,
सेवानिवृत्त उप-संपादक,
वि.सा.प्र.

श्री कमला कान्त,
प्रधान संपादक

श्री अविनाश शुक्ला,
संपादक

श्री असलम खान,
संपादक

श्री पुण्डरीक शर्मा,
संपादक

उप-संपादक : सर्वश्री महीपाल सिंह, जसवन्त सिंह, जाहन्वी शेखर शर्मा और अमर्त्य हेम विप्र पाण्डेय

ISSN 2457-0494

कीमत : **डाक-व्यय सहित**

एक प्रति : ₹ 195/-

वार्षिक : ₹ 2,100/-

© 2023 भारत सरकार, विधि और न्याय मंत्रालय

प्रधान संपादक, विधि साहित्य प्रकाशन, विधि और न्याय मंत्रालय, विधायी विभाग, भगवानदास मार्ग, नई दिल्ली-110001 द्वारा प्रकाशित तथा..... द्वारा मुद्रित ।

आई.एस.एस.एन. 2457-0494

उच्चतम न्यायालय निर्णय पत्रिका

फरवरी, 2023 अंक - 2

प्रधान संपादक

कमला कान्त

संपादक

अविनाश शुक्ला

[2023] 1 उम. नि. प.

विधि साहित्य प्रकाशन

विधायी विभाग

विधि और न्याय मंत्रालय

भारत सरकार

Online selling of law Patrikas/Books is available on

Website ➡ https://bharatkosh.gov.in/product/product

विक्रय कार्यालय : सहायक प्रबंधक, कारबार अनुभाग, विधि साहित्य प्रकाशन, विधि और न्याय मंत्रालय, विधायी विभाग, आई. एल. आई. बिल्डिंग, भगवानदास मार्ग, नई दिल्ली-110001. दूरभाष : 011-23385259, 23387589, फैक्स : 011-23387589, ई-मेल : am.vsp-molj@gov.in

संपादकीय

विधि साहित्य प्रकाशन द्वारा प्रकाशित उच्चतम न्यायालय निर्णय पत्रिका प्रतिमाह आपके अवलोकनार्थ उच्चतम न्यायालय द्वारा पारित प्रतिवेद्य निर्णय, जो न्यायाधीशों, अधिवक्ताओं, विधि छात्रों और अकादमीशियनों के लिए महत्वपूर्ण होते हैं, का प्रकाशन करता है । आप लोगों से प्राप्त सुझावों के आधार पर हमको अपनी पत्रिका की गुणवत्ता सुधारने और अपने कार्य को और अधिक निखारने की शक्ति प्राप्त होती है । कृपया अपने अमूल्य सुझावों से हमें अवगत कराते रहें और हमारा मार्गदर्शन करते रहें ।

इस अंक के माध्यम से आपके अवलोकनार्थ माननीय उच्चतम न्यायालय द्वारा 2022 की सिविल अपील संख्या 8962-8963, **बासव राज** बनाम **पदमावती और एक अन्य** [2023] 1 उम. नि. प. 159 वाले मामले में तारीख 5 जनवरी, 2023 को पारित निर्णय का अनूदित हिंदी पाठ प्रस्तुत किया गया है । इस मामले के प्रत्यर्थी (संख्या-1)/क्रेता ने अपीलार्थी/विक्रेता के पक्ष में कतिपय भूमि का विक्रय के लिए सहमति प्रदान करते हुए विक्रय करार निष्पादित किया था और अग्रिम धन का संदाय भी कर दिया था । तत्पश्चात् प्रत्यर्थी/क्रेता ने विक्रय विलेख निष्पादित कराने से इनकार कर दिया । अपीलार्थी/विक्रेता ने विक्रय करार के बाबत अपने दायित्व का निर्वहन करने के लिए तैयारी और रजामंदी के बाबत प्रत्यर्थी/क्रेता को सूचित किया, किंतु प्रत्यर्थी/क्रेता द्वारा विक्रय विलेख निष्पादित न किए जाने के कारण अपीलार्थी/विक्रेता ने विक्रय करार के विनिर्दिष्ट पालन के लिए वाद फाइल किया । विचारण न्यायालय ने प्रत्यर्थी/क्रेता का वाद डिक्री कर दिया । अपील में उच्च न्यायालय ने अपीलार्थी/विक्रेता द्वारा विक्रय करार के निर्वहन के बाबत उसकी तैयारी और रजामंदी न होने और अधिशेष रकम के संदाय के लिए अपर्याप्त निधि होने के तथ्य को साबित किए जाने के प्रयोजनार्थ कोई बैंक पासबुक आदि प्रस्तुत न किए जाने के आधार पर विचारण न्यायालय द्वारा पारित निर्णय को अपास्त कर दिया । उच्च न्यायालय के निर्णय से व्यथित होकर अपीलार्थी/विक्रेता ने उच्चतम न्यायालय की शरण ली । उच्चतम

न्यायालय ने उच्च न्यायालय के निर्णय को अपास्त करते हुए अभिनिर्धारित किया कि ऐसे मामलों, जिनमें विक्रेता द्वारा विक्रय करार के अधीन उसके दायित्व को पूरा करने के लिए उसकी तैयारी और रजामंदी के तथ्य को साबित करने के प्रयोजनार्थ उसके पास पर्याप्त साधन/निधि उपलब्ध होने के तथ्य को साबित करने के लिए बैंक पासबुक आदि प्रस्तुत करने के लिए क्रेता द्वारा न तो कहा गया हो और न ही न्यायालय द्वारा उसको ऐसा करने के लिए निर्देशित किया गया हो, तो ऐसे मामलों में विक्रेता द्वारा अपने दायित्व के निर्वहन के लिए तैयारी और रजामंदी न होने के बाबत उच्च न्यायालय द्वारा निकाले गए निष्कर्ष को कायम नहीं रखा जा सकता ।

इस अंक में नि:शक्त व्यक्ति (समान अवसर अधिकार संरक्षण और पूर्ण भागीदारी) अधिनियम, 1995 को भी ज्ञानार्थ प्रकाशित किया जा रहा है । इस संपूर्ण अंक का परिशीलन करने के पश्चात् आपकी बहुमूल्य प्रतिक्रियाएं ईप्सित हैं ।

अविनाश शुक्ला
संपादक

निर्णय-सूची

	पृष्ठ संख्या
इंद्रजीत दास **बनाम** त्रिपुरा राज्य	305
गजानंद शर्मा **बनाम** आदर्श शिक्षा परिषद् समिति और अन्य	226
प्रसाद प्रधान और एक अन्य **बनाम** छत्तीसगढ़ राज्य	242
बासवराज **बनाम** पदमावती और एक अन्य	159
मुन्ना लाल **बनाम** उत्तर प्रदेश राज्य	274
मोहिन्द्र पाल और अन्य **बनाम** जम्मू और कश्मीर राज्य	175
राज्य मार्फत केंद्रीय अन्वेषण ब्यूरो **बनाम** टी. गांगी रेड्डी **उर्फ** येरा गांगी रेड्डी	189
शिव लाल **बनाम** उत्तर प्रदेश राज्य (देखिए – पृष्ठ संख्या 274)	

संसद् के अधिनियम

नि:शक्त व्यक्ति (समान अवसर अधिकार संरक्षण और पूर्ण भागीदारी) अधिनियम, 1995 का हिन्दी में प्राधिकृत पाठ	1 – 46

विषय-सूची

पृष्ठ संख्या

जम्मू और कश्मीर राज्य रणबीर दंड संहिता, 1989 (1989 का 12)

– धारा 300 अपवाद-1, धारा 302 और धारा 304 भाग 1 – हत्या – अभियुक्तों द्वारा अभिकथित रूप से मृतकों को अपने मकान में परिरुद्ध किया जाना और उन पर हमला करके क्षतियां कारित किया जाना – क्षतियों के कारण उनकी मृत्यु हो जाना – विचारण न्यायालय द्वारा अपीलार्थियों सहित अन्य अभियुक्तों को दोषसिद्ध किया जाना और हत्या के अपराध के लिए आजीवन कारावास का दंडादेश दिया जाना – उच्च न्यायालय द्वारा पुष्टि किया जाना – अपील – संधार्यता – दोनों मृतक व्यक्ति किन परिस्थितियों में अभियुक्तों के मकान पर गए थे इस बारे में मृतकों में से एक मृतक के मृत्युकालिक कथन और अभियोजन साक्षियों के साक्ष्य में विरोधाभास होने, घटना में अभियुक्त (सं. 1) को भी पहुंची क्षतियों को अभियोजन पक्ष द्वारा स्पष्ट नहीं किए जाने और मृतकों द्वारा लाठी से प्रहार करके अभियुक्त (सं. 1) को क्षतियां कारित किए जाने के उसके विनिर्दिष्ट पक्षकथन को देखते हुए इस संभावना से इनकार नहीं किया जा सकता कि मृतकों द्वारा अभियुक्त (सं. 1) पर लाठी से प्रहार करने पर अभियुक्तों द्वारा क्रोध में आत्म-संयम की शक्ति से वंचित होकर तथा गंभीर और अचानक प्रकोपन के कारण मृतकों पर किए गए हमले के परिणामस्वरूप उनकी मृत्यु हुई थी, इसलिए अभियोजन पक्ष द्वारा अभियुक्तों के विरुद्ध धारा 302 के अधीन युक्तियुक्त संदेह के परे

पृष्ठ संख्या

मामला सिद्ध नहीं किए जाने पर उनकी दोषसिद्धि और अधिरोपित दंडादेश को धारा 304 भाग 1 के अधीन संपरिवर्तित करना न्यायोचित होगा ।

मोहिन्द्र पाल और अन्य बनाम **जम्मू और कश्मीर राज्य** 175

दंड प्रक्रिया संहिता, 1973 (1974 का 2)

– धारा 167(2) – व्यतिक्रम जमानत – रद्दकरण – अभियुक्त-प्रत्यर्थी को हत्या के अपराध के लिए गिरफ्तार किया जाना और न्यायालय द्वारा न्यायिक अभिरक्षा में विप्रेषित किया जाना – अन्वेषण अभिकरण द्वारा कानूनी अवधि (90 दिन) के भीतर आरोप पत्र फाइल नहीं करने पर विचारण न्यायालय द्वारा अभियुक्त को व्यतिक्रम जमानत पर छोड़ा जाना – मामले का अन्वेषण केंद्रीय अन्वेषण ब्यूरो को सौंपा जाना और आरोप पत्र फाइल करने के पश्चात् प्रत्यर्थी-अभियुक्त को मंजूर की गई व्यतिक्रम जमानत को रद्द करने के लिए आवेदन किया जाना – उच्च न्यायालय द्वारा आवेदन को इस आधार पर नामंजूर किया जाना कि धारा 167(2) के अधीन मंजूर की गई जमानत को गुणागुण के आधार पर रद्द नहीं किया जा सकता – अपील – संधार्यता – किसी व्यक्ति को धारा 167(2) के अधीन व्यतिक्रम जमानत पर छोड़े जाने के पश्चात् केवल आरोप पत्र फाइल कर देना ही व्यतिक्रम जमानत को रद्द करने का आधार नहीं हो सकता किंतु यदि अन्वेषण पूरा करने के पश्चात् आरोप पत्र फाइल किए जाने पर गुणागुण के आधार पर यह दृढ़ मामला सिद्ध किया जाता है कि अभियुक्त ने अजमानतीय अपराध किया

पृष्ठ संख्या

है और उसे अभिरक्षा में सुपुर्द किया जाना चाहिए, तो ऐसा कोई आत्यंतिक वर्जन नहीं है कि धारा 167(2) के अधीन मंजूर की गई व्यतिक्रम जमानत को गुणागुण के आधार पर रद्द नहीं किया जा सकता और न्यायालय विशेष कारणों/आधारों के साथ-साथ धारा 437(5) और 439(2) पर विचार करते हुए जमानत के रद्दकरण के लिए आवेदन पर गुणागुण के आधार पर विचार करने के लिए विवर्जित नहीं हैं, इसलिए उच्च न्यायालय के आदेश को अपास्त करना न्यायोचित होगा ।

राज्य मार्फत केंद्रीय अन्वेषण ब्यूरो बनाम **टी. गांगी रेड्डी** उर्फ **येरा गांगी रेड्डी** 189

– धारा 302 – हत्या – अभियुक्त और मृतक पक्ष के बीच पूर्ववर्ती दुश्मनी होना – अभियुक्तों द्वारा अभिकथित रूप से आयुधों से लैस होकर मृतक पर हमला किया जाना – मृतक को पहुंची क्षतियों के कारण उसकी मृत्यु हो जाना – प्रत्यक्षदर्शी साक्षियों के साक्ष्य के आधार पर अभियुक्तों को दोषसिद्ध किया जाना – अपील में उच्च न्यायालय द्वारा पुष्टि किया जाना – संधार्यता – जहां मामले के तथ्यों और परिस्थितियों के आधार पर तथाकथित प्रत्यक्षदर्शी साक्षियों का साक्ष्य संदेह से मुक्त न पाया गया हो और उनका साक्ष्य अनधिक्षेपणीय गुणवता का न हो तो प्रज्ञा के नियम के अनुसार उनके साक्ष्य की संपुष्टि घटनास्थल पर मौजूद अन्य साक्षियों से कराया जाना आवश्यक है और ऐसे अन्य साक्षियों के साथ-साथ अन्वेषण अधिकारी की परीक्षा न कराए जाने से अभियुक्तों को मामले में मिथ्या रूप से फंसाए जाने की संभाव्यता से इनकार नहीं करने के कारण अभियोजन पक्ष द्वारा मामले को युक्तियुक्त संदेह

पृष्ठ संख्या

के परे साबित नहीं करने पर अभियुक्तों को संदेह का फायदा देते हुए दोषमुक्त करना उचित होगा ।

मुन्ना लाल बनाम **उत्तर प्रदेश राज्य** 274

– धारा 302/34 – हत्या – सामान्य आशय – अभियुक्तों द्वारा आयुधों से लैस होकर मृतक पर आक्रमण किया जाना – मृतक को पहुंची क्षतियों विशेष रूप से सिर पर पहुंची क्षति के कारण बीस दिनों के पश्चात् मृत्यु हो जाना – नातेदार साक्षियों का साक्ष्य – दोषसिद्धि – उच्च न्यायालय द्वारा पुष्टि – संधार्यता – जहां घटना के प्रत्यक्षदर्शी नातेदार साक्षियों का साक्ष्य विश्वसनीय और भरोसेमंद पाया गया हो, वहां केवल नातेदारी के आधार पर उनके साक्ष्य पर संदेह करते हुए उसे त्यक्त नहीं किया जा सकता और अभियुक्तों द्वारा आयुधों से लैस होकर घटनास्थल पर आने तथा किसी प्रकोपन के बिना मृतक पर आक्रमण करने से उनका पूर्व-चिंतन दर्शित होने, अभियुक्तों द्वारा मृतक के मार्मिक अंग सिर पर हमला किए जाने से उनके द्वारा स्थिति का असम्यक् फायदा उठाए जाने के कारण हत्या के अपराध के लिए उनकी दोषसिद्धि न्यायोचित है और मृतक की मृत्यु घटना घटने से बीस दिनों के पश्चात् होने के आधार पर उनका हत्या के अपराध का दायित्व कम नहीं हो जाएगा ।

प्रसाद प्रधान और एक अन्य बनाम **छत्तीसगढ़ राज्य** 242

– धारा 302/34 और 201 – हत्या – पारिस्थितिक साक्ष्य – दोषसिद्धि – मृतक का अपनी मोटरसाइकिल पर अपने दो मित्रों के साथ घर से जाना और

पृष्ठ संख्या

फिर वापस न लौटना – दोनों मित्रों द्वारा पुलिस के समक्ष अभिकथित रूप से मृतक की हत्या करने के अपने अपराध की न्यायिकेतर संस्वीकृति किया जाना – अभियुक्तों मे से एक किशोर अभियुक्त का किशोर न्याय अधिनियम के अधीन विचारण किया जाना और दूसरे अभियुक्त को विचारण न्यायालय द्वारा दोषसिद्ध किया जाना – उच्च न्यायालय द्वारा दोषसिद्धि की पुष्टि किया जाना – अपील – अभियुक्तों को किसी व्यक्ति द्वारा अपराध कारित करते हुए नहीं देखे जाने के कारण मामला पारिस्थितिक साक्ष्य पर आधारित होने, अभियोजन पक्ष द्वारा अपराध का कोई हेतु सिद्ध न करने, अभियुक्तों को अंतिम बार मृतक के साथ देखे जाने का वृत्तांत संदेहास्पद होने, शव की बरामदगी न होने और केवल एक अंग बरामद होने तथा वह अंग मृतक का होने की बात को सिद्ध करने के लिए कोई डीएनए परीक्षण न कराए जाने, अभियुक्तों की न्यायिकेतर संस्वीकृति का समर्थन करने के लिए कोई संपुष्टिकारी साक्ष्य न होने बल्कि अभियोजन पक्ष द्वारा प्रस्तुत किया साक्ष्य असंगत पाए जाने के कारण परिस्थितियों की श्रृंखला की मुख्य कड़िया साबित नहीं होने पर अभियुक्त-अपीलार्थी की दोषसिद्धि को कायम रखना अन्यायसंगत होगा और उसे संदेह के फायदे का हकदार होने के कारण दोषमुक्त करना न्यायोचित होगा ।

इंद्रजीत दास बनाम **त्रिपुरा राज्य** 305

राजस्थान गैर-सरकारी शैक्षणिक संस्था अधिनियम, 1989 (1992 का 19)

– धारा 18 – मान्यताप्राप्त शैक्षणिक संस्थान के कर्मचारियों की सेवा-समाप्ति – शिक्षा निदेशक के पूर्व

पृष्ठ संख्या

अनुमोदन की आवश्यकता – कर्मचारी-प्रत्यर्थी को विभागीय जांच के पश्चात् सेवा से हटाया जाना – सेवा-समाप्ति का आदेश शिक्षा निदेशक का पूर्व अनुमोदन अभिप्राप्त किए बिना पारित किया जाना – विधिमान्यता – जहां अधिनियम में स्पष्ट रूप से यह उपबंध हो कि किसी मान्यताप्राप्त संस्था के कर्मचारी को प्रबंधमंडल द्वारा सुनवाई का युक्तियुक्त अवसर दिए बिना सेवा से हटाया, बर्खास्त या पंक्ति में अवनत नहीं किया जाएगा और साथ ही संबंधित धारा के परंतुक में यह भी उपबंध हो कि इस बाबत कोई अंतिम आदेश शिक्षा निदेशक के पूर्व अनुमोदन के बिना पारित नहीं किया जाएगा, वहां विभागीय जांच/कार्यवाहियां आयोजित करने के पश्चात् भी किसी मान्यताप्राप्त संस्था के कर्मचारी की सेवा-समाप्ति से पूर्व शिक्षा निदेशक का पूर्व अनुमोदन अभिप्राप्त किया जाना आवश्यक होने के कारण निदेशक के पूर्व अनुमोदन के बिना सेवा-सामप्ति के आदेश को कायम रखते हुए उच्च न्यायालय के निर्णय को अपास्त करना न्यायोचित होगा ।

गजानंद शर्मा बनाम **आदर्श शिक्षा परिषद् समिति और अन्य** 226

विनिर्दिष्ट अनुतोष अधिनियम, 1963 (1963 का 47)

– धारा 16(ग) – प्रत्यर्थी (सं. 1) द्वारा अपीलार्थी-विक्रेता के पक्ष में कतिपय भूमि का विक्रय करने के लिए सहमत होते हुए विक्रय करार निष्पादित किया जाना – अग्रिम धन का संदाय किया जाना – प्रत्यर्थी द्वारा विक्रय विलेख निष्पादित न किया जाना – विक्रेता

द्वारा अपने भाग का पालन करने के लिए तैयार और रजामंद होने के बारे में क्रेता को सूचित किया जाना – क्रेता द्वारा विक्रय विलेख निष्पादित न किए जाने पर विक्रेता द्वारा विनिर्दिष्ट पालन के लिए वाद फाइल किया जाना – विचारण न्यायालय द्वारा वाद डिक्री किया जाना – अपील में उच्च न्यायालय द्वारा विक्रेता के तैयार और रजामंद न होने और अतिशेष रकम का संदाय करने के लिए निधियां होने की बात को साबित करने के लिए कोई बैंक पासबुक आदि प्रस्तुत न करने के आधार पर विचारण न्यायालय के निर्णय को अपास्त किया जाना – संधार्यता – जहां विक्रेता को विक्रय करार के अपने भाग को पूरा करने के लिए तैयार और रजामंद होने की बात को साबित करने के लिए उसके पास साधन/निधियां होने की बात को दर्शित करने के लिए बैंक पासबुक आदि प्रस्तुत करने के लिए न तो क्रेता द्वारा कहा गया हो और न ही न्यायालय द्वारा ऐसा निदेश दिया गया हो, वहां विक्रेता द्वारा अपने भाग को पूरा करने के लिए तैयार और रजामंद न होने के बारे में उच्च न्यायालय द्वारा निकाले गए निष्कर्ष को कायम नहीं रखा जा सकता ।

[2023] 1 उम. नि. प. 159

बासवराज

बनाम

पदमावती और एक अन्य

[2022 की सिविल अपील सं. 8962-8963]

5 जनवरी, 2023

न्यायमूर्ति एम. आर. शाह और न्यायमूर्ति बी. वी. नागरत्ना

विनिर्दिष्ट अनुतोष अधिनियम, 1963 (1963 का 47) – धारा 16(ग) – प्रत्यर्थी (सं. 1) द्वारा अपीलार्थी-विक्रेता के पक्ष में कतिपय भूमि का विक्रय करने के लिए सहमत होते हुए विक्रय करार निष्पादित किया जाना – अग्रिम धन का संदाय किया जाना – प्रत्यर्थी द्वारा विक्रय विलेख निष्पादित न किया जाना – विक्रेता द्वारा अपने भाग का पालन करने के लिए तैयार और रजामंद होने के बारे में क्रेता को सूचित किया जाना – क्रेता द्वारा विक्रय विलेख निष्पादित न किए जाने पर विक्रेता द्वारा विनिर्दिष्ट पालन के लिए वाद फाइल किया जाना – विचारण न्यायालय द्वारा वाद डिक्री किया जाना – अपील में उच्च न्यायालय द्वारा विक्रेता के तैयार और रजामंद न होने और अतिशेष रकम का संदाय करने के लिए निधियां होने की बात को साबित करने के लिए कोई बैंक पासबुक आदि प्रस्तुत न करने के आधार पर विचारण न्यायालय के निर्णय को अपास्त किया जाना – संधार्यता – जहां विक्रेता को विक्रय करार के अपने भाग को पूरा करने के लिए तैयार और रजामंद होने की बात को साबित करने के लिए उसके पास साधन/निधियां होने की बात को दर्शित करने के लिए बैंक पासबुक आदि प्रस्तुत करने के लिए न तो क्रेता द्वारा कहा गया हो और न ही न्यायालय द्वारा ऐसा निदेश दिया गया हो, वहां विक्रेता द्वारा अपने भाग को पूरा करने के लिए तैयार और रजामंद न होने के बारे में उच्च न्यायालय द्वारा निकाले गए निष्कर्ष को कायम नहीं रखा जा सकता ।

इन अपीलों के तथ्य इस प्रकार हैं कि इस अपील में प्रत्यर्थी सं. 1-मूल प्रतिवादी सं. 1 ने प्रश्नगत भूमि का इस अपील में अपीलार्थी-मूल वादी के पक्ष में तारीख 13 मार्च, 2007 को इसका तारीख 31 जुलाई, 2007 या इससे पूर्व विक्रय करने के लिए सहमत होते हुए एक विक्रय करार निष्पादित किया । अग्रिम धन के रूप में तीन लाख रुपए संदत्त किए गए । प्रत्यर्थी सं. 1 द्वारा इसकी रसीद जारी की गई । उसके पश्चात्, चूंकि प्रत्यर्थी सं. 1-विक्रेता ने विक्रय विलेख का निष्पादन नहीं किया, इसलिए अपीलार्थी द्वारा प्रत्यर्थी (प्रत्यर्थियों) को अतिशेष विक्रय प्रतिफल प्राप्त करने और विक्रय विलेख निष्पादित करने के लिए कहते हुए एक विधिक सूचना जारी की गई । विक्रेता ने विक्रय करार निष्पादित करने की बात से इनकार करते हुए विधिक सूचना का उत्तर दिया । उसके पश्चात्, अपीलार्थी-क्रेता ने विनिर्दिष्ट पालन के लिए वाद फाइल किया । मूल प्रतिवादियों-विक्रेताओं ने अपना लिखित कथन फाइल किया और वाद का विरोध किया । प्रतिवादियों ने विक्रय करार निष्पादित करने की बात से इनकार किया । प्रतिवादियों का लिखित कथन में यह भी पक्षकथन था कि वादी संविदा के अपने भाग को पूरा करने के लिए तैयार नहीं था । इसलिए प्रतिवादियों ने वादी-विक्रेता की ओर से संविदा के अपने भाग को पूरा करने के लिए तैयार और रजामंद होने की बात से इनकार किया । दोनों पक्षकारों ने विचारण न्यायालय के समक्ष साक्ष्य प्रस्तुत किया । वादी ने संविदा के अपने भाग को पूरा करने के लिए तैयार और रजामंद होने के बारे में साक्षियों की परीक्षा कराकर साक्ष्य प्रस्तुत किया । अभिलेख पर यह लाया गया कि वादी नकदी के साथ विक्रेता के पास गया था किंतु विक्रेता ने इसे स्वीकार नहीं किया । उसके पश्चात्, विद्वान् विचारण न्यायालय द्वारा साक्ष्य का मूल्यांकन करने के पश्चात् विनिर्दिष्ट पालन के लिए वाद को डिक्री किया गया । विद्वान् विचारण न्यायालय ने यह भी अभिनिर्धारित किया कि वादी-क्रेता संविदा के अपने भाग को पूरा करने के लिए तैयार और रजामंद था । विद्वान् विचारण न्यायालय द्वारा पारित निर्णय और डिक्री के अनुसरण में क्रेता-मूल वादी द्वारा विद्वान् विचारण न्यायालय के समक्ष 9,74,000/- रुपए की रकम जमा कर दी गई । प्रत्यर्थियों-विक्रेताओं ने विद्वान् विचारण न्यायालय द्वारा पारित निर्णय और डिक्री

से व्यथित और असंतुष्ट होकर उच्च न्यायालय के समक्ष अपील फाइल की । उच्च न्यायालय द्वारा उक्त अपील मंजूर की गई और विद्वान् विचारण न्यायालय द्वारा पारित निर्णय और डिक्री को मुख्य रूप से इस आधार पर अपास्त कर दिया कि वादी संविदा के अपने भाग को पूरा करने के लिए तैयार और रजामंद नहीं था । अपीलार्थी द्वारा एक पुनरीक्षण आवेदन भी फाइल किया गया जिसे उच्च न्यायालय द्वारा खारिज कर दिया गया । उच्च न्यायालय के निर्णय (निर्णयों) से व्यथित होकर वादी द्वारा उच्चतम न्यायालय में अपीलें फाइल की गईं । उच्चतम न्यायालय अपीलों को मंजूर करते हुए,

अभिनिर्धारित – आरंभ में यह उल्लेख किया जाना आवश्यक है कि विद्वान् विचारण न्यायालय ने अभिलेख पर के साक्ष्य का मूल्यांकन करने के पश्चात् वादी की ओर से करार के अपने भाग को पूरा करने के लिए तैयार और रजामंद होने का विनिर्दिष्ट रूप से निष्कर्ष अभिलिखित किया था । वादी की ओर से तैयार और रजामंद होने की बात पर अभिलिखित किए गए निष्कर्ष अभिलेख पर के संपूर्ण साक्ष्य के मूल्यांकन के आधार पर निकाले गए थे । विधिक सूचना, जो तारीख 20 नवंबर, 2007 को जारी की गई थी, में वादी ने प्रतिवादी को अतिशेष रकम प्राप्त करने और विक्रय विलेख निष्पादित करने के लिए कहा था । विधिक सूचना के उत्तर में प्रतिवादी ने विक्रय करार के निष्पादन की बात से ही इनकार किया । उसके पश्चात्, वादी ने विनिर्दिष्ट पालन के लिए वाद फाइल किया जिसमें विनिर्दिष्ट रूप से यह प्रकथन किया गया कि वह तारीख 13 मार्च, 2007 के करार को पूरा करने के लिए तैयार और रजामंद है । वादी ने अपने अभिसाक्ष्य में विनिर्दिष्ट रूप से यह कथन किया था कि वह करार के अधीन अपनी बाध्यताओं को पूरा करने के लिए तैयार और रजामंद है । उसने यह भी कहा था कि वह माह जून, 2007 में और पुन: जुलाई, 2007 में अतिशेष विक्रय प्रतिफल के साथ प्रतिवादी के पास गया था । इस संबंध में कोई प्रतिपरीक्षा नहीं की गई है । वादी ने दो साक्षियों, अभि. सा. 2 और अभि. सा. 3, जो तारीख 13 मार्च, 2007 के विक्रय करार के अनुप्रमाणक थे, की भी परीक्षा कराई थी, जिन्होंने विनिर्दिष्ट रूप से यह कथन किया था कि

जुलाई, 2007 में वादी प्रतिवादियों के पास गया था और उन्हें नकद में अतिशेष विक्रय प्रतिफल स्वीकार करने के लिए कहा था, इस बारे में भी कोई प्रतिपरीक्षा नहीं की गई है । अग्रिम धन के रूप में तीन लाख रुपए प्राप्त करने की बात को दोनों निचले न्यायालयों द्वारा साबित होना अभिनिर्धारित किया गया है । डिक्री पारित होने की एक माह की अवधि के भीतर वादी ने विचारण न्यायालय के समक्ष अतिशेष विक्रय प्रतिफल अर्थात् 9,74,000/- रुपए जमा कर दिए थे । मामले के पूर्वोक्त तथ्यों और परिस्थितियों पर विचार करते हुए यह मत व्यक्त किया जाता है कि उच्च न्यायालय ने अपीलार्थी के तैयार और रजामंद होने की बात पर विचारण न्यायालय के निष्कर्षों को उलटते हुए डिक्री को उलटकर तात्विक रूप से गलती की है । उच्च न्यायालय द्वारा पारित आक्षेपित निर्णय और आदेश से यह प्रतीत होता है कि उच्च न्यायालय द्वारा दिया गया कारण यह है कि वादी ने यह साबित नहीं किया है कि अतिशेष प्रतिफल का संदाय करने के लिए उसके पास नकदी और/या रकम और/या पर्याप्त निधियां/साधन हैं क्योंकि कोई पासबुक और/या बैंक का लेखा प्रस्तुत नहीं किया गया था । (पैरा 6 और 6.1)

इसमें ऊपर वर्णित परिस्थितियों पर विचार करते हुए, इस न्यायालय की यह राय है कि उच्च न्यायालय ने अपीलार्थी के तैयार और रजामंद होने की बात पर निकाले गए निष्कर्षों को उलटते हुए माननीय विचारण न्यायालय द्वारा पारित निर्णय और डिक्री को अभिखंडित और अपास्त करके तात्विक रूप से गलती की है । इन परिस्थितियों में, उच्च न्यायालय द्वारा पारित आक्षेपित निर्णय (निर्णयों) और आदेश (आदेशों) को असंधार्य अभिनिर्धारित किया जाता है/किए जाते हैं और वे अभिखंडित और अपास्त किए जाने योग्य हैं । तथापि, साथ ही साथ, पूर्ण न्याय करने के लिए हमारी यह राय है कि यदि वादी को विक्रय प्रतिफल के मद्ये 10 लाख रुपए की अतिरिक्त राशि का संदाय करने के लिए निदेश दिया जाए, तो इससे न्याय के उद्देश्यों की पूर्ति हो जाएगी । उपरोक्त चर्चा को ध्यान में रखते हुए और ऊपर उल्लिखित कारणों से वर्तमान अपीलें सफल होती हैं । उच्च न्यायालय द्वारा पारित आक्षेपित निर्णय (निर्णयों) और आदेश (आदेशों) को तद्द्वारा अभिखंडित और अपास्त

किया जाता है । विद्वान् विचारण न्यायालय द्वारा तारीख 13 मार्च, 2007 के विक्रय करार के विनिर्दिष्ट पालन के लिए पारित निर्णय और डिक्री को तद्द्वारा प्रत्यावर्तित किया जाता है । तथापि, पूर्ण न्याय करने के लिए हम वादी को निदेश देते हैं कि प्रतिवादी सं. 1 को दस लाख रुपए की अतिरिक्त राशि का संदाय करने के लिए आज से 8 सप्ताह की अवधि के भीतर जमा की जाए और ऐसा संदाय करने पर प्रतिवादी सं. 1 को निदेश दिया जाता है कि उससे दो सप्ताह की अवधि के भीतर मूल वादी-अपीलार्थी के पक्ष में विक्रय विलेख निष्पादित किया जाए । प्रतिवादी सं. 1 को वादी द्वारा विद्वान् विचारण न्यायालय द्वारा पारित निर्णय और डिक्री के अनुसरण में तारीख 31 अक्तूबर, 2011 को जमा की गई रकम अर्थात् 9,74,000/- रुपए उस पर प्रोद्भूत ब्याज सहित व्यपहृत करने के लिए भी अनुज्ञात किया जाता है जो प्रतिवादी सं. 1 को खाते पर लिखे गए चैक द्वारा संदत्त की जाएगी । (पैरा 7 और 8)

निर्दिष्ट निर्णय

पैरा

[2022] 2022 एस. सी. सी. ऑनलाइन एस. सी. 840 :
यू. एन. कृष्णामूर्ति बनाम **ए. एम. कृष्णामूर्ति** ; 4.4

[2019] (2019) 6 एस. सी. सी. 233 :
बीमानेनी महा लक्ष्मी बनाम **गंगुमल्ला अप्पा राव** ; 3.6

[2011] (2011) 1 एस. सी. सी. 429 :
जे. पी. बिल्डर्स और एक अन्य बनाम
ए. रामदास और एक अन्य ; 4.4

[1988] (1988) 2 एस. सी. सी. 488 :
इंदिरा कौर और अन्य बनाम **शिव लाल कपूर** ; 3.6

[1967] [1967] 1 एस. सी. आर. 153 :
रामरती कुवर बनाम **द्वारिका प्रसाद सिंह** । 3.8

अपीली (सिविल) अधिकारिता : 2022 की सिविल अपील सं. 8962-8963.

2011 की नियमित प्रथम अपील सं. 5033 में तारीख 27 नवंबर, 2020 को और 2021 के पुनरीक्षण आवेदन सं. 200036 में तारीख 6 दिसंबर, 2021 को पारित कर्नाटक उच्च न्यायालय, कलबुरजी के निर्णय और आदेश के विरुद्ध अपील ।

अपीलार्थी की ओर से सर्वश्री के. परमेश्वर, निशांत पाटिल और आयुष पी. शाह

प्रत्यर्थियों की ओर से सर्वश्री शैलेश मडियाल, राजन परमार, मृगांक प्रभाकर, (सुश्री) साक्षी बंगा और अक्षय कुमार

न्यायालय का निर्णय न्यायमूर्ति एम. आर. शाह ने दिया ।

न्या. शाह– वादी ने वर्तमान अपीलें 2011 की नियमित प्रथम अपील (आरएफए) सं. 5033 और 2021 के पुनरीक्षण आवेदन (आरपी) सं. 200036 में कर्नाटक उच्च न्यायालय, कलबुरजी द्वारा क्रमश: तारीख 27 नवंबर, 2020 और 6 दिसंबर, 2021 को पारित आक्षेपित निर्णय (निर्णयों) और आदेश (आदेशों) से व्यथित और असंतुष्ट होकर फाइल की हैं, जिसके द्वारा उच्च न्यायालय ने इस अपील में प्रत्यर्थियों-मूल प्रतिवादियों द्वारा फाइल की गई उक्त अपील मंजूर की और विद्वान् विचारण न्यायालय द्वारा वाद को विनिर्दिष्ट पालन के लिए डिक्री करते हुए पारित निर्णय और डिक्री को अपास्त कर दिया ।

2. इन अपीलों के तथ्य संक्षेप में निम्नलिखित हैं :–

2.1 इस अपील में प्रत्यर्थी सं. 1-मूल प्रतिवादी सं. 1 ने प्रश्नगत भूमि का इस अपील में अपीलार्थी-मूल वादी के पक्ष में तारीख 13 मार्च, 2007 को इसका तारीख 31 जुलाई, 2007 या इससे पूर्व विक्रय करने के लिए सहमत होते हुए एक विक्रय करार निष्पादित किया । अग्रिम धन के रूप में तीन लाख रुपए संदत्त किए गए । प्रत्यर्थी सं. 1 द्वारा इसकी रसीद जारी की गई । उसके पश्चात्, चूंकि प्रत्यर्थी सं. 1-विक्रेता ने विक्रय विलेख का निष्पादन नहीं किया, इसलिए अपीलार्थी ने प्रत्यर्थी (प्रत्यर्थियों) को अतिशेष विक्रय प्रतिफल प्राप्त करने और विक्रय- विलेख निष्पादित करने के लिए कहते हुए तारीख 20 नवंबर, 2007 को एक

विधिक सूचना जारी की । विक्रेता ने विक्रय करार निष्पादित करने की बात से इनकार करते हुए तारीख 3 दिसंबर, 2007 के उत्तर द्वारा विधिक सूचना का उत्तर दिया । उसके पश्चात्, अपीलार्थी-क्रेता ने 2008 के मूल वाद सं. 17 द्वारा विनिर्दिष्ट पालन के लिए तारीख 14 फरवरी, 2008 को वाद फाइल किया । मूल प्रतिवादियों-विक्रेताओं ने अपना लिखित कथन फाइल किया और वाद का विरोध किया । प्रतिवादियों ने विक्रय करार निष्पादित करने की बात से इनकार किया । प्रतिवादियों का लिखित कथन में यह भी पक्षकथन था कि वादी संविदा के अपने भाग को पूरा करने के लिए तैयार नहीं था । इसलिए प्रतिवादियों ने वादी-विक्रेता की ओर से संविदा के अपने भाग को पूरा करने के लिए तैयार और रजामंद होने की बात से इनकार किया ।

2.2 दोनों पक्षकारों ने विचारण न्यायालय के समक्ष साक्ष्य प्रस्तुत किया । वादी ने संविदा के अपने भाग को पूरा करने के लिए तैयार और रजामंद होने के बारे में साक्षियों की परीक्षा कराकर साक्ष्य प्रस्तुत किया । अभिलेख पर यह लाया गया कि वादी नकदी के साथ विक्रेता के पास गया था किंतु विक्रेता ने इसे स्वीकार नहीं किया । उसके पश्चात्, विद्वान् विचारण न्यायालय ने साक्ष्य का मूल्यांकन करने के पश्चात् तारीख 30 सितंबर, 2011 के निर्णय और डिक्री द्वारा विनिर्दिष्ट पालन के लिए वाद को डिक्री किया । विद्वान् विचारण न्यायालय ने विक्रय करार निष्पादित करने के बारे में वादी-क्रेता के पक्षकथन पर विश्वास किया । विद्वान् विचारण न्यायालय ने विक्रेता को तीन लाख रुपए अग्रिम धन का संदाय करने के बारे में भी वादी के पक्षकथन पर विश्वास किया । विद्वान् विचारण न्यायालय ने यह भी अभिनिर्धारित किया कि वादी-क्रेता संविदा के अपने भाग को पूरा करने के लिए तैयार और रजामंद था । विद्वान् विचारण न्यायालय द्वारा पारित निर्णय और डिक्री के अनुसरण में क्रेता-मूल वादी ने विद्वान् विचारण न्यायालय के समक्ष 9,74,000/- रुपए की रकम जमा कर दी और बताया गया है कि वह अभी भी विचारण न्यायालय के पास पड़ी है ।

2.3 इस अपील में प्रत्यर्थियों-विक्रेताओं ने विद्वान् विचारण न्यायालय द्वारा पारित निर्णय और डिक्री से व्यथित और असंतुष्ट

होकर उच्च न्यायालय के समक्ष अपील फाइल की । उच्च न्यायालय ने आक्षेपित निर्णय और आदेश द्वारा उक्त अपील मंजूर की और विद्वान् विचारण न्यायालय द्वारा पारित निर्णय और डिक्री को मुख्य रूप से इस आधार पर अपास्त कर दिया कि वादी संविदा के अपने भाग को पूरा करने के लिए तैयार और रजामंद नहीं था । उच्च न्यायालय द्वारा पारित आक्षेपित निर्णय और आदेश वर्तमान अपीलों की विषयवस्तु है ।

2.4 अपीलार्थी ने एक पुनरीक्षण आवेदन भी फाइल किया जिसे उच्च न्यायालय द्वारा खारिज कर दिया गया और पुनरीक्षण आवेदन में पारित निर्णय भी इन अपीलों में से एक अपील की विषयवस्तु है ।

3. अपीलार्थी की ओर से हाजिर होने वाले विद्वान् काउंसेल श्री के. परमेश्वर ने जोरदार रूप से यह दलील दी कि मामले के तथ्यों और परिस्थितियों में माननीय उच्च न्यायालय ने विचारण न्यायालय के अपीलार्थी के तैयार और रजामंद होने के बारे में निकाले गए निष्कर्षों को उलटकर तात्विक रूप से गलती की है ।

3.1 यह दलील दी गई कि विद्वान् विचारण न्यायालय ने अभिलेख पर के संपूर्ण साक्ष्य का मूल्यांकन करने के पश्चात् अपीलार्थी के तैयार और रजामंद होने के बारे में उसके के पक्ष में निष्कर्ष अभिलिखित किए थे और उच्च न्यायालय द्वारा ऐसे निष्कर्षों में हस्तक्षेप नहीं किया जाना चाहिए था ।

3.2 यह भी दलील दी गई कि अपीलार्थी-क्रेता आरंभ से ही संविदा के अपने भाग को पूरा करने के लिए हर प्रकार से तैयार और रजामंद था । उन्होंने निवेदन किया कि तारीख 13 मार्च, 2007 के करार का पालन करने के लिए अपीलार्थी के तैयार और रजामंद होने के बारे में विवाद्यक पर विचार करते समय अभिलेख पर के साक्ष्य से प्रकट होने वाले निम्नलिखित पहलुओं पर विचार किया जाए :–

(i) अपीलार्थी ने वादपत्र में विनिर्दिष्ट रूप से प्रकथन किया था कि वह तारीख 13 मार्च, 2007 के करार का पालन करने के लिए तैयार और रजामंद है ;

(ii) तारीख 20 नवंबर, 2007 की वाद संबंधी सूचना में वादी ने

विनिर्दिष्ट रूप से प्रकथन किया था कि वह अतिशेष विक्रय प्रतिफल का संदाय करने के लिए तैयार और रजामंद है ;

(iii) वादी ने अपने साक्ष्य में यह कथन किया था कि वह करार का पालन करने के लिए तैयार और रजामंद है । उसने अपने अभिसाक्ष्य में यह भी कथन किया था कि वह माह जून, 2007 और पुन: जुलाई, 2007 में अतिशेष विक्रय प्रतिफल के साथ प्रतिवादी-क्रेता के पास गया था । इस संबंध में कोई प्रतिपरीक्षा नहीं की गई है ;

(iv) वादी ने विक्रय करार का अनुप्रमाणन करने वाले अभि. सा. 2 और अभि. सा. 3 की परीक्षा कराई थी, जिन्होंने विनिर्दिष्ट रूप से यह कथन किया था कि जून, 2007 में वादी प्रतिवादियों के पास गया था और उन्हें नकद में अतिशेष विक्रय प्रतिफल लेने के लिए कहा था । इस संबंध में कोई प्रतिपरीक्षा नहीं की गई है ।

(v) प्रति. सा. 1-प्रथम प्रतिवादी ने अपनी प्रतिपरीक्षा में यह स्वीकार किया था कि उसने करार निष्पादित किया था और यह कि वह उक्त संपत्ति की स्वामिनी है ;

(vi) उसने करार पर अपने हस्ताक्षर किए थे और उसने तीन लाख रुपए प्राप्त किए थे ;

(vii) अपीलार्थी ने तारीख 25 अक्तूबर, 2011 को विद्वान् विचारण न्यायालय के समक्ष 9,74,000/- रुपए का अतिशेष प्रतिफल जमा कर दिया था ।

3.3 अपीलार्थी-क्रेता की ओर से हाजिर होने वाले विद्वान् काउंसेल ने यह भी दलील दी कि इस प्रकार प्रतिवादी ने विद्वान् विचारण न्यायालय के समक्ष बेइमानीपूर्ण दृष्टिकोण अपनाया और करार निष्पादित करने की बात से इनकार किया । यह भी दलील दी गई कि लिखित कथन में प्रतिवादियों द्वारा अपनाया गया आधार यह था कि पक्षकारों के बीच कोई विक्रय करार निष्पादित नहीं हुआ था । यह दलील दी गई कि तथापि, प्रतिवादी सं. 1 ने बाद में स्वीकार किया था कि

उसके द्वारा तीन लाख रुपए प्राप्त किए गए थे और उस संबंध में तारीख 13 मार्च, 2007 को एक रसीद जारी की गई थी ।

3.4 यह भी दलील दी गई कि यहां तक कि विक्रेता-प्रतिवादी सं. 1 के अभिवाक् विरोधाभासी और बेइमानीपूर्ण थे । उसने आरंभ में करार के निष्पादन से इनकार किया, फिर इनकार किया कि यह एक विक्रय करार नहीं अपितु केवल एक उधार संव्यवहार के संबंध में करार था ।

3.5 अपीलार्थी की ओर से हाजिर होने वाले विद्वान् काउंसेल द्वारा अगली यह दलील दी गई कि विद्वान् विचारण न्यायालय तथा उच्च न्यायालय द्वारा इस बारे में अभिलिखित समवर्ती निष्कर्ष हैं कि प्रतिवादी सं. 1 द्वारा विक्रय करार का निष्पादन किया गया था और क्रेता द्वारा अग्रिम धन के रूप में तीन लाख रुपए संदत्त किए गए थे और यह कि विक्रय करार प्रतिभूति और/या किसी उधार संव्यवहार के संबंध में नहीं था अपितु यह स्पष्ट रूप से विक्रय के लिए था ।

3.6 अपीलार्थी की ओर से हाजिर होने वाले विद्वान् काउंसेल ने **इंदिरा कौर और अन्य** बनाम **शिव लाल कपूर**[1] वाले मामले में इस न्यायालय के विनिश्चय (पैरा 8, 9 और 10) और **बीमानेनी महा लक्ष्मी** बनाम **गंगुमल्ला अप्पा राव**[2] वाले मामले में इस न्यायालय के पश्चात्वर्ती विनिश्चय (पैरा 14) का क्रेता के तैयार और रजामंद होने के पहलू पर जोरदार रूप से अवलंब लिया । यह दलील दी गई कि **इंदिरा कौर** (उपर्युक्त) वाले मामले में यह अभिनिर्धारित किया गया था कि पासबुक, लेखा या अन्य दस्तावेजी साक्ष्य प्रस्तुत न करने के आधार पर वादी के विरुद्ध इस बारे में कोई प्रतिकूल निष्कर्ष नहीं निकाला जा सकता कि उसके पास अतिशेष प्रतिफल का संदाय करने के लिए साधन थे या नहीं ।

3.7 यह दलील दी गई कि **बीमानेनी महा लक्ष्मी** (उपर्युक्त) वाले मामले में इस न्यायालय द्वारा यह मत व्यक्त और अभिनिर्धारित किया गया था कि क्रेता की ओर से यह "अभिदर्शित" करने में असफलता कोई

---

[1] (1988) 2 एस. सी. सी. 488.

[2] (2019) 6 एस. सी. सी. 233.

मायने नहीं रखती है कि उसके पास उसके साक्ष्य की तारीख तक अतिशेष विक्रय प्रतिफल का संदाय करने के लिए पर्याप्त धन था ।

3.8 यह भी दलील दी गई कि **रामरती कुवर** बनाम **द्वारिका प्रसाद सिंह**[1] वाले मामले (पैरा 9) में इस न्यायालय द्वारा यह मत व्यक्त और अभिनिर्धारित किया गया था कि पक्षकार को लेखा पेश करने के लिए एक विनिर्दिष्ट निवेदन करने के अभाव में और बाद में ऐसा करने में असफलता से कोई प्रतिकूल निष्कर्ष नहीं निकाला जा सकता ।

3.9 उपरोक्त दलीलें देने और पूर्वोक्त विनिश्चयों का अवलंब लेकर यह दलील दी गई कि उच्च न्यायालय ने अपीलार्थी की ओर से तैयार और रजामंद होने के निष्कर्षों को उलटकर तात्विक रूप से गलती की है । अत: यह निवेदन किया कि वर्तमान अपीलों को मंजूर किया जाए और आक्षेपित निर्णयों को अपास्त किया जाए ।

4. विक्रेता-प्रत्यर्थियों-मूल प्रतिवादियों की ओर से हाजिर होने वाले विद्वान् काउंसेल श्री शैलेश मडियाल द्वारा वर्तमान अपीलों का जोरदार रूप से विरोध किया गया ।

4.1 प्रत्यर्थियों-विक्रेता की ओर से हाजिर होने वाले विद्वान् काउंसेल ने दलील दी कि उच्च न्यायालय द्वारा विद्वान् विचारण न्यायालय द्वारा पारित निर्णय और डिक्री को उलटते हुए और अपीलार्थी की ओर से तैयार और रजामंद होने के बारे में निष्कर्षों को उलटते हुए तर्कपूर्ण कारण दिए गए हैं ।

4.2 यह भी दलील दी गई कि अपीलार्थी-मूल वादी ने यह अभिदर्शित नहीं किया था और/या कोई साक्ष्य प्रस्तुत नहीं किया था कि उसके पास अतिशेष विक्रय प्रतिफल का संदाय करने के लिए पर्याप्त साधन/निधियां/नकदी है । यह दलील दी गई कि ऐसे साक्ष्य के अभाव में उच्च न्यायालय ने ठीक ही यह अभिनिर्धारित किया है कि क्रेता-मूल वादी तारीख 13 मार्च, 2007 के करार का पालन करने के लिए अपनी ओर से तैयार और रजामंद होने की बात को सिद्ध और साबित करने में असफल रहा है ।

---

[1] [1967] 1 एस. सी. आर. 153.

4.3 यह दलील दी गई कि लिखित कथन में ही प्रतिवादियों का यह विनिर्दिष्ट पक्षकथन था कि वादी करार के अपने भाग को पूरा करने के लिए तैयार और रजामंद नहीं था ।

4.4 प्रत्यर्थियों-मूल प्रतिवादियों की ओर से हाजिर होने वाले विद्वान् काउंसेल ने वर्तमान अपीलों को खारिज करने के अपने निवेदन के समर्थन में **जे. पी. बिल्डर्स और एक अन्य** बनाम **ए. रामदास और एक अन्य**[1] वाले मामले में इस न्यायालय के विनिश्चय तथा **यू. एन. कृष्णामूर्ति** बनाम **ए. एम. कृष्णामूर्ति**[2] वाले मामले में इस न्यायालय के हाल ही के विनिश्चय का अवलंब लिया ।

5. हमने संबंधित पक्षकारों की ओर से हाजिर होने वाले विद्वान् काउंसेलों को विस्तारपूर्वक सुना ।

6. आरंभ में यह उल्लेख किया जाना आवश्यक है कि विद्वान् विचारण न्यायालय ने अभिलेख पर के साक्ष्य का मूल्यांकन करने के पश्चात् वादी की ओर से करार के अपने भाग को पूरा करने के लिए तैयार और रजामंद होने का विनिर्दिष्ट रूप से निष्कर्ष अभिलिखित किया था । वादी की ओर से तैयार और रजामंद होने की बात पर अभिलिखित किए गए निष्कर्ष अभिलेख पर के संपूर्ण साक्ष्य के मूल्यांकन के आधार पर निकाले गए थे । विधिक सूचना, जो तारीख 20 नवंबर, 2007 को जारी की गई थी, में वादी ने प्रतिवादी को अतिशेष रकम प्राप्त करने और विक्रय विलेख निष्पादित करने के लिए कहा था । विधिक सूचना के उत्तर में प्रतिवादी ने विक्रय करार के निष्पादन की बात से ही इनकार किया । उसके पश्चात्, वादी ने विनिर्दिष्ट पालन के लिए वाद फाइल किया जिसमें विनिर्दिष्ट रूप से यह प्रकथन किया गया कि वह तारीख 13 मार्च, 2007 के करार को पूरा करने के लिए तैयार और रजामंद है । वादी ने अपने अभिसाक्ष्य में विनिर्दिष्ट रूप से यह कथन किया था कि वह करार के अधीन अपनी बाध्यताओं को पूरा करने के लिए तैयार और रजामंद है । उसने यह भी कहा था कि वह माह जून, 2007 में और

---

[1] (2011) 1 एस. सी. सी. 429.

[2] 2022 एस. सी. सी. ऑनलाइन एस. सी. 840.

पुन: जुलाई, 2007 में अतिशेष विक्रय प्रतिफल के साथ प्रतिवादी के पास गया था । इस संबंध में कोई प्रतिपरीक्षा नहीं की गई है । वादी ने दो साक्षियों, अभि. सा. 2 और अभि. सा. 3, जो तारीख 13 मार्च, 2007 के विक्रय करार के अनुप्रमाणक थे, की भी परीक्षा कराई थी, जिन्होंने विनिर्दिष्ट रूप से यह कथन किया था कि जुलाई, 2007 में वादी प्रतिवादियों के पास गया था और उन्हें नकद में अतिशेष विक्रय प्रतिफल स्वीकार करने के लिए कहा था, इस बारे में भी कोई प्रतिपरीक्षा नहीं की गई है । अग्रिम धन के रूप में तीन लाख रुपए प्राप्त करने की बात को दोनों निचले न्यायालयों द्वारा साबित होना अभिनिर्धारित किया गया है । डिक्री पारित होने की एक माह की अवधि के भीतर वादी ने विचारण न्यायालय के समक्ष अतिशेष विक्रय प्रतिफल अर्थात् 9,74,000/- रुपए जमा कर दिए थे । मामले के पूर्वोक्त तथ्यों और परिस्थितियों पर विचार करते हुए यह मत व्यक्त किया जाता है कि उच्च न्यायालय ने अपीलार्थी के तैयार और रजामंद होने की बात पर विचारण न्यायालय के निष्कर्षों को उलटते हुए डिक्री को उलटकर तात्विक रूप से गलती की है ।

6.1 उच्च न्यायालय द्वारा पारित आक्षेपित निर्णय और आदेश से यह प्रतीत होता है कि उच्च न्यायालय द्वारा दिया गया कारण यह है कि वादी ने यह साबित नहीं किया है कि अतिशेष प्रतिफल का संदाय करने के लिए उसके पास नकदी और/या रकम और/या पर्याप्त निधियां/साधन हैं क्योंकि कोई पासबुक और/या बैंक का लेखा प्रस्तुत नहीं किया गया था । **रामरती कुवर** (उपर्युक्त) वाले मामले में, जिस पर **इंदिरा कौर** (उपर्युक्त) वाले मामले में इस न्यायालय द्वारा विनिर्दिष्ट रूप से विचार किया गया है, निम्नलिखित मत व्यक्त और अभिनिर्धारित किया गया था :–

> "चतुर्थत:, यह आग्रह किया गया है कि प्रत्यर्थियों ने कोई लेखा पेश नहीं किया था यद्यपि उनका पक्षकथन यह था कि लेखे बनाए रखे गए थे और बसेखी सिंह उन विधवाओं को भरणपोषण भत्ता देता रहता था जो अलग से रह रही थीं । यह आग्रह किया

गया कि इस तथ्य से यह प्रतिकूल निष्कर्ष निकाला जाना चाहिए कि प्रत्यर्थियों द्वारा लेखे पेश नहीं किए गए थे और यह कि यदि लेखे प्रस्तुत किए जाते तो उनसे न केवल भरणपोषण भत्ते का संदाय अपितु विधवाओं को संपत्ति में उनके अधिकार के फलस्वरूप आय के आधे हिस्से का संदाय किया जाना दर्शित होता । यह सत्य है कि द्वारिका प्रसाद सिंह ने कहा था कि लेखाओं की देखरेख उसका पिता करता था । किंतु अपीलार्थी की ओर से न्यायालय को द्वारिका प्रसाद सिंह को लेखे प्रस्तुत करने का आदेश देने के लिए कहने का कोई प्रयत्न नहीं किया गया था । वादियों-प्रत्यर्थियों के विरुद्ध प्रतिकूल निष्कर्ष केवल तब निकाला जा सकता था यदि अपीलार्थी ने न्यायालय को उन्हें लेखे पेश करने के लिए कहा होता और वे यह स्वीकार करने के पश्चात् कि बसेखी सिंह लेखाओं की देखरेख करता था, उन्हें पेश करने में असफल रहते । किंतु न्यायालय से ऐसा कोई निवेदन नहीं किया गया था और इन परिस्थितियों में लेखे प्रस्तुत न करने से कोई प्रतिकूल निष्कर्ष नहीं निकाला जा सकता । किंतु यह आग्रह किया गया है कि फिर भी लेखे यह दर्शित करने के लिए सर्वोत्तम साक्ष्य होते कि विधवाओं को भरणपोषण दिया जा रहा था और वादियों द्वारा सर्वोत्तम साक्ष्य को विधारित किया गया था तथा इस आशय का केवल मौखिक साक्ष्य पेश किया गया था कि विधवाओं को बसेखी सिंह द्वारा भरणपोषण दिया जा रहा था । यदि ऐसा था तो वह लेखे भरणपोषण का संदाय करने का सर्वोत्तम साक्ष्य होते और उन्हें विधारित कर लिया गया था, इससे कोई भी यह कह सकता है कि यह मौखिक साक्ष्य स्वीकार्य नहीं हो सकता है कि विधवाओं को भरणपोषण दिया जा रहा था ; किंतु ऐसा कोई प्रतिकूल निष्कर्ष (अपीलार्थी द्वारा किसी निवेदन के अभाव में कि लेखे पेश किए जाएं) नहीं निकाला जा सकता कि यदि वे प्रस्तुत किए जाते तो उनसे यह दर्शित होता कि अपीलार्थी द्वारा दावाकृत हक के अनुसार आय को आधा-आधा विभाजित किया गया था ।

6.2 **इंदिरा कौर** (उपर्युक्त) वाले मामले में इस न्यायालय ने

रामरती कुवर (उपर्युक्त) वाले मामले में की गई मताभिव्यक्तियों पर विचार करने के पश्चात् तीनों निचले न्यायालयों द्वारा अभिलिखित किए गए निष्कर्षों को अपास्त कर दिया था जिनके द्वारा उस मामले में पासबुक पेश न करने और तद्द्वारा यह अभिनिर्धारित करते हुए कि वादी करार के अपने भाग को पूरा करने के लिए तैयार और रजामंद नहीं था, प्रत्यर्थी के विरुद्ध प्रतिकूल निष्कर्ष निकाला गया था । यह मत व्यक्त और अभिनिर्धारित किया गया कि जब तक वादी को या तो प्रतिवादी द्वारा पासबुक पेश करने के लिए नहीं कहा जाता है या न्यायालय के आदेशों द्वारा उसे ऐसा करने के लिए नहीं कहा जाता है, तब तक कोई प्रतिकूल निष्कर्ष नहीं निकाला जा सकता ।

6.3 पूर्वोक्त दो मामलों में इस न्यायालय द्वारा अधिकथित की गई विधि को प्रस्तुत मामले के तथ्यों पर लागू करते हुए, उच्च न्यायालय द्वारा कोई प्रतिकूल निष्कर्ष नहीं निकाला जा सकता था । उच्च न्यायालय ने अपीलार्थी के तैयार और रजामंद होने की बात पर विद्वान् विचारण न्यायालय द्वारा अभिलिखित किए गए निष्कर्षों को उलटकर गंभीर गलती की है ।

7. इसमें ऊपर वर्णित परिस्थितियों पर विचार करते हुए, हमारी यह राय है कि उच्च न्यायालय ने अपीलार्थी के तैयार और रजामंद होने की बात पर निकाले गए निष्कर्षों को उलटते हुए माननीय विचारण न्यायालय द्वारा पारित निर्णय और डिक्री को अभिखंडित और अपास्त करके तात्विक रूप से गलती की है । इन परिस्थितियों में, उच्च न्यायालय द्वारा पारित आक्षेपित निर्णय (निर्णयों) और आदेश (आदेशों) को असंधार्य अभिनिर्धारित किया जाता है/किए जाते हैं और वे अभिखंडित और अपास्त किए जाने योग्य हैं । तथापि, साथ ही साथ, पूर्ण न्याय करने के लिए हमारी यह राय है कि यदि वादी को विक्रय प्रतिफल के मद्दे 10 लाख रुपए की अतिरिक्त राशि का संदाय करने के लिए निदेश दिया जाए, तो इससे न्याय के उद्देश्यों की पूर्ति हो जाएगी ।

8. उपरोक्त चर्चा को ध्यान में रखते हुए और ऊपर उल्लिखित कारणों से वर्तमान अपीलें सफल होती हैं । उच्च न्यायालय द्वारा पारित

आक्षेपित निर्णय (निर्णयों) और आदेश (आदेशों) को तद्द्वारा अभिखंडित और अपास्त किया जाता है । विद्वान् विचारण न्यायालय द्वारा तारीख 13 मार्च, 2007 के विक्रय करार के विनिर्दिष्ट पालन के लिए पारित निर्णय और डिक्री को तद्द्वारा प्रत्यावर्तित किया जाता है । तथापि, पूर्ण न्याय करने के लिए हम वादी को निदेश देते हैं कि प्रतिवादी सं. 1 को दस लाख रुपए की अतिरिक्त राशि का संदाय करने के लिए आज से 8 सप्ताह की अवधि के भीतर जमा की जाए और ऐसा संदाय करने पर प्रतिवादी सं. 1 को निदेश दिया जाता है कि उससे दो सप्ताह की अवधि के भीतर मूल वादी-अपीलार्थी के पक्ष में विक्रय विलेख निष्पादित किया जाए । प्रतिवादी सं. 1 को वादी द्वारा विद्वान् विचारण न्यायालय द्वारा पारित निर्णय और डिक्री के अनुसरण में तारीख 31 अक्तूबर, 2011 को जमा की गई रकम अर्थात् 9,74,000/- रुपए उस पर प्रोद्भूत ब्याज सहित व्यपहृत करने के लिए भी अनुज्ञात किया जाता है जो प्रतिवादी सं. 1 को खाते पर लिखे गए चैक द्वारा संदत्त की जाएगी । तद्नुसार, वर्तमान अपीलें उपरोक्त अतिरिक्त निदेशों के साथ मंजूर की जाती हैं । खर्चे के लिए कोई आदेश नहीं किया जाता है ।

अपीलें मंजूर की गईं ।

जस.

[2023] 1 उम. नि. प. 175

मोहिन्द्र पाल और अन्य

बनाम

जम्मू और कश्मीर राज्य

[2010 की दांडिक अपील सं. 1863]

12 जनवरी, 2023

न्यायमूर्ति बी. आर. गवई और न्यायमूर्ति एम. एम. सुंदरेश

जम्मू और कश्मीर राज्य रणबीर दंड संहिता, 1989 (1989 का 12) – धारा 300 अपवाद-1, धारा 302 और धारा 304, भाग 1 – हत्या – अभियुक्तों द्वारा अभिकथित रूप से मृतकों को अपने मकान में परिरुद्ध किया जाना और उन पर हमला करके क्षतियां कारित किया जाना – क्षतियों के कारण उनकी मृत्यु हो जाना – विचारण न्यायालय द्वारा अपीलार्थियों सहित अन्य अभियुक्तों को दोषसिद्ध किया जाना और हत्या के अपराध के लिए आजीवन कारावास का दंडादेश दिया जाना – उच्च न्यायालय द्वारा पुष्टि किया जाना – अपील – संधार्यता – दोनों मृतक व्यक्ति किन परिस्थितियों में अभियुक्तों के मकान पर गए थे इस बारे में मृतकों में से एक मृतक के मृत्युकालिक कथन और अभियोजन साक्षियों के साक्ष्य में विरोधाभास होने, घटना में अभियुक्त सं. 1 को भी पहुंची क्षतियों को अभियोजन पक्ष द्वारा स्पष्ट नहीं किए जाने और मृतकों द्वारा लाठी से प्रहार करके अभियुक्त सं. 1 को क्षतियां कारित किए जाने के उसके विनिर्दिष्ट पक्षकथन को देखते हुए इस संभावना से इनकार नहीं किया जा सकता कि मृतकों द्वारा अभियुक्त सं. 1 पर लाठी से प्रहार करने पर अभियुक्तों द्वारा क्रोध में आत्मसंयम की शक्ति से वंचित होकर तथा गंभीर और अचानक प्रकोपन के कारण मृतकों पर किए गए हमले के परिणामस्वरूप उनकी मृत्यु हुई थी, इसलिए अभियोजन पक्ष द्वारा अभियुक्तों के विरुद्ध धारा 302 के अधीन युक्तियुक्त संदेह के परे मामला सिद्ध नहीं किए जाने पर उनकी दोषसिद्धि और अधिरोपित दंडादेश को धारा 304, भाग 1 के अधीन

संपरिवर्तित करना न्यायोचित होगा ।

वे तथ्य जिनसे वर्तमान अपील उद्भूत हुई है, इस प्रकार हैं कि पुलिस थाना, कठुआ को तारीख 16 मई, 1990 को लगभग 12.00 बजे दोपहर में यह विश्वसनीय सूचना प्राप्त हुई कि अभियुक्त सं. 1 लाल चंद और उसके पुत्र दो युवकों पर हमला कर रहे हैं, जिनको उनके द्वारा जगतपुर, तहसील कठुआ में स्थित अपने मकान में बलपूर्वक निरुद्ध किया गया है । पुलिस हैड कांस्टेबल और अन्य कांस्टेबल अभियुक्त-अपीलार्थियों के मकान पर पहुंचे जहां उन्होंने पाया कि मंजीत कुमार और जसविन्दर गंभीर रूप से क्षतिग्रस्त थे और एक कमरे में बेहोश पड़े हुए थे । उन्हें चिकित्सीय उपचार देने के लिए तुरंत जिला अस्पताल, कठुआ ले जाया गया । उप निरीक्षक बसंत सिंह अस्पताल गया और जसविन्दर का कथन डा. रेणु जामवाल की मौजूदगी में, जिसने उसे कथन करने के लिए उपयुक्त घोषित किया था, अभिलिखित किया । जसविन्दर के कथन के आधार पर पुलिस थाने में जम्मू और कश्मीर राज्य रणबीर दंड संहिता की धारा 307/382/342/148/149 के अधीन 1990 की प्रथम इत्तिला रिपोर्ट सं. 90 रजिस्ट्रीकृत की गई । बाद में, मंजीत कुमार और जसविन्दर दोनों की उनको पहुंचीं क्षतियों के कारण मृत्यु हो गई । उसके पश्चात् रणबीर दंड संहिता की धारा 302 जोड़ी गई । विचारण की समाप्ति पर, सेशन न्यायाधीश ने अभियुक्त सं. 5 ओमप्रकाश और अभियुक्त सं. 6 किशन चंद को दोषमुक्त कर दिया और अभियुक्त सं. 1 से 4 और 7 को रणबीर दंड संहिता की धारा 302, 148 और 149 के अधीन दोषसिद्ध किया और दंडादिष्ट किया । अपीलार्थी-अभियुक्तों द्वारा इससे व्यथित होकर उच्च न्यायालय के समक्ष अपील फाइल की गई । अपील के लंबित रहने के दौरान अभियुक्त सं. 1 लाल चंद की मृत्यु हो गई । अभियुक्त सं. 2 ब्यास राज फरार था और अजमानतीय वारंट जारी करने के पश्चात् भी उसकी उपस्थिति प्राप्त नहीं की जा सकी थी । उच्च न्यायालय ने अपीलार्थियों द्वारा फाइल की गई अपील खारिज कर दी और सेशन न्यायाधीश द्वारा की गई उनकी दोषसिद्धि को कायम रखा और उन्हें दिए गए दंडादेश की पुष्टि की । इससे व्यथित होकर अभियुक्त सं. 3 मोहिन्द्र पाल,

अभियुक्त सं. 7 मदन लाल और अभियुक्त सं. 4 बसंत कुमार द्वारा उच्चतम न्यायालय में अपील फाइल की गई । उच्चतम न्यायालय द्वारा अपील को भागत: मंजूर करते हुए,

अभिनिर्धारित – अभिलेख पर प्रस्तुत की गई सामग्री, विशिष्ट रूप से मरणोत्तर परीक्षा रिपोर्ट, से यह विवादग्रस्त नहीं किया जा सकता है कि मृतकों की मृत्यु मानव वध थी । यह उल्लेखनीय है कि घटना का स्थल अभियुक्त व्यक्तियों का मकान है । मृतक-जसविन्दर और मंजीत तथा अभि. सा. 1 प्रवीण कुमार क्यों अभियुक्त व्यक्तियों के मकान पर गए थे, इस बारे में उनके वृत्तांत भिन्न-भिन्न हैं । अभि. सा. 1 प्रवीण कुमार के वृत्तांत के अनुसार, वह वहां मजदूरों की तलाश में गया था और उसके पश्चात् उसे अभियुक्त व्यक्तियों द्वारा पकड़ लिया था चूंकि 50/- रुपए की उधार की रकम को लेकर एक विवाद था । मृतक जसविन्दर के मृत्युकालिक कथन के अनुसार, मृतक जसविन्दर और मंजीत वहां घास (चारा) लेने गए थे । जबकि अभि. सा. 2 हरदेव सिंह के साक्ष्य के अनुसार, जब वह बीड़ी खरीदने के लिए जगतपुर जा रहा था, तब वह अभि. सा. 1 प्रवीण कुमार से मिला और वे दोनों अभियुक्त व्यक्तियों की गली में गए । उसने यह स्वीकार किया कि बीड़ी की दुकान उसी गली में नहीं थी । उसके अनुसार, अभियुक्त व्यक्तियों द्वारा अभि. सा. 1 प्रवीण कुमार पर हमला किए जाने के पश्चात् वह वहां से चला गया और रास्ते में उसे मृतक जसविन्दर और मंजीत मिले और उसने उन्हें अभि. सा. 1 प्रवीण कुमार पर हमला किए जाने और बांधे जाने की घटना के बारे में सूचित किया । उसके पश्चात्, वे तीनों उस गली में गए जहां अभियुक्त व्यक्तियों का मकान था । वहां अभियुक्त व्यक्तियों ने जसविन्दर और मंजीत पर हमला किया और वह वहां से चला गया । यह भी उल्लेखनीय है कि अभियुक्त सं. 1 लाल चंद (जिसकी मृत्यु हो गई है) को भी उक्त घटना में क्षतियां पहुंची थीं । अभियोजन पक्ष इसको स्पष्ट करने में असफल रहा है । अन्वेषण अधिकारी ने यह स्वीकार किया है कि उसने इस बारे में अन्वेषण नहीं किया था कि अभियुक्त सं. 1 लाल चंद (जिसकी मृत्यु हो गई है) को कैसे क्षतियां पहुंची थीं । अभियुक्त सं. 1 लाल चंद (जिसकी मृत्यु हो

गई है) द्वारा ली गई विनिर्दिष्ट प्रतिरक्षा यह है कि जब वह अपने कमरे में बिस्तर पर लेटा हुआ था, दो व्यक्ति उसके कमरे में आए और उनमें से एक ने उसके सिर पर लाठी से प्रहार किया, जिसके परिणामस्वरूप उसे रक्तस्राव होने लगा और अस्थिभंग के कारण बेहोश हो गया । अभिलेख पर प्रस्तुत की गई सामग्री से यह प्रतीत होता है कि अभियोजन का पक्षकथन निष्कलंक नहीं है और घटना की उत्पत्ति को छिपाने का प्रयत्न किया है । मृतक जसविन्दर और मंजीत अभियुक्त व्यक्तियों के मकान पर किन परिस्थितियों में गए थे, इस बारे में मृत्युकालिक कथन तथा अभि. सा. 1 प्रवीण कुमार और अभि. सा. 2 हरदेव सिंह के साक्ष्य में विरोधाभास हैं । अभियोजन पक्ष अभियुक्त सं. 1 लाल चंद (जिसकी मृत्यु हो गई है) को पहुंची क्षति को स्पष्ट करने में असफल रहा है । अभियुक्त व्यक्तियों द्वारा एक सुझाव यह भी दिया गया था कि अभियुक्तों की मोहन लाल और केवल कृष्ण के साथ दुश्मनी थी और मृतकों तथा अभि. सा. 1 प्रवीण कुमार और अभि. सा. 2 हरदेव सिंह को उनके द्वारा अभियुक्त सं. 1 लाल चंद (जिसकी मृत्यु हो गई है) पर हमला करने के लिए भेजा गया था । निस्संदेह इस बात से इनकार किया गया है । जैसी कि इसमें ऊपर पहले ही चर्चा की गई है, घटना का स्थल अभियुक्त सं. 1 लाल चंद (जिसकी मृत्यु हो गई है) का मकान है । शेष 6 अभियुक्तों में से 5 उसके पुत्र हैं । इस बारे में तात्विक विरोधाभास हैं कि कैसे और किन परिस्थितियों में मृतक जसविन्दर और मंजीत अपीलार्थियों के मकान पर गए थे । मृत्युकालिक कथन में दिया गया वृत्तांत तथा अभि. सा. 1 प्रवीण कुमार और अभि. सा. 2 हरदेव सिंह के साक्ष्य में दिया गया वृत्तांत पूर्णत: भिन्न हैं । अभियोजन पक्ष अभियुक्त सं. 1 लाल चंद (जिसकी मृत्यु हो गई है) को पहुंची क्षतियों को स्पष्ट करने में असफल रहा है । अभियुक्त सं. 1 लाल चंद (जिसकी मृत्यु हो गई है) का यह विनिर्दिष्ट पक्षकथन है कि दो व्यक्ति उसके मकान पर आए थे और उन्होंने एक लाठी से उस पर हमला किया था । इस संभाव्यता से इनकार नहीं किया जा सकता कि अभियुक्त व्यक्तियों ने अभियुक्त सं. 1 लाल चंद (जिसकी मृत्यु हो गई है) पर हमला करने से क्रोधित होकर गंभीर और अचानक प्रकोपन के कारण आत्मसंयम से वंचित होकर मृतक-जसविन्दर और मंजीत पर

आक्रमण किया जिसके परिणामस्वरूप उनकी मृत्यु हो गई । इस न्यायालय का यह निष्कर्ष है कि अपीलार्थी रणबीर दंड संहिता की धारा 300 के अपवाद-1 को दृष्टिगत करते हुए संदेह के फायदे के हकदार हैं । इसलिए इस न्यायालय का सुविचारित मत है कि अभियोजन पक्ष रणबीर दंड संहिता की धारा 302 के अधीन मामले को युक्तियुक्त संदेह के परे साबित करने में असफल रहा है । अपीलार्थियों पर रणबीर दंड संहिता की धारा 302 के अधीन अधिरोपित दोषसिद्धि और दंडादेश को रणबीर दंड संहिता की धारा 304 के भाग-1 के अधीन संपरिवर्तित किया जाता है । अपीलार्थियों ने पहले ही लगभग 10 वर्ष का दंडादेश भुगत लिया है, इसलिए इस न्यायालय का यह निष्कर्ष है कि पहले ही भुगत लिए गए दंडादेश से प्रयोजन की पूर्ति हो जाएगी । अपीलार्थियों के जमानत बंधपत्रों को उन्मोचित किया जाता है । (पैरा 10, 16, 17, 18, 20 और 21)

अपीली (दांडिक) अधिकारिता : 2010 की दांडिक अपील सं. 1863.

1991 की दांडिक अपील सं. 9 में जम्मू और कश्मीर राज्य उच्च न्यायालय की खंड न्यायपीठ द्वारा तारीख 5 जून, 2009 को पारित निर्णय और आदेश के विरुद्ध अपील ।

अपीलार्थियों की ओर से सर्वश्री त्रिपुरारी रे, बी. एस. बिल्लोवरिया, दिनेश कुमार गर्ग, धनंजय गर्ग और गुरमीत सिंह

प्रत्यर्थी की ओर से सर्वश्री शैलेश मडियाल, वैभव सभरवाल और अक्षय कुमार

न्यायालय का निर्णय न्यायमूर्ति बी. आर. गवई ने दिया ।

न्या. गवई – वर्तमान अपील में 1991 की दांडिक अपील सं. 9 में जम्मू स्थित जम्मू और कश्मीर राज्य उच्च न्यायालय की खंड न्यायपीठ (संक्षेप में 'उच्च न्यायालय') द्वारा अपीलार्थी-अभियुक्तों द्वारा फाइल की गई अपील को खारिज करते हुए और 1990 के विचारण मामला सं. 89 में विद्वान् सेशन न्यायाधीश, कठुआ (संक्षेप में 'सेशन न्यायाधीश') द्वारा तारीख 23 मार्च, 1991 को अधिनिर्णीत दोषसिद्धि और दंडादेश के

आदेश की पुष्टि करते हुए तारीख 5 जून, 2009 को पारित किए गए निर्णय और आदेश को चुनौती दी गई है ।

2. वे तथ्य जिनसे वर्तमान अपील उद्भूत हुई है, निम्नलिखित हैं –

i. तारीख 16 मई, 1990 को पुलिस थाना, कठुआ (संक्षेप में 'पुलिस थाना') को लगभग 12.00 बजे दोपहर में यह विश्वसनीय सूचना प्राप्त हुई कि अभियुक्त सं. 1 लाल चंद (जिसकी मृत्यु हो गई है) और उसके पुत्र दो युवकों पर हमला कर रहे हैं, जिनको उनके द्वारा जगतपुर, तहसील कठुआ में स्थित अपने मकान में बलपूर्वक निरुद्ध किया गया है । इस संबंध में दैनिक रोजनामचे में प्रविष्टि की गई । उक्त सूचना प्राप्त होने पर हैड कांस्टेबल राज मल, कांस्टेबल चमन लाल और तीर्थ सिंह के साथ अभियुक्त-अपीलार्थियों के मकान पर पहुंचा, उन्होंने पाया कि मंजीत कुमार और जसविन्दर गंभीर रूप से क्षतिग्रस्त थे और एक कमरे में बेहोश पड़े हुए पाए । उन्हें चिकित्सीय उपचार देने के लिए तुरंत जिला अस्पताल, कठुआ ले जाया गया । उप निरीक्षक बसंत सिंह अस्पताल गया और जसविन्दर का कथन (प्रदर्श पी. डब्ल्यू. बी. एस.) डा. रेणु जामवाल की मौजूदगी में, जिसने उसे कथन करने के लिए उपयुक्त घोषित किया था, अभिलिखित किया । जसविन्दर के कथन (पी. डब्ल्यू. बी. एस.) के आधार पर पुलिस थाने में जम्मू और कश्मीर राज्य रणबीर दंड संहिता की धारा 307/382/342/148/149 के अधीन 1990 की प्रथम इत्तिला रिपोर्ट सं. 90 रजिस्ट्रीकृत की गई । बाद में, मंजीत कुमार और जसविन्दर दोनों की उनको पहुंचीं क्षतियों के कारण मृत्यु हो गई । उसके पश्चात् रणबीर दंड संहिता की धारा 302 जोड़ी गई ।

ii. मृतक जसविन्दर के कथन (प्रदर्श पी. डब्ल्यू. बी. एस.) में यह कहा गया है कि वह और मंजीत कुमार चारा लेने के लिए गांव जगतपुर गए थे । जब वे अभियुक्त पक्ष के मकान के साथ लगी गली में चल रहे थे, तब अभियुक्त लाल चंद,

ब्यास, संत कुमार, रोशन, मदन लाल ने अभियुक्त सं. 1 लाल चंद (जिसकी मृत्यु हो गई है) के अन्य पुत्रों के साथ उन्हें मकान में खींच लिया और उन पर लोहे की छड़ों (सरिया), दरांत और लाठियों से हमला किया । उन्हें पानी दिया गया जो पीने योग्य नहीं था/स्वादहीन था । इसके अतिरिक्त, अभियुक्त-संत कुमार ने मृतक की जेब से 300/- रुपए चुरा लिए ।

iii. संक्षेप में, अभियोजन का पक्षकथन यह है कि अभियुक्त सं. 2 ब्यास राज ने मृतक-जसविन्दर के भाई अर्थात् अभि. सा. 1 प्रवीण कुमार से 50/- रुपए की राशि उधार ली थी और अभि. सा. 1 प्रवीण कुमार ने घटना घटने से 3-4 दिन पूर्व इस राशि की मांग की थी । घटना के दिन अभि. सा. 1 प्रवीण कुमार मजदूरों को लेने के लिए गांव गया था । जब वह अपीलार्थियों के मकान के निकट था, तब उसे मकान के अंदर खींच लिया गया और हमला किया गया । उसके पश्चात्, उन्होंने उसे भूसे के कमरे में बंद कर दिया और मंजीत कुमार और जसविन्दर पर हमला किया । अभि. सा. 1 प्रवीण कुमार घटनास्थल से बच कर निकलने में सफल रहा । अभि. सा. 1 प्रवीण कुमार के साथ अभि. सा. 2 हरदेव सिंह भी था और उपरोक्त घटना घटने के बारे में अभि. सा. 3 छज्जु राज और कृष्ण चंद लंबरदार को बताया था ।

iv. अन्वेषण अधिकारी ने अंतिम रिपोर्ट प्रस्तुत की जिसमें यह कहा गया कि ऊपर उल्लिखित घटना अपीलार्थियों द्वारा अभि. सा. 1 प्रवीण कुमार पर उस समय हमला और सदोष परिरोध करने से पूर्व हुई थी जब वह मजदूरों की तलाश में आया था ।

v. अभियुक्त सं. 1 लाल चंद (मृत), अभियुक्त सं. 2 ब्यास राज, अभियुक्त सं. 3 मोहिन्द्र पाल **उर्फ** रोशन, अभियुक्त सं. 4 बसंत कुमार, अभियुक्त सं. 5 ओमप्रकाश **उर्फ** डाक्टर, अभियुक्त सं. 6 किशन चंद और अभियुक्त सं. 7 मदन लाल

का विचारण किया गया । अभियुक्त सं. 2 से 6 अभियुक्त सं. 1 लाल चंद (मृत) के पुत्र हैं । सेशन न्यायाधीश द्वारा तारीख 16 अगस्त, 1990 को रणबीर दंड संहिता की धारा 302, 148 और 149 के अधीन दंडनीय अपराधों के लिए आरोप विरचित किए गए ।

vi. अपीलार्थियों ने दोषी न होने का अभिवाक् किया और विचारण किए जाने का दावा किया । अभियोजन पक्ष ने अभियुक्त-अपीलार्थियों की दोषिता को सिद्ध करने के लिए कुल मिलाकर 19 साक्षियों की परीक्षा की । अपीलार्थियों की प्रतिरक्षा यह थी कि उन्होंने प्राइवेट प्रतिरक्षा के अधिकार का प्रयोग किया था क्योंकि अभियुक्त सं. 1 लाल चंद (जिसकी मृत्यु हो गई है) पर दोनों मृतकों द्वारा हमला किया गया था जो भाड़े पर लाए गए थे चूंकि पक्षकारों के बीच मुकदमा लंबित था । विचारण की समाप्ति पर, सेशन न्यायाधीश ने अभियुक्त सं. 5 ओमप्रकाश और अभियुक्त सं. 6 किशन चंद को दोषमुक्त कर दिया और अभियुक्त सं. 1 से 4 और 7 को रणबीर दंड संहिता की धारा 302, 148 और 149 के अधीन दोषसिद्ध किया और प्रत्येक को 500/- रुपए के जुर्माने सहित आजीवन कारावास और जुर्माने के संदाय में व्यतिक्रम करने की दशा में तीन माह का साधारण कारावास भुगतने का दंडादेश दिया ।

vii. अपीलार्थी-अभियुक्तों ने इससे व्यथित होकर उच्च न्यायालय के समक्ष अपील फाइल की । अपील के लंबित रहने के दौरान अभियुक्त सं. 1 लाल चंद की मृत्यु हो गई । अभियुक्त सं. 2 ब्यास राज फरार था और अजमानतीय वारंट जारी करने के पश्चात् भी उसकी उपस्थिति प्राप्त नहीं की जा सकी थी । उच्च न्यायालय ने तारीख 5 जून, 2009 को आक्षेपित निर्णय द्वारा अपीलार्थियों द्वारा फाइल की गई अपील खारिज कर दी और सेशन न्यायाधीश द्वारा की गई उनकी दोषसिद्धि को कायम रखा और उन्हें दिए गए दंडादेश की पुष्टि की ।

3. इससे व्यथित होकर अभियुक्त सं. 3 मोहिन्द्र पाल, अभियुक्त

सं. 7 मदन लाल और अभियुक्त सं. 4 बसंत कुमार द्वारा यह अपील फाइल की गई है ।

4. हमने अपीलार्थी-अभियुक्तों की ओर से हाजिर होने वाले विद्वान् काउंसेल श्री त्रिपुरारी रे और प्रत्यर्थी-जम्मू और कश्मीर राज्य की ओर से हाजिर होने वाले विद्वान् काउंसेल श्री शैलेश मडियाल को सुना ।

5. श्री त्रिपुरारी रे ने दलील दी कि उच्च न्यायालय और सेशन न्यायाधीश ने अपीलार्थी-अभियुक्तों को दोषसिद्ध करके गंभीर गलती की है । श्री रे ने दलील दी कि मृतक-मंजीत कुमार और जसविन्दर ही थे जिन्होंने अपीलार्थियों के मकान में गृह-अतिचार किया था और अभियुक्त सं. 1 लाल चंद (मृत) पर हमला किया था । उसके पश्चात्, अपीलार्थियों ने अपने प्राइवेट प्रतिरक्षा के अधिकार का प्रयोग किया और मृतकों पर हमला किया । इसके अतिरिक्त, अधिकांश क्षतियां जो मृतकों को कारित हुई थीं, उनकी टांगों पर थीं और गंभीर अपहानि कारित करने के आशय के साथ कारित नहीं की गई थी ।

6. श्री रे ने यह भी दलील दी कि मृत्युकालिक कथन अर्थात् मृतक जसविन्दर के कथन से यह प्रकट होता है कि डा. रेणु जामवाल ने यह कथन किया था कि रोगी सूजन के कारण कथन पर हस्ताक्षर करने की हालत में नहीं था । उक्त कथन में रोगी की मानसिक और शारीरिक हालत के संबंध में कोई विवरण नहीं है कि क्या वह स्वस्थ चित्त और होश में है । इसके अतिरिक्त, डा. रेणु जामवाल ने यह स्वीकार किया था कि रोगी 'न्यूनतम होश में था और पूरी तरह से जागरुक नहीं था' ।

7. श्री रे ने यह दलील दी कि अभि. सा. 1 प्रवीण कुमार और अभि. सा. 3 छज्जु राम के साक्ष्य में मृत्युकालिक कथन के बारे में कई बिंदुओं पर विरोधाभास है । मृत्युकालिक कथन में यह उल्लेख नहीं है कि अभि. सा. 1 प्रवीण कुमार पर हमला किया गया था और अपीलार्थियों के मकान में परिरुद्ध कर दिया गया था, इसकी बजाय इसमें यह उल्लेख है कि दोनों मृतक क्यों अपीलार्थियों के मकान पर गए थे और वे अपना काम कर रहे थे तथा अपीलार्थियों द्वारा हमला किया गया था ।

8. प्रत्यर्थी-राज्य की ओर से हाजिर होने वाले श्री शैलेश मडियाल ने दलील दी कि सेशन न्यायाधीश और उच्च न्यायालय ने समवर्ती रूप से यह अभिनिर्धारित किया है कि मृत्युकालिक कथन एक सारभूत साक्ष्य है । इसे अभियोजन साक्षी उप निरीक्षक बसंत सिंह और डा. रेणु जामवाल द्वारा अनुप्रमाणित किया गया है । अभि. सा. 1 प्रवीण कुमार और अभि. सा. 2 हरदेव सिंह के साक्ष्य द्वारा भी इसकी संपुष्टि होती है । इस प्रकार, इसे आसानी से अस्वीकार नहीं किया जा सकता ।

9. श्री मडियाल ने यह भी दलील दी कि प्राइवेट प्रतिरक्षा के अधिकार का प्रयोग युक्तियुक्त रीति में किया जाना चाहिए । क्षतियों की प्रकृति से कई सारे अस्थिभंग होना प्रकट होते हैं और प्रयुक्त किए गए आयुधों से उपदर्शित होता है कि अपीलार्थियों ने मृतकों पर हमला उनकी हत्या करने के आशय से किया था ।

10. हमने अभिलेख पर प्रस्तुत की गई सामग्री का परिशीलन किया है । अभिलेख पर प्रस्तुत की गई सामग्री, विशिष्ट रूप से मरणोत्तर परीक्षा रिपोर्ट, से यह विवादग्रस्त नहीं किया जा सकता है कि मृतकों की मृत्यु मानव वध थी ।

11. जहां तक घटना का संबंध है, अभियोजन पक्ष ने मुख्य रूप से मृतक-जसविन्दर के मृत्युकालिक कथन तथा मृतक-जसविन्दर के भाई अभि. सा. 1 प्रवीण कुमार और अभि. सा. 2 हरदेव सिंह के मौखिक परिसाक्ष्य का अवलंब लिया है । मृतक-जसविन्दर के मृत्युकालिक कथन में अभियुक्त सं. 1 लाल चंद (जिसकी मृत्यु हो गई है) तथा अभियुक्त-अपीलार्थियों को आलिप्त किया गया है । यह उल्लेखनीय है कि यद्यपि मृत्युकालिक कथन में यह कहा गया है कि मृतक-जसविन्दर और अभियुक्त-अपीलार्थियों के बीच कोई पूर्ववर्ती दुश्मनी नहीं थी, तो भी अभि. सा. 1 प्रवीण कुमार के साक्ष्य से यह प्रकट होता है कि अभियुक्त ब्यास द्वारा अभि. सा. 1 प्रवीण कुमार से 50/- रुपए की रकम ली गई थी और विवाद इस रकम का संदाय न करने के संबंध में था ।

12. यद्यपि अभि. सा. 1 प्रवीण कुमार ने यह कथन किया है कि वह मजदूरों को लेने के लिए गांव जगतपुर गया था और अभियुक्त-

अपीलार्थियों ने उसे पकड़ लिया और उसकी पिटाई करने लगे तथा उसके पश्चात् उसे बांध दिया और उसे एक बरामदे में परिरूद्ध कर दिया, तो भी मृतक-जसविन्दर के मृत्युकालिक कथन में इस विषय में कोई उल्लेख नहीं है । अभि. सा. 1 प्रवीण कुमार ने अपने साक्ष्य में यह कहा है कि कुछ समय के पश्चात् जब उसके भाई मंजीत और जसविन्दर अभियुक्त व्यक्तियों के मकान के साथ लगी गली में जा रहे थे, तो अभियुक्त व्यक्तियों ने दरांत और लोहे की छड़ से उन पर हमला किया । उसके अनुसार, जब वे क्षतियों के कारण बेहोश हो गए, तो अभियुक्त व्यक्तियों ने उनको मकान में खींच लिया । उसने यह कथन किया है कि उसने रस्सी की गांठ खोली और बचकर भागने में सफल रहा । उसने यह भी कथन किया है कि जब वह तेली मोड़ पर पहुंचा, तो उसने केवल कृष्ण को घटना घटने के बारे में बताया और उसके पश्चात् वे रिपोर्ट दर्ज करने के लिए पुलिस चौकी गए ।

13. अभि. सा. 2 हरदेव सिंह ने अपने साक्ष्य में कहा है कि घटना के दिन वह थ्रेसर पर कार्य कर रहा था, जो जगतपुर के निकट लगा था और जब वह बीड़ी खरीदने जा रहा था, तब रास्ते में वह अभि. सा. 1 प्रवीण कुमार से मिला । उसने यह कथन किया है कि जब वे अभियुक्त व्यक्तियों के मकान के निकट गली में पहुंचे, तो अभियुक्त ओमप्रकाश, महेन्द्र, मादी, ब्यास, संत, काशी और गार ने अभि. सा. 1 प्रवीण कुमार को पकड़ लिया और उसे पीटते हुए मकान के अंदर ले गए । तथापि, यह उल्लेखनीय है कि अभि. सा. 1 प्रवीण कुमार के साक्ष्य में अभि. सा. 2 हरदेव सिंह के मौजूद होने के बारे में कोई उल्लेख नहीं है ।

14. अभि. सा. 2 हरदेव सिंह ने यह कहा कि उसके पश्चात् वह वापस चला गया और जब वह जगतपुर नहर के निकट पहुंचा, तो वह मंजीत उर्फ बॉबी और जसविन्दर से मिला और उसने उन्हें अभि. सा. 1 प्रवीण कुमार को उससे मिलने और हमला किए जाने की घटना के बारे में सूचित किया । उसने कथन किया कि उसके पश्चात् वह मंजीत और जसविन्दर दोनों के साथ घटनास्थल पर गया । उसने कथन किया कि वह उनसे थोड़ी दूरी पर था । उसने कथन किया कि जब वे अभियुक्त व्यक्तियों की गली में पहुंचे, तो अभियुक्त व्यक्तियों ने दोनों मृतकों को

भी पकड़ लिया और पिटाई करने लगे । वहां से वह लखनपुर गया और परषोत्तम लाल को टेलीफोन किया कि मृतकों को अभियुक्त व्यक्तियों द्वारा मकान में परिरुद्ध किया गया है । उसने कथन किया कि जब वे अभियुक्त व्यक्तियों के मकान पर पहुंचे, तो पुलिस पहले से वहां पहुंची हुई थी ।

15. अभि. सा. 3 छज्जु राम, जो अभियुक्त व्यक्तियों के मकान के निकट रहता था, पक्षद्रोही हो गया था ।

16. यह उल्लेखनीय है कि घटना का स्थल अभियुक्त व्यक्तियों का मकान है । मृतक-जसविन्दर और मंजीत तथा अभि. सा. 1 प्रवीण कुमार क्यों अभियुक्त व्यक्तियों के मकान पर गए थे, इस बारे में उनके वृत्तांत भिन्न-भिन्न हैं । अभि. सा. 1 प्रवीण कुमार के वृत्तांत के अनुसार, वह वहां मजदूरों की तलाश में गया था और उसके पश्चात् उसे अभियुक्त व्यक्तियों द्वारा पकड़ लिया था चूंकि 50/- रुपए की उधार की रकम को लेकर एक विवाद था ।

17. मृतक जसविन्दर के मृत्युकालिक कथन के अनुसार, मृतक जसविन्दर और मंजीत वहां घास (चारा) लेने गए थे । जबकि अभि. सा. 2 हरदेव सिंह के साक्ष्य के अनुसार, जब वह बीड़ी खरीदने के लिए जगतपुर जा रहा था, तब वह अभि. सा. 1 प्रवीण कुमार से मिला और वे दोनों अभियुक्त व्यक्तियों की गली में गए । उसने यह स्वीकार किया कि बीड़ी की दुकान उसी गली में नहीं थी । उसके अनुसार, अभियुक्त व्यक्तियों द्वारा अभि. सा. 1 प्रवीण कुमार पर हमला किए जाने के पश्चात् वह वहां से चला गया और रास्ते में उसे मृतक जसविन्दर और मंजीत मिले और उसने उन्हें अभि. सा. 1 प्रवीण कुमार पर हमला किए जाने और बांधे जाने की घटना के बारे में सूचित किया । उसके पश्चात्, वे तीनों उस गली में गए जहां अभियुक्त व्यक्तियों का मकान था । वहां अभियुक्त व्यक्तियों ने जसविन्दर और मंजीत पर हमला किया और वह वहां से चला गया । यह भी उल्लेखनीय है कि अभियुक्त सं. 1 लाल चंद (जिसकी मृत्यु हो गई है) को भी उक्त घटना में क्षतियां पहुंची थीं । अभियोजन पक्ष इसको स्पष्ट करने में असफल रहा है । अन्वेषण अधिकारी ने यह स्वीकार किया है कि उसने इस बारे में अन्वेषण नहीं

किया था कि अभियुक्त सं. 1 लाल चंद (जिसकी मृत्यु हो गई है) को कैसे क्षतियां पहुंची थीं । अभियुक्त सं. 1 लाल चंद (जिसकी मृत्यु हो गई है) द्वारा ली गई विनिर्दिष्ट प्रतिरक्षा यह है कि जब वह अपने कमरे में बिस्तर पर लेटा हुआ था, दो व्यक्ति उसके कमरे में आए और उनमें से एक ने उसके सिर पर लाठी से प्रहार किया, जिसके परिणामस्वरूप उसे रक्तस्राव होने लगा और अस्थिभंग के कारण बेहोश हो गया ।

18. अभिलेख पर प्रस्तुत की गई सामग्री से यह प्रतीत होता है कि अभियोजन का पक्षकथन निष्कलंक नहीं है और घटना की उत्पत्ति को छिपाने का प्रयत्न किया है । मृतक जसविन्दर और मंजीत अभियुक्त व्यक्तियों के मकान पर किन परिस्थितियों में गए थे, इस बारे में मृत्युकालिक कथन तथा अभि. सा. 1 प्रवीण कुमार और अभि. सा. 2 हरदेव सिंह के साक्ष्य में विरोधाभास हैं । अभियोजन पक्ष अभियुक्त सं. 1 लाल चंद (जिसकी मृत्यु हो गई है) को पहुंची क्षति को स्पष्ट करने में असफल रहा है । अभियुक्त व्यक्तियों द्वारा एक सुझाव यह भी दिया गया था कि अभियुक्तों की मोहन लाल और केवल कृष्ण के साथ दुश्मनी थी और मृतकों तथा अभि. सा. 1 प्रवीण कुमार और अभि. सा. 2 हरदेव सिंह को उनके द्वारा अभियुक्त सं. 1 लाल चंद (जिसकी मृत्यु हो गई है) पर हमला करने के लिए भेजा गया था । निस्संदेह इस बात से इनकार किया गया है ।

19. अभियुक्तों की यह प्रतिरक्षा प्रतीत होती है कि मृतक-जसविन्दर और मंजीत तथा अभि. सा. 1 प्रवीण कुमार और अभि. सा. 2 हरदेव सिंह को मोहन लाल और केवल कृष्ण द्वारा पूर्ववर्ती दुश्मनी के कारण बदला लेने के लिए इस काम में लगाया गया था ।

20. जैसी कि इसमें ऊपर पहले ही चर्चा की गई है, घटना का स्थल अभियुक्त सं. 1 लाल चंद (जिसकी मृत्यु हो गई है) का मकान है । शेष 6 अभियुक्तों में से 5 उसके पुत्र हैं । इस बारे में तात्विक विरोधाभास हैं कि कैसे और किन परिस्थितियों में मृतक जसविन्दर और मंजीत अपीलार्थियों के मकान पर गए थे । मृत्युकालिक कथन में दिया गया वृत्तांत तथा अभि. सा. 1 प्रवीण कुमार और अभि. सा. 2 हरदेव सिंह के साक्ष्य में दिया गया वृत्तांत पूर्णत: भिन्न हैं । अभियोजन पक्ष

अभियुक्त सं. 1 लाल चंद (जिसकी मृत्यु हो गई है) को पहुंची क्षतियों को स्पष्ट करने में असफल रहा है । अभियुक्त सं. 1 लाल चंद (जिसकी मृत्यु हो गई है) का यह विनिर्दिष्ट पक्षकथन है कि दो व्यक्ति उसके मकान पर आए थे और उन्होंने एक लाठी से उस पर हमला किया था । इस संभाव्यता से इनकार नहीं किया जा सकता कि अभियुक्त व्यक्तियों ने अभियुक्त सं. 1 लाल चंद (जिसकी मृत्यु हो गई है) पर हमला करने से क्रोधित होकर गंभीर और अचानक प्रकोपन के कारण आत्म-संयम से वंचित होकर मृतक-जसविन्दर और मंजीत पर आक्रमण किया जिसके परिणामस्वरूप उनकी मृत्यु हो गई । हमारा यह निष्कर्ष है कि अपीलार्थी रणबीर दंड संहिता की धारा 300 के अपवाद 1 को दृष्टिगत करते हुए संदेह के फायदे के हकदार हैं । इसलिए हमारा सुविचारित मत है कि अभियोजन पक्ष रणबीर दंड संहिता की धारा 302 के अधीन मामले को युक्तियुक्त संदेह के परे साबित करने में असफल रहा है ।

21. अपीलार्थियों पर रणबीर दंड संहिता की धारा 302 के अधीन अधिरोपित दोषसिद्धि और दंडादेश को रणबीर दंड संहिता की धारा 304 के भाग 1 के अधीन संपरिवर्तित किया जाता है । अपीलार्थियों ने पहले ही लगभग 10 वर्ष का दंडादेश भुगत लिया है, इसलिए हमारा यह निष्कर्ष है कि पहले ही भुगत लिए गए दंडादेश से प्रयोजन की पूर्ति हो जाएगी । अपीलार्थियों के जमानत बंधपत्रों को उन्मोचित किया जाता है ।

22. यह अपील उपरोक्त निबंधनों के अनुसार भागत: मंजूर की जाती है ।

अपील भागत: मंजूर की गई ।

जस.

[2023] 1 उम. नि. प. 189

राज्य मार्फत केंद्रीय अन्वेषण ब्यूरो

बनाम

टी. गांगी रेड्डी उर्फ येरा गांगी रेड्डी

[2023 की दांडिक अपील सं. 37]

16 जनवरी, 2023

न्यायमूर्ति एम. आर. शाह और न्यायमूर्ति सी. टी. रविकुमार

दंड प्रक्रिया संहिता, 1973 (1974 का 2) – धारा 167(2) – व्यतिक्रम जमानत – रद्दकरण – अभियुक्त-प्रत्यर्थी को हत्या के अपराध के लिए गिरफ्तार किया जाना और न्यायालय द्वारा न्यायिक अभिरक्षा में विप्रेषित किया जाना – अन्वेषण अभिकरण द्वारा कानूनी अवधि (90 दिन) के भीतर आरोप पत्र फाइल नहीं करने पर विचारण न्यायालय द्वारा अभियुक्त को व्यतिक्रम जमानत पर छोड़ा जाना – मामले का अन्वेषण केंद्रीय अन्वेषण ब्यूरो को सौंपा जाना और आरोप पत्र फाइल करने के पश्चात् प्रत्यर्थी-अभियुक्त को मंजूर की गई व्यतिक्रम जमानत को रद्द करने के लिए आवेदन किया जाना – उच्च न्यायालय द्वारा आवेदन को इस आधार पर नामंजूर किया जाना कि धारा 167(2) के अधीन मंजूर की गई जमानत को गुणागुण के आधार पर रद्द नहीं किया जा सकता – अपील – संधार्यता – किसी व्यक्ति को धारा 167(2) के अधीन व्यतिक्रम जमानत पर छोड़े जाने के पश्चात् केवल आरोप पत्र फाइल कर देना ही व्यतिक्रम जमानत को रद्द करने का आधार नहीं हो सकता किंतु यदि अन्वेषण पूरा करने के पश्चात् आरोप पत्र फाइल किए जाने पर गुणागुण के आधार पर यह दृढ़ मामला सिद्ध किया जाता है कि अभियुक्त ने अजमानतीय अपराध किया है और उसे अभिरक्षा में सुपुर्द किया जाना चाहिए, तो ऐसा कोई आत्यंतिक वर्जन नहीं है कि धारा 167(2) के अधीन मंजूर की गई व्यतिक्रम जमानत को गुणागुण के आधार पर रद्द नहीं किया जा सकता और न्यायालय विशेष कारणों/आधारों के साथ-साथ धारा 437(5) और 439(2) पर विचार करते

हुए जमानत के रद्दकरण के लिए आवेदन पर गुणागुण के आधार पर विचार करने के लिए विवर्जित नहीं हैं, इसलिए उच्च न्यायालय के आदेश को अपास्त करना न्यायोचित होगा ।

इस अपील के तथ्य इस प्रकार हैं कि श्री वाई. एस. विवेकानंद रेड्डी, भूतपूर्व विधानसभा सदस्य; भूतपूर्व लोकसभा सदस्य; भूतपूर्व सदस्य, आंध्र प्रदेश विधायी परिषद्; और अन्य पदों को धारण करने वाले को तारीख 15 मार्च, 2019 को अपने मकान में मृत पाया गया था । आरंभ में स्थानीय पुलिस द्वारा दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 174 के अधीन एक मामला रजिस्ट्रीकृत किया गया । तत्पश्चात्, भारतीय दंड संहिता की धारा 120ख के साथ पठित धारा 302 के अधीन मामला रजिस्ट्रीकृत किया गया । राज्य द्वारा विशेष अन्वेषण दल (एस. आई. टी.) का गठन किया गया । विशेष अन्वेषण दल (एस. आई. टी.) ने अन्वेषण का कार्य संभाला । अन्वेषण के दौरान, संबंधित राज्य पुलिस अभिकरण ने तारीख 28 मार्च, 2019 को इस अपील में प्रत्यर्थी-मूल अभियुक्त सं. 1 (अभियुक्त 1) को गिरफ्तार किया और उसे न्यायिक अभिरक्षा में प्रतिप्रेषित किया गया । तारीख 26 जून, 2019 को 90 दिन की कानूनी अवधि बीत गई । प्रत्यर्थी-मूल अभियुक्त सं. 1 ने 90 दिन बीत जाने के अगले ही दिन दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 167(2) के अधीन व्यतिक्रम जमानत के लिए जमानत आवेदन फाइल किया । विद्वान् न्यायिक मजिस्ट्रेट, प्रथम श्रेणी, पुलिवेंडुला द्वारा प्रत्यर्थी को तारीख 27 जून, 2019 को व्यतिक्रम जमानत मंजूर की गई । प्रत्यर्थी-मूल अभियुक्त सं. 1 को उक्त आदेश के अनुसार जमानत पर छोड़ दिया गया । तत्पश्चात् उच्च न्यायालय द्वारा तारीख 11 मार्च, 2020 को पारित किए गए आदेश के अनुसरण में उपरोक्त अपराध में अन्वेषण का कार्य अपीलार्थी-केंद्रीय अन्वेषण ब्यूरो को सौंपा गया । इसके पश्चात् केंद्रीय अन्वेषण ब्यूरो ने उक्त मामले में अन्वेषण का कार्य संभाला । अन्वेषण से प्रकट हुआ कि मृतक की हत्या करने के लिए अभियुक्त 1 से अभियुक्त 4 द्वारा कुछ अन्य व्यक्तियों के साथ मिलकर षड्यंत्र रचा गया था और उक्त षड्यंत्र के पीछे कुछ प्रभावशाली व्यक्ति थे । केंद्रीय अन्वेषण ब्यूरो ने तारीख 26 अक्तूबर, 2021 को आरंभिक/प्रथम आरोप पत्र फाइल किया और अभियुक्त 1 से अभियुक्त 4 को नामित किया । उसके

पश्चात् केंद्रीय अन्वेषण ब्यूरो ने प्रत्यर्थियों को मंजूर की गई जमानत को रद्द करने के लिए दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 439(2) के अधीन विशेष न्यायालय के समक्ष एक आवेदन फाइल किया, जिसे विद्वान् विचारण न्यायालय द्वारा तारीख 30 नवंबर, 2021 के आदेश द्वारा खारिज कर दिया गया । उसके पश्चात् केंद्रीय अन्वेषण ब्यूरो ने अभियुक्त-5 के विरुद्ध भारतीय दंड संहिता की धारा 302 और 201 के साथ पठित धारा 201 और 120ख के अधीन और इस अपील में प्रत्यर्थी-मूल अभियुक्त सं. 1 के विरुद्ध भारतीय दंड संहिता की धारा 201, 506 और धारा 201 के साथ पठित धारा 120ख के अधीन एक अनुपूरक आरोप पत्र फाइल किया । उसके पश्चात् केंद्रीय अन्वेषण ब्यूरो द्वारा इस अपील में प्रत्यर्थी-अभियुक्त सं. 1 को मंजूर की गई जमानत के रद्दकरण के लिए दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 439(2) के अधीन उच्च न्यायालय के समक्ष दांडिक याचिका फाइल की गई । उच्च न्यायालय द्वारा उक्त रिट याचिका को मुख्य रूप से इस आधार पर नामंजूर कर दिया गया कि जब एक बार प्रत्यर्थी सं. 1 मूल अभियुक्त सं. 1 को दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 167(2) के अधीन व्यतिक्रम जमानत पर छोड़ दिया गया था, तो उसके पश्चात् जमानत को गुणागुण के आधार पर रद्द नहीं किया जा सकता । जमानत को दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 439(2) के अधीन रद्द करने से इनकार करते हुए उच्च न्यायालय द्वारा पारित निर्णय और आदेश से व्यथित और असंतुष्ट होकर केंद्रीय अन्वेषण ब्यूरो द्वारा उच्चतम न्यायालय में अपील फाइल की गई । उच्चतम न्यायालय द्वारा अपील मंजूर करते हुए,

अभिनिर्धारित – दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 167(2) के अधीन किसी व्यक्ति को व्यतिक्रम जमानत पर छोड़े जाने के पश्चात् केवल आरोप पत्र फाइल किया जाना उस व्यक्ति की जमानत को रद्द करने का आधार नहीं हो सकता है जिसे व्यक्तिक्रम जमानत पर छोड़ा जाता है । तथापि, अन्वेषण समाप्त होने के पश्चात् आरोप पत्र फाइल किए जाने पर यदि एक दृढ़ मामला सिद्ध किया जाता है और गुणागुण के आधार पर यह पाया जाता है कि उसने एक अजमानतीय अपराध किया है, तो विशेष कारणों/आधारों पर और उपरोक्त अन्य आधारों के अतिरिक्त जिन पर ऐसे किसी व्यक्ति की जमानत को गुणागुण के आधार पर रद्द किया जा

सकता है जिसे जमानत पर छोड़ा गया है और दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 437(5) और धारा 439(2) पर विचार करते हुए गुणागुण के आधार पर जमानत को रद्द किया जा सकता है । अत: ऐसा कोई आत्यंतिक वर्जन नहीं है, जैसा कि उच्च न्यायालय द्वारा आक्षेपित निर्णय और आदेश में मत व्यक्त और अभिनिर्धारित किया गया है, कि जब एक बार किसी व्यक्ति को दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 167(2) के अधीन व्यतिक्रम जमानत पर छोड़ा जाता है, तो उसकी जमानत गुणागुण के आधार पर रद्द नहीं की जा सकती और उसकी जमानत साक्ष्य/साक्षियों के साथ छेड़छाड़ करने, अन्वेषण अभिकरण के साथ सहयोग न करने और/या संबंधित विचारण न्यायालय आदि के साथ सहयोग न करने जैसे अन्य साधारण आधारों पर रद्द की जा सकती है । अत: प्रत्यर्थी-मूल अभियुक्त सं. 1 की ओर से दी गई दलील और उच्च न्यायालय द्वारा आक्षेपित निर्णय और आदेश में अपनाए गए इस दृष्टिकोण को स्वीकार किया जाए कि जब एक बार किसी अभियुक्त को दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 167(2) के अधीन व्यतिक्रम जमानत पर छोड़ दिया जाता है तो उसकी जमानत गुणागुण के आधार पर रद्द नहीं की जा सकती, उस दशा में अकर्मण्यता और/या उपेक्षा को बढ़ावा देना होगा, चाहे ऐसा किसी प्रस्तुत मामले में अन्वेषण अभिकरण द्वारा जानबूझकर विहित समयावधि के भीतर आरोप पत्र फाइल करने का प्रयत्न करके किया गया हो । किसी प्रस्तुत मामले में, यदि अभियुक्त ने अति गंभीर अपराध किया है, जो स्वापक ओषधि और मन:प्रभावी पदार्थ अधिनियम (एनडीपीएस) के अधीन किया गया हो सकता है या यहां तक कि हत्या (हत्याएं) किए जाने का हो सकता है, तथापि, फिर भी वह सुविधाजनक अन्वेषण अधिकारी के माध्यम से व्यवस्था कर लेता है और यह भी व्यवस्था कर लेता है कि दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 167(2) के अधीन वर्णित विहित समय-सीमा के भीतर आरोप पत्र फाइल न किया जाए और व्यतिक्रम जमानत पर रिहा हो जाता है, तो यह अवैधता और/या बेईमानी को बढ़ावा देना होगा । अभियुक्त को व्यतिक्रम जमानत पर इस प्रकार छोड़ा जाना कतई गुणागुण के आधार पर नहीं होता है और धारा 167 की उपधारा (2) के परंतुक में प्रकट संभाव्य घटना के आधार पर छोड़ा जाता है । तथापि, बाद में दोष को ठीक करने और आरोप पत्र

फाइल करने पर यद्यपि यह एक दृढ़ मामला सिद्ध किया जाता है कि अभियुक्त ने अति गंभीर और अजमानतीय अपराध किया है, तो भी न्यायालय जमानत को रद्द नहीं कर सकता और उस व्यक्ति को अभिरक्षा में सुपुर्द नहीं कर सकता तथा अभियुक्त द्वारा कारित अपराध की गंभीरता पर विचार नहीं करेगा, तो न्यायालय ऐसे निर्वचन को पसंद नहीं करेंगे क्योंकि इससे न्याय विफल हो जाएगा । न्यायालयों को ऐसी दशा में जमानत रद्द करने और मामले के गुणागुण की परीक्षा करने की शक्ति है जहां अभियुक्त को व्यतिक्रम जमानत पर छोड़ा जाता है न कि पहले गुणागुण के आधार पर छोड़ा जाता है । ऐसा निर्वचन न्याय प्रशासन को अग्रसर करने के लिए होगा । उपरोक्त को दृष्टिगत करते हुए और ऊपर उल्लिखित कारणों से केंद्रीय अन्वेषण ब्यूरो द्वारा दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 439(2) के अधीन जमानत के रद्दकरण के लिए फाइल किए गए आवेदन को रद्द करते हुए उच्च न्यायालय द्वारा पारित आक्षेपित निर्णय और आदेश अभिखंडित और अपास्त किए जाने योग्य है और तद्नुसार अभिखंडित और अपास्त किया जाता है । वर्तमान अपील में अंतर्वलित विवाद्यक का उत्तर सकारात्मक दिया जाता है और यह मत व्यक्त और अभिनिर्धारित किया जाता है कि ऐसे किसी मामले में जहां अभियुक्त को दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 167(2) के अधीन व्यतिक्रम जमानत पर छोड़ा जाता है और उसके पश्चात् आरोप पत्र फाइल करने पर एक दृढ़ मामला सिद्ध किया जाता है तथा आरोप पत्र से यह विशेष कारण सिद्ध होने पर कि अभियुक्त ने एक अजमानतीय अपराध कारित किया है और धारा 437(5) तथा धारा 439(2) में उपवर्णित आधारों पर विचार करते हुए उसकी जमानत को गुणागुण के आधार पर रद्द किया जा सकता है तो न्यायालय गुणागुण के आधार पर जमानत के रद्दकरण के लिए आवेदन पर विचार करने के लिए विवर्जित नहीं हैं । तथापि, केवल आरोप पत्र फाइल करना पर्याप्त नहीं है, किंतु जैसा कि इसमें ऊपर मत व्यक्त और अभिनिर्धारित किया गया है, आरोप पत्र के आधार पर यह दृढ़ मामला सिद्ध किया जाना चाहिए कि अभियुक्त ने अजमानतीय अपराध कारित किया है और वह अभिरक्षा में रहने योग्य है । (पैरा 10, 11, 12 और 13)

निर्दिष्ट निर्णय

पैरा

[2017] (2017) 15 एस. सी. सी. 67 :
राकेश कुमार पाल बनाम **असम राज्य**; 7

[2014] (2014) 10 एस. सी. सी. 754 :
अब्दुल बासित उर्फ **राजू और अन्य** बनाम
मोहम्मद अब्दुल कादिर चौधरी
और एक अन्य; 5.7, 9, 9.5

[1996] (1996) 1 एस. सी. सी. 722 :
मोहम्मद इकबाल मदर शेख और
अन्य बनाम **महाराष्ट्र राज्य**; 6.3, 6.4, 9.6

[1992] (1992) 4 एस. सी. सी. 272 :
असलम बाबालाल देसाई बनाम 5.4, 9, 9.4,
महाराष्ट्र राज्य; 9.5, 9.6

[1989] (1989) 3 एस. सी. सी. 532 :
रजनीकांत जीवनलाल और एक अन्य बनाम
आसूचना अधिकारी, स्वापक पदार्थ
नियंत्रण ब्यूरो, नई दिल्ली; 9.9

[1987] [1987] 1 उम. नि. प. 244 = (1986)
4 एस. सी. सी. 481 :
रघुबीर सिंह और अन्य बनाम **बिहार राज्य** । 9.8, 9.9

अपीली (दांडिक) अधिकारिता : 2023 की दांडिक अपील सं. 37.

2022 की दांडिक याचिका सं. 788 में आंध्र प्रदेश उच्च न्यायालय, अमरावती द्वारा तारीख 16 मार्च, 2022 को पारित निर्णय और आदेश के विरुद्ध अपील ।

अपीलार्थी की ओर से सर्वश्री के. एन. नटराज, अपर महा-सालिसिटर, (सुश्री) ज्योति जोंगलुजु, शरत नाम्बियार, विनायक शर्मा, प्रणीत

प्रणव, टी. एस. सबारीश, नकुल चेनगप्पा के. के. और अरविन्द कुमार शर्मा

प्रत्यर्थी की ओर से सर्वश्री बी. आदिनारायण राव, सिद्धार्थ दवे, ज्येष्ठ अधिवक्तागण, सुमंथ नूकला, (सुश्री) जेसल वाही और (सुश्री) विधि ठाकर

न्यायालय का निर्णय न्यायमूर्ति एम. आर. शाह ने दिया ।

न्या. शाह – अन्वेषण अभिकरण-केंद्रीय अन्वेषण ब्यूरो ने यह अपील 2022 की रिट याचिका सं. 788 में आंध्र प्रदेश उच्च न्यायालय, अमरावती द्वारा तारीख 16 मार्च, 2022 को पारित किए गए उस आक्षेपित निर्णय और आदेश से व्यथित और असंतुष्ट होकर फाइल की है, जिसके द्वारा उच्च न्यायालय ने इस अपील में प्रत्यर्थी-मूल अभियुक्त सं. 1 को मंजूर की गई जमानत को रद्द करने के लिए अपीलार्थी-केंद्रीय अन्वेषण ब्यूरो (सीबीआई) द्वारा दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 439(2) के अधीन फाइल की गई उक्त रिट याचिका को खारिज कर दिया था और जिसमें उच्च न्यायालय ने यह अभिनिर्धारित किया था कि जब एक बार प्रत्यर्थी सं. 1 अभियुक्त सं. 1 को दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 167(2) के अधीन व्यतिक्रम जमानत पर छोड़ दिया गया था तो उसके पश्चात् जमानत के रद्दकरण के लिए मामले पर गुणागुण के आधार पर विचार करना अनुज्ञेय नहीं है ।

2. वर्तमान अपील में अंतर्वलित विवाद्यक पर विचार करने के लिए अर्थात् जहां किसी मामले में अभियुक्त को व्यतिक्रम जमानत पर छोड़ दिया जाता है, तो क्या उसके पश्चात् जमानत के रद्दकरण के लिए आवेदन पर गुणागुण के आधार पर विचार किया जा सकता है, क्रमवार तारीखों और घटनाओं को निर्दिष्ट किया जाना आवश्यक है, जो निम्न प्रकार से हैं –

2.1 मृतक श्री वाई. एस. विवेकानंद रेड्डी, भूतपूर्व विधानसभा सदस्य; भूतपूर्व लोकसभा सदस्य; भूतपूर्व सदस्य, आंध्र प्रदेश विधायी

परिषद्; और अन्य पदों को धारण करने वाले को तारीख 15 मार्च, 2019 को अपने मकान में मृत पाया गया था । आरंभ में स्थानीय पुलिस अर्थात् पुलिस थाना, पुलिवेंडुला द्वारा दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 174 के अधीन 2019 के अपराध सं. 84 में एक मामला रजिस्ट्रीकृत किया गया । तत्पश्चात्, भारतीय दंड संहिता की धारा 120ख के साथ पठित धारा 302 के अधीन मामला रजिस्ट्रीकृत किया गया । राज्य द्वारा विशेष अन्वेषण दल (एसआईटी) का गठन किया गया । विशेष अन्वेषण दल (एसआईटी) ने अन्वेषण का कार्य संभाला । अन्वेषण के दौरान, संबंधित राज्य पुलिस अभिकरण ने तारीख 28 मार्च, 2019 को इस अपील में प्रत्यर्थी-मूल अभियुक्त सं. 1 (अभियुक्त 1) को गिरफ्तार किया और उसे न्यायिक अभिरक्षा में प्रतिप्रेषित किया गया । तारीख 26 जून, 2019 को 90 दिन की कानूनी अवधि बीत गई । प्रत्यर्थी-मूल अभियुक्त सं. 1 ने 90 दिन बीत जाने के अगले ही दिन दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 167(2) के अधीन व्यतिक्रम जमानत के लिए जमानत आवेदन फाइल किया । विद्वान् न्यायिक मजिस्ट्रेट, प्रथम श्रेणी, पुलिवेंडुला द्वारा प्रत्यर्थी को तारीख 27 जून, 2019 को व्यतिक्रम जमानत मंजूर की गई । प्रत्यर्थी-मूल अभियुक्त सं. 1 को उक्त आदेश के अनुसार जमानत पर छोड़ दिया गया ।

2.2 तत्पश्चात् और 2019 की रिट याचिका सं. 3144 और 2020 की रिट याचिका सं. 1639 में उच्च न्यायालय द्वारा तारीख 11 मार्च, 2020 को पारित किए गए आदेश के अनुसरण में उपरोक्त अपराध में अन्वेषण का कार्य अपीलार्थी-केंद्रीय अन्वेषण ब्यूरो को सौंपा गया । इसके पश्चात् केंद्रीय अन्वेषण ब्यूरो ने उक्त मामले में अन्वेषण का कार्य संभाला । केंद्रीय अन्वेषण ब्यूरो ने तारीख 9 जुलाई, 2020 को प्रथम इत्तिला रिपोर्ट सं. आरसी-4(एस)/2020/एससी-II/एनडी फाइल की । अन्वेषण से प्रकट हुआ कि मृतक की हत्या करने के लिए अभियुक्त 1 से अभियुक्त 4 द्वारा कुछ अन्य व्यक्तियों के साथ मिलकर षड्यंत्र रचा गया था और उक्त षड्यंत्र के पीछे कुछ प्रभावशाली व्यक्ति थे ।

2.3 केंद्रीय अन्वेषण ब्यूरो ने तारीख 26 अक्तूबर, 2021 को आरंभिक/प्रथम आरोप पत्र फाइल किया और अभियुक्त 1 से अभियुक्त 4

को नामित किया । उसके पश्चात् केंद्रीय अन्वेषण ब्यूरो ने प्रत्यर्थियों को मंजूर की गई जमानत को रद्द करने के लिए दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 439(2) के अधीन विशेष न्यायालय के समक्ष एक आवेदन फाइल किया, जिसे विद्वान् विचारण न्यायालय द्वारा तारीख 30 नवंबर, 2021 के आदेश द्वारा खारिज कर दिया गया ।

2.4 उसके पश्चात् केंद्रीय अन्वेषण ब्यूरो ने अभियुक्त डी. शिव शंकर रेड्डी (अभियुक्त 5) के विरुद्ध भारतीय दंड संहिता की धारा 302 और 201 के साथ पठित धारा 201 और 120ख के अधीन और इस अपील में प्रत्यर्थी-मूल अभियुक्त सं. 1 के विरुद्ध भी भारतीय दंड संहिता की धारा 201, 506 और धारा 201 के साथ पठित धारा 120ख के अधीन एक अनुपूरक आरोप पत्र फाइल किया । उसके पश्चात् केंद्रीय अन्वेषण ब्यूरो ने आगे अन्वेषण किया और अन्वेषण जारी रखते हुए इकबाली साक्षी अभियुक्त-4 का कथन अभिलिखित किया । उसके पश्चात् केंद्रीय अन्वेषण ब्यूरो ने इस अपील में प्रत्यर्थी-अभियुक्त सं. 1 को मंजूर की गई जमानत के रद्दकरण के लिए दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 439(2) के अधीन उच्च न्यायालय के समक्ष 2022 की दांडिक याचिका सं. 788 फाइल की ।

2.5 उच्च न्यायालय ने आक्षेपित निर्णय और आदेश द्वारा उक्त रिट याचिका को मुख्य रूप से इस आधार पर नामंजूर कर दिया कि जब एक बार प्रत्यर्थी सं. 1 मूल अभियुक्त सं. 1 को दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 167(2) के अधीन व्यतिक्रम जमानत पर छोड़ दिया गया था, तो उसके पश्चात् जमानत को गुणागुण के आधार पर रद्द नहीं किया जा सकता ।

2.6 जमानत को दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 439(2) के अधीन रद्द करने से इनकार करते हुए उच्च न्यायालय द्वारा पारित आक्षेपित निर्णय और आदेश से व्यथित और असंतुष्ट होकर केंद्रीय अन्वेषण ब्यूरो ने यह अपील फाइल की है ।

3. इस प्रक्रम पर, यह उल्लेखनीय है कि इसी बीच मृतक की पुत्री और पत्नी ने वर्तमान प्रथम इत्तिला रिपोर्ट से उद्भूत विचारण को केंद्रीय

अन्वेषण ब्यूरो विशेष न्यायालय, कडापा, आंध्र प्रदेश से केंद्रीय अन्वेषण ब्यूरो विशेष न्यायालय, हैदराबाद या केंद्रीय अन्वेषण ब्यूरो विशेष न्यायालय, नई दिल्ली अंतरित करने और पूर्वोक्त प्रथम इत्तिला रिपोर्ट में अन्वेषण को समयबद्ध रीति में सम्यक् रूप से पूर्ण करने के लिए केंद्रीय अन्वेषण ब्यूरो को भी निदेश देने की ईप्सा करते हुए भारत के संविधान के अनुच्छेद 32 के अधीन इस न्यायालय के समक्ष एक रिट याचिका फाइल की । साक्ष्य के साथ छेड़छाड़ करने और साक्षियों तथा केंद्रीय अन्वेषण ब्यूरो के अधिकारियों पर उनके विरुद्ध मिथ्या शिकायतें फाइल करके दबाव डालने के अभिकथनों के आधार पर फाइल की गई उक्त रिट याचिका को इस न्यायालय ने तारीख 29 नवंबर, 2022 के विस्तृत निर्णय और आदेश द्वारा मंजूर किया ।

4. अत: इस न्यायालय के विचार के लिए उठाया गया संक्षिप्त प्रश्न यह है –

> "क्या किसी अभियुक्त को दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 167(2) के अधीन व्यतिक्रम जमानत पर छोड़े जाने के पश्चात् किन्हीं परिस्थितियों के अधीन उसकी जमानत को रद्द किया जा सकता है और क्या अन्वेषण की समाप्ति और आरोप पत्र फाइल करने पर अजमानतीय अपराध किया गया पाए जाने पर जमानत को गुणागुण के आधार पर रद्द किया जा सकता है ?"

5. केंद्रीय अन्वेषण ब्यूरो की ओर से हाजिर होने वाले विद्वान् अपर महा-सालिसिटर श्री के. एम. नटराज ने जोरदार रूप से यह दलील दी कि किसी अभियुक्त को दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 167(2) के अधीन व्यतिक्रम जमानत पर छोड़ा जाना अभियुक्त को गुणागुण के आधार पर छोड़ा जाना नहीं कहा जा सकता । यह दलील दी गई कि किसी अभियुक्त को दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 167(2) के अधीन व्यतिक्रम जमानत पर अन्वेषण अभिकरण के दंड प्रक्रिया संहिता के अधीन अनुबंधित समय के भीतर अन्वेषण समाप्त करने में असफल रहने पर छोड़ा जाता है । अत: यह दलील दी गई कि आरोप पत्र फाइल कर देने और इस दोष को ठीक करने पर न्यायालय इस आधार पर सदैव गुणागुण के आधार पर जमानत के रद्दकरण के लिए आवेदन पर

और अपराध की गंभीरता पर विचार करने के लिए स्वतंत्र है ।

5.1 जोरदार रूप से यह दलील दी गई कि दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 167(2) में वह अधिकतम सीमा नियत की गई है जिसके भीतर अन्वेषण को पूरा किया जाना चाहिए और यदि अन्वेषण को विहित अवधि के भीतर पूरा नहीं किया जाता है, तो अभियुक्त यदि जमानत देने के लिए तैयार है और दे देता है, तो उसे जमानत पर छोड़े जाने का अधिकार है । यह दलील दी गई कि धारा 167 की उपधारा (2) के खंड (क)(ii) के अनुसार, उसे दंड प्रक्रिया संहिता के अध्याय 33 के प्रयोजनों के लिए छोड़ा गया समझा जाता है । यह दलील दी गई कि दंड प्रक्रिया संहिता के अध्याय 33 में धारा 437 और 439 सम्मिलित हैं जिनके अधीन न्यायालय किसी अभियुक्त को मंजूर की गई जमानत को धारा 437(5) और धारा 439(2) के निबंधनों के अनुसार रद्द करने के लिए सशक्त है । अत: यह दलील दी गई कि यद्यपि जमानत दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 167 की उपधारा (2) के परंतुक के अधीन गृहीत कल्पना के फलस्वरूप मंजूर की जाती है, तो भी न्यायालय द्वारा इसे दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 437(5) और धारा 439(2) के अधीन रद्द किया जा सकता है ।

5.2 यह दलील दी गई कि धारा 167(2) के परंतुक का प्रयोजन विहित समय-सीमा के भीतर शीघ्रता से अन्वेषण करने और इस संबंध में शिथिलता को रोकने की आवश्यकता पर बल देना है । इसका उद्देश्य इसकी अत्यावश्यकता की भावना को मन में बैठाना है और व्यतिक्रम होने पर मजिस्ट्रेट अभियुक्त को, यदि वह जमानत देने के लिए तैयार है और दे देता है, छोड़ देगा । अत: यह दलील दी गई कि दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 167(2) के परंतुक के अधीन जमानत पर छोड़े जाने का आदेश गुणागुण के आधार पर दिया गया आदेश न होकर अपितु अभियोजन अभिकरण द्वारा किए गए व्यतिक्रम के आधार पर दिया गया आदेश होता है । यह दलील दी गई कि धारा 167(2) के परंतुक के अधीन गृहीत कल्पना का निर्वचन गुणागुण के आधार पर मंजूर न की गई जमानत के आदेश को इस प्रकार संपरिवर्तित करने के लिए नहीं किया जा सकता, मानो यह गुणागुण के आधार पर पारित किया गया

हो । अत: यह दलील दी गई कि ऐसे आदेश को दोष/व्यतिक्रम को ठीक किए जाने के पश्चात् अर्थात् आरोप पत्र फाइल कर देने के प्रश्चात् विशेष कारणों से अकृत किया जा सकता है । अत: यह दलील दी गई कि चूंकि जमानत अन्वेषण अभिकरण के व्यतिकरण के कारण और न्यायालय द्वारा मामले के गुणागुण पर विचार किए बिना मंजूर की गई थी, इसलिए आरोप पत्र में उल्लिखित गुणागुण और विद्यमान परिस्थितियां सुसंगत होंगी ।

5.3 यह भी दलील दी गई कि वर्तमान मामले में प्रत्यर्थी को जमानत राज्य पुलिस द्वारा विहित समय-सीमा के भीतर अन्वेषण पूरा करने में व्यतिक्रम करने के आधार पर धारा 167(2) के परंतुक के अधीन मंजूर की गई थी और राज्य पुलिस का निरुत्साहित दृष्टिकोण भी अन्वेषण को अपीलार्थी-केंद्रीय अन्वेषण ब्यूरो को अंतरित करने का कारण था ।

5.4 अपीलार्थी-केंद्रीय अन्वेषण ब्यूरो की ओर से हाजिर होने वाले विद्वान् अपर महा-सालिसिटर श्री के. एन. नटराज ने **असलम बाबालाल देसाई** बनाम **महाराष्ट्र राज्य**[1] वाले मामले में इस न्यायालय के तीन न्यायाधीशों की न्यायपीठ के विनिश्चय का अपनी इस दलील के समर्थन में जोरदार रूप से अवलंब लिया कि जैसा कि इस न्यायालय द्वारा मत व्यक्त और अभिनिर्धारित किया गया है कि ये विशेष आधार सिद्ध किए जाने पर कि अभियुक्त ने अत्यंत घोर अपराध कारित किया है; अजमानतीय अपराध कारित किए हैं और वह अभिरक्षा में रखे जाने योग्य है, यहां तक कि ऐसे मामले में भी जहां अभियुक्त को दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 167(2) के अधीन व्यतिक्रम जमानत पर छोड़ दिया जाता है, उसकी जमानत रद्द की जा सकती है । न्यायमूर्ति ए. एम. अहमदी (जैसे वे उस समय थे) द्वारा पैरा 14 में की गई मताभिव्यक्तियों का जोरदार अवलंब लिया गया । उन्होंने हमारा ध्यान न्यायमूर्ति एम. एम. पंछी (जैसे वे उस समय थे) द्वारा पैरा 23 और 28 में की गई मताभिव्यक्तियों की ओर दिलाया (यद्यपि यह विसम्मत मत था किंतु दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 167(2) के संबंध में की गई

---

[1] (1992) 4 एस. सी. सी. 272.

मताभिव्यक्तियों से सम्मत था) । अलग-अलग माननीय न्यायाधीशों द्वारा पूर्वोक्त पैराओं में की गई उपरोक्त मताभिव्यक्तियों का अवलंब लेते हुए यह दलील दी गई कि जैसा कि इस न्यायालय द्वारा मत व्यक्त और अभिनिर्धारित किया गया है, दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 167 की उपधारा (2) के परंतुक के अधीन व्यतिक्रम जमानत मंजूर करना दंड प्रक्रिया संहिता के अध्याय 33 के निबंधनों के अनुसार छोड़ा जाना समझा जाता है और इसलिए व्यतिक्रम जमानत जब एक बार मंजूर कर दी जाती है, तो न्यायालय द्वारा दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 437(5) या धारा 439(2) के अधीन जमानत के रद्दकरण के लिए संगत कारणों से इसे रद्द किया जा सकता है ।

5.5 उपरोक्त विनिश्चयों और उनमें की गई मताभिव्यक्तियों का अवलंब लेते हुए यह दलील दी गई कि चूंकि जमानत अन्वेषण अभिकरण के व्यतिक्रम के कारण और न्यायालय द्वारा मामले के गुणागुण का उल्लेख किए बिना मंजूर की गई थी इसलिए आरोप पत्र में उल्लिखित गुणागुण और विद्यमान परिस्थितियां सुसंगत होंगी ।

5.6 विद्वान् अपर महा-सालिसिटर श्री के. एन. नटराज ने यह भी दलील दी कि वर्तमान मामले में यहां तक कि परिवर्तित परिस्थितियों और 2022 की रिट याचिका (दांडिक) सं. 169 में इस न्यायालय द्वारा पारित पश्चात्वर्ती आदेश में की गई मताभिव्यक्तियों, जिसके द्वारा इस न्यायालय ने विचारण को केंद्रीय अन्वेषण ब्यूरो विशेष न्यायालय, कपाडा, आंध्र प्रदेश से केंद्रीय अन्वेषण ब्यूरो विशेष न्यायालय, हैदराबाद अंतरित किया था, को ध्यान में रखते हुए जमानत रद्द करने के लिए धारा 439(2) के अधीन भी मामला सिद्ध होता है । यह दलील दी गई कि इस माननीय न्यायालय ने विचारण को इस आधार पर अंतरित किया था कि साक्षियों को भयभीत और/या प्रभावित किया जा रहा है और यदि विचारण आंध्र प्रदेश राज्य में किया जाता है तो ऋजु विचारण होने की कोई संभावना नहीं है । तथापि, चूंकि उच्च न्यायालय ने किसी बात पर कतई गुणागुण के आधार पर विचार नहीं किया था, इसलिए हम इस प्रक्रम पर उक्त पहलू पर विचार करना और पूर्वोक्त पर कोई राय व्यक्त करना नहीं चाहते हैं ।

5.7 विद्वान् अपर महा-सालिसिटर श्री नटराज ने **अब्दुल बासित** उर्फ **राजू और अन्य** बनाम **मोहम्मद अब्दुल कादिर चौधरी और एक अन्य**[1] वाले मामले में इस न्यायालय के पश्चात्वर्ती विनिश्चय (पैरा 13 और 14) का भी अपनी इस दलील के समर्थन में जोरदार रूप से अवलंब लिया कि दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 167(2) के अधीन मंजूर की गई जमानत को अभियोजन अभिकरण द्वारा किए गए आवेदन पर रद्द किया जा सकता है ।

5.8 उपरोक्त दलीलें देते हुए यह निवेदन किया गया कि वर्तमान अपील को मंजूर किया जाए और अभियुक्त सं. 1 के पक्ष में मंजूर की गई जमानत को गुणागुण के आधार पर आरोप पत्र पर विचार करते हुए तथा अभियुक्त द्वारा किए गए अभिकथित अपराधों की गंभीरता और अपराधों की घोरता पर विचार करते हुए रद्द किया जाए ।

5.9 केंद्रीय अन्वेषण ब्यूरो की ओर से हाजिर होने वाले विद्वान् अपर महा-सालिसिटर ने गुणागुण के आधार पर तथा प्रत्यर्थी-अभियुक्त सं. 1 के जमानत पश्चात् आचरण के आधार पर भी दलील देने की कोशिश की । तथापि, चूंकि उच्च न्यायालय ने पूर्वोक्त पहलुओं पर कतई विचार नहीं किया था, इसलिए हम इस प्रक्रम पर गुणागुण और/या प्रत्यर्थी-अभियुक्त के जमानत पश्चात् आचरण पर विचार करना नहीं चाहेंगे ।

6. प्रत्यर्थी की ओर से हाजिर होने वाले विद्वान् ज्येष्ठ अधिवक्ता श्री बी. आदिनारायण द्वारा वर्तमान अपील का जोरदार रूप से विरोध किया गया ।

6.1 प्रत्यर्थी-मूल अभियुक्त सं. 1 की ओर से हाजिर होने वाले विद्वान् ज्येष्ठ काउंसेल द्वारा जोरदार रूप से यह दलील दी गई कि विधि की स्थिर स्थिति के अनुसार, केवल बाद में आरोप पत्र फाइल कर देना दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 167(2) के अधीन प्रत्यर्थी को मंजूर की गई जमानत को रद्द करने का आधार नहीं हो सकता है । अत: यह दलील दी गई कि वर्तमान मामले में उच्च न्यायालय ने व्यतिक्रम

---

[1] (2014) 10 एस. सी. सी. 754.

जमानत को/केंद्रीय अन्वेषण ब्यूरो द्वारा बाद में आरोप पत्र फाइल कर देने के आधार पर जमानत को रद्द करने से ठीक ही इनकार किया था । यह दलील दी गई कि वर्तमान मामले में प्रत्यर्थी-मूल अभियुक्त सं. 1 को राज्य पुलिस अभिकरण/एस. आई. टी. द्वारा केंद्रीय अन्वेषण ब्यूरो को अन्वेषण सौंपे जाने से काफी पहले ही आरोप पत्रित कर दिया गया था ।

6.2 यह दलील दी गई कि यहां तक कि उसके पश्चात् और केंद्रीय अन्वेषण ब्यूरो द्वारा अन्वेषण संभालने और आरोप पत्र फाइल कर देने के पश्चात् भी केंद्रीय अन्वेषण ब्यूरो ने विद्वान् विचारण न्यायालय के समक्ष जमानत रद्द करने के लिए धारा 439(2) के अधीन आवेदन फाइल किया था, जिसे विचारण न्यायालय द्वारा खारिज कर दिया गया था । अत: यह दलील दी गई कि अनुबंधित समय के भीतर अन्वेषण पूर्ण न होने और आरोप पत्र फाइल न करने के कारण जब एक बार प्रत्यर्थी-मूल अभियुक्त सं. 1 को व्यतिक्रम जमानत पर छोड़ दिया गया था, तो बाद में मात्र आरोप पत्र फाइल कर देना उसके पक्ष में मंजूर की गई जमानत को रद्द करने का आधार नहीं हो सकता ।

6.3 यह दलील दी गई इस न्यायालय के कई विनिश्चयों के अनुसार दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 167(2) के अधीन यथावर्णित अनुबंधित समय के भीतर आरोप पत्र फाइल न करने पर अभियुक्त को जमानत पर छोड़े जाने का अभियुक्त के पक्ष में प्रोद्भूत एक अजेय अधिकार है । यह दलील दी गई कि एक बार जब ऐसे उपलब्ध अधिकार का प्रयोग करते हुए अभियुक्त को दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 167(2) के अधीन जमानत पर छोड़ दिया जाता है, तो बाद में आरोप पत्र फाइल करने के आधार पर इसे छीना और/या रद्द नहीं किया जा सकता । प्रत्यर्थी-मूल अभियुक्त सं. 1 की ओर से हाजिर होने वाले विद्वान् ज्येष्ठ काउंसेल ने **मोहम्मद इकबाल मदर शेख और अन्य** बनाम **महाराष्ट्र राज्य**[1] वाले मामले में इस न्यायालय के विनिश्चय (पैरा 10) का जोरदार रूप से अवलंब लिया ।

---

[1] (1996) 1 एस. सी. सी. 722.

6.4 उपरोक्त दलीलें देने के पश्चात् और **मोहम्म्द इकबाल मदर शेख और अन्य** (उपर्युक्त) वाले मामले में के विनिश्चय का अवलंब लेते हुए वर्तमान अपील को खारिज किए जाने का निवेदन किया गया ।

7. प्रस्तावित पक्षकार – मृतक की पुत्री की ओर से हाजिर होने वाले विद्वान् ज्येष्ठ काउंसेल श्री सिद्धार्थ दवे ने विद्वान् अपर महा-सालिसिटर श्री नटराज का समर्थन किया और दलील दी कि प्रत्यर्थी-मूल अभियुक्त सं. 1 के विरूद्ध अभिकथित आरोपों की गंभीरता और यह कि अपराध की घोरता को देखते हुए तथा 2022 की रिट याचिका (दांडिक) सं. 169 का विनिश्चय करते हुए इस न्यायालय द्वारा विचारित अभियुक्त को जमानत पर छोड़े जाने के पश्चात् उसके जमानत पश्चात् आचरण को ध्यान में रखते हुए निवेदन है कि उसके पक्ष में मंजूर की गई जमानत को रद्द किया जाए । उन्होंने **राकेश कुमार पाल** बनाम **असम राज्य**[1] वाले मामले में इस न्यायालय के विनिश्चय (पैरा 15 और 49) का भी यह दलील देते हुए अवलंब लिया कि जैसा कि इस न्यायालय द्वारा उक्त विनिश्चय में मत व्यक्त किया गया है, यदि अभियुक्त को व्यतिक्रम जमानत पर छोड़ दिया जाता है, तो यह बात विषयांतर्गत आरोप के संबंध में तर्कपूर्ण आधारों पर अभियुक्त को गिरफ्तार या पुन: गिरफ्तार करने से प्रतिषिद्ध या अन्यथा निवारित नहीं करती है और गिरफ्तारी या पुन: गिरफ्तारी के उपरांत अभियुक्त नियमित जमानत मंजूर करने के लिए आवेदन करने का हकदार है और उस आवेदन पर इसके स्वयं के गुणागुण के आधार पर विचार किया जाना चाहिए ।

8. संबंधित पक्षकारों की ओर से हाजिर होने वाले विद्वान् काउंसेलों को सुनने के पश्चात् इस न्यायालय के विचार के लिए जो संक्षिप्त प्रश्न पैदा होता है, वह यह है कि क्या विहित अवधि के भीतर अन्वेषण पूरा करने में असफल रहने पर दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 167 की उपधारा (2) के परंतुक के अधीन मंजूर की गई जमानत को आरोप पत्र के प्रस्तुत करने के पश्चात् रद्द किया जा सकता है और यदि उक्त प्रश्न का उत्तर सकारात्मक है, तब किन आधारों और किन परिस्थितियों में जमानत को रद्द किया जा सकता है ?

---

[1] (2017) 15 एस. सी. सी. 67.

8.1 आरंभ में, यह उल्लेखनीय है और इसे विवादग्रस्त नहीं किया जा सकता कि जब किसी अभियुक्त को दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 167 की उपधारा (2) के परंतुक के अधीन इसमें वर्णित अनुबंधित समय के भीतर अन्वेषण अभिकरण द्वारा अन्वेषण पूरा करने और आरोप पत्र फाइल करने में असफल रहने के आधार पर व्यतिक्रम जमानत पर छोड़ा जाता है, तो उसे उसके द्वारा जमानत बंधपत्र प्रस्तुत करने के पश्चात् छोड़ा जाता है । दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 167 की उपधारा (2) के परंतुक में वह अधिकतम सीमा नियत की गई है, जिसके भीतर अन्वेषण को अवश्य पूरा किया जाना चाहिए और यदि इसमें विहित अवधि के भीतर अन्वेषण को पूरा नहीं किया जाता है, तो अभियुक्त यदि जमानत देने के लिए तैयार है और दे देता है, तो उसे जमानत पर छोड़े जाने का अधिकार है । दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 167(2) के परंतुक पर विचार करते हुए यह विवादग्रस्त नहीं किया जा सकता है कि जमानत (व्यतिक्रम जमानत) पर छोड़ा गया कोई व्यक्ति दंड प्रक्रिया संहिता के अध्याय 33 के प्रयोजनों के लिए छोड़ा गया समझा जाता है, जिसमें धारा 437 और 439 भी सम्मिलित हैं । दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 167(2) के परंतुक का उद्देश्य और प्रयोजन विहित समय-सीमा के भीतर शीघ्रता से अन्वेषण करने और इस संबंध में शिथिलता को रोकने की आवश्यकता पर बल देना है । इसका उद्देश्य इसकी अत्यावश्यकता की भावना को मन में बैठाना है और व्यतिक्रम होने पर मजिस्ट्रेट अभियुक्त को, यदि वह जमानत देने के लिए तैयार है और दे देता है, छोड़ देगा । इस प्रकार, यह नहीं कहा जा सकता कि दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 167(2) के परंतुक के अधीन जमानत पर छोड़े जाने का आदेश गुणागुण के आधार पर दिया गया आदेश होता है । अभियुक्त को दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 167(2) के परंतुक के अधीन जमानत पर अभियोजन अभिकरण की असफलता के आधार पर छोड़ा जाता है । अत: धारा 167(2) के परंतुक के अधीन गृहीत कल्पना का निर्वचन गुणागुण के आधार पर पारित नहीं किए गए जमानत के आदेश को इस प्रकार संपरिवर्तित करने के लिए नहीं किया जा सकता, मानो यह गुणागुण के आधार पर पारित किया गया हो । उपरोक्त को ध्यान में रखते हुए, वर्तमान अपील में अंतवर्लित विवाद्यक पर विचार किए जाने की

आवश्यकता है ।

9. अंतर्वलित विवाद्यक पर विचार करते हुए **असलम बाबालाल देसाई** (उपर्युक्त) और **अब्दुल बासित** उर्फ **राजू और अन्य** (उपर्युक्त) वाले मामले में इस न्यायालय द्वारा की गई कुछ मताभिव्यक्तियों को निर्दिष्ट किया जाना अपेक्षित है । न्यायपीठ की ओर से निर्णय लिखते हुए न्यायमूर्ति ए. एम. अहमदी (जैसे वे उस समय थे) ने पैरा 14 और 15 में निम्नलिखित मत व्यक्त किया है :–

> "14. संक्षेप में हमारा सारांश इस प्रकार है –
>
> संहिता के उपबंधों विशिष्टत: धारा 57 और 167 के उपबंधों से यह विधायी उत्सुकता स्पष्ट होती है कि यदि एक बार किसी व्यक्ति की स्वतंत्रता में पुलिस द्वारा उसे न्यायालय के आदेश या वारंट के बिना गिरफ्तार करके हस्तक्षेप किया गया है, तो अन्वेषण अत्यधिक शीघ्रतापूर्वक और संहिता की धारा 167(2) के परंतुक (क) द्वारा अनुज्ञात अधिकतम अवधि के भीतर पूरा किया जाना चाहिए । यह बात याद रखी जानी चाहिए कि उक्त परंतुक को संहिता में उस समय-सीमा में वृद्धि किए जाने के लिए अंत:स्थापित किया गया था जिस सीमा तक गिरफ्तार किए गए व्यक्ति को अभिरक्षा में रखा जा सकता है । अत: अभियोजन अभिकरण को यह बात समझनी चाहिए कि यदि वह मामले के अन्वेषण में अत्यावश्यकता की भावना को दिखाने में असफल रहता है और विहित समय में आरोप पत्र फाइल नहीं करता है या उसमें व्यतिक्रम करता है, तो अभियुक्त व्यक्ति जमानत पर छोड़े जाने के लिए हकदार होगा और धारा 167(2) के अधीन इस आशय का पारित किया गया आदेश संहिता की धारा 437(1) या (2) अथवा धारा 439(1) के अधीन आदेश होगा । चूंकि धारा 167 जमानत के रद्दकरण के लिए सशक्त नहीं करती है इसलिए जमानत रद्द करने की शक्ति को केवल संहिता की धारा 437(5) या धारा 439(2) से मालूम किया जा सकता है । इस प्रकार, जमानत को ऐसी विचारणाओं के आधार पर रद्द किया जा सकता है जो संहिता की धारा 437(1) या (2) अथवा धारा 439(1) के अधीन मंजूर की गई

जमानत के रद्दकरण के लिए विधिमान्य हैं । यह तथ्य कि जमानत को पूर्व में नामंजूर कर दिया गया था या यह कि उसे संहिता की धारा 167(2) के परंतुक (क) के आधार पर प्राप्त किया गया है, तब वापस पृष्ठभूमि में चला जाता है । यदि एक बार अभियुक्त को जमानत पर छोड़ दिया जाता है, तो उसकी स्वतंत्रता में आसानी से अर्थात् इस आधार पर हस्तक्षेप नहीं किया जा सकता कि अभियोजन पक्ष ने बाद में आरोप पत्र प्रस्तुत कर दिया है । ऐसा दृष्टिकोण अन्वेषण अभिकरण में आत्म-संतोष की भावना पैदा करेगा और वह संहिता की धारा 57 और धारा 167(2) द्वारा प्रत्याशित अत्यावश्यकता की भावना पैदा करने के प्रयोजन को ही विफल कर देगा । अत: हमारा यह मत है कि यदि एक बार किसी अभियुक्त व्यक्ति को धारा 167(2) के अधीन जमानत पर छोड़ दिया जाता है, तो उसे केवल आरोप पत्र फाइल किए जाने के आधार पर पुन: अभिरक्षा में नहीं लिया जा सकता बल्कि इस तथ्य के अलावा कि आरोप पत्र से किसी अजमानतीय अपराध का किया जाना प्रकट होता है, ऐसा करने के लिए विशेष कारण अवश्य विद्यमान होने चाहिएं । अत: रजनीकांत वाले मामले [(1989) 3 एस. सी. सी. 532] का विनिश्चयाधार उस सीमा तक, जिस सीमा तक वह इससे असंगत है, ससम्मान विधि का सही वर्णन नहीं करता ।

15. जहां दो दृष्टिकोण संभव हों वहां भी, चूंकि यह मामला आपराधिक न्याय के क्षेत्र का है जिसमें किसी व्यक्ति की स्वतंत्रता अंतर्वलित होती है, इस उपबंध का अर्थान्वयन यथार्थत: व्यक्तिगत स्वतंत्रता के पक्ष में किया जाना चाहिए चूंकि विधि भी अन्वेषण को शीघ्र पूरा किए जाने की आशा करती है । अन्वेषण पूरा होने में विलंब के कारण अभियुक्त को जमानत पर छोड़े जाने के संबंध में परेशानी बढ़ सकती है । यदि अभियोजन पक्ष अन्वेषण पूरा करने के काम को गंभीरतापूर्वक नहीं लेता और उसे विधि द्वारा अनुज्ञात समय के भीतर पूरा नहीं करता, तो अभियोजन पक्ष को व्यक्तिगत स्वतंत्रता को तुच्छ समझने के लिए अनुज्ञात नहीं किया जा सकता । यदि अभियुक्त व्यक्ति से पहले कोई प्रतिभू ढूंढ़ने के लिए

कहा जाए और कुछ दिनों बाद उसे आरोप पत्र पेश किए जाने के आधार पर अभियोजन पक्ष की स्वेच्छा पर कारागार में डाल दिया जाए, तो इससे अभियुक्त व्यक्ति को परिहार्य कठिनाई पैदा होगी । अत: हमारा यह मत है कि जब तक जमानत के रद्दकरण के लिए प्रबल आधार न हों, तब तक एक बार मंजूर की गई जमानत को केवल आरोप पत्र प्रस्तुत किए जाने के आधार पर रद्द नहीं किया जा सकता । हम जो दृष्टिकोण अपना रहे हैं, वह बशीर वाले मामले [(1977) 4 एस. सी. सी. 410] और रघुबीर वाले मामले [(1986) 4 एस. सी. सी. 481] में इस न्यायालय के दृष्टिकोण से संगत है किंतु यदि रजनीकांत वाले मामले [(1989) 3 एस. सी. सी. 532] में व्यक्त किए गए कतिपय विचारों के कारण कोई संदिग्धता उत्पन्न हुई है तो हमारा प्रयास उसे दूर करना है और विवाद को हमेशा के लिए सुलझाना है ।"

9.1 न्यायमूर्ति के. रामास्वामी (जैसे वे उस समय थे) ने अपने सम्मत निर्णय के पैरा 39 और 40 में निम्नलिखित मत व्यक्त किया :–

"39. इसमें कोई संदेह नहीं है कि संहिता की धारा 167(2) के परंतुक के प्रवर्तन के आधार पर अभियुक्त व्यक्ति अन्वेषण अधिकारी द्वारा अन्वेषण पूरा करने और आरोप पत्र को 90/60 दिन की विहित अवधि के भीतर प्रस्तुत करने में व्यतिक्रम करने के कारण जमानत के लिए हकदार है, न कि गुणागुण के आधार पर । परंतुक के अधीन विधिक कल्पना को अध्याय 33 के उपबंधों को लागू करते हुए विधि के प्रयोजन की पूर्ति करना है अर्थात् केवल इतना ही नहीं कि अभियुक्त को अपेक्षित बंधपत्र लेकर और उक्त अध्याय में परिकल्पित किए गए अनुसार उसमें सम्मिलित की गई शर्तों पर छोड़ दिया जाएगा बल्कि न्यायालय को संहिता की धारा 437(5) और धारा 439(2) के सुसंगत उपबंधों में उल्लिखित आधारों पर जमानत को रद्द करने और अभियुक्त को निरोध में लेने संबंधी शक्ति भी है । विधानमंडल पुरानी संहिता की धारा 167 की उपधारा (2) में परिकल्पित किए गए अनुसार 15 दिन के भीतर आरोप पत्र फाइल न किए जाने की पूर्व विद्यमान स्थिति

और उसके परिणामों से अवगत था । पुरानी संहिता की धारा 344 और वर्तमान संहिता की धारा 309 के अधीन प्रतिप्रेषण का आदेश प्राप्त करने पर अतिरिक्त निरोध की ईप्सा करने की संदेहजनक प्रक्रिया को समाप्त कर दिया गया और यदि परिस्थितियां अभियुक्त को अभिरक्षा में लेने की पुष्टि करती हों तो जमानत को रद्द करने संबंधी न्यायालय की शक्ति को सुरक्षित रखा गया है । इस न्यायालय ने सबसे पहले माताबार परिडा वाले मामले [(1975) 2 एस. सी. सी. 220] में भी इस तथ्य की अवेक्षा की है कि धारा 167(2) के परंतुक के अधीन भी यह संभव न हो पाए कि परंतुक में उपवर्णित समय की अधिकतम सीमा के भीतर गंभीर अपराधों का अन्वेषण पूरा किया जा सके । 90/60 दिन के समाप्त होने पर अभियुक्त को उस दशा में, यदि अभियुक्त जमानत देने के लिए तैयार है और दे देता है, निरोध से छोड़े जाने संबंधी इस कानूनी चेतना को ध्यान में रखते हुए इसके परिणाम अपरिहार्य हैं और इस प्रकार छोड़ा जाना अपराधियों के लिए किसी न्यायिक आज्ञा के कारण नहीं अपितु विधायी समादेश के कारण एक प्रकार से कानूनी स्वर्ग होगा ।

40. निर्वचन का प्रयोजन विधि को कायम रखना है । न्यायालय को कानून के शब्दों या भाषा का निर्वचन सार्वजनिक भलाई की अभिवृद्धि करने के लिए किया जाना चाहिए और शक्ति का दुरुपयोग प्रतिषिद्ध है । दंड विधि का मुख्यत: संबंध सामाजिक सुरक्षा से है और उसमें आचरण संबंधी ऐसे नियम विहित किए गए हैं जिनका सभी के द्वारा अनुपालन किया जाना चाहिए । विधि कानून का उल्लंघन, तोड़ने, अतिक्रमण या लोप करने वालों को दंड देती है । व्यक्ति की स्वतंत्रता और समाज में सुरक्षा और व्यवस्था अथवा लोक व्यवस्था नाजुक विषय हैं किंतु इस पर भी वे सर्वोपरि विचारणाएं हैं । इनमें से किसी पर भी असम्यक् जोर दिए जाने से एकता में अड़चन पड़ेगी और सार्वजनिक भलाई में बाधा उत्पन्न होगी और साथ ही इससे सामाजिक समृद्धि और शांति विक्षुब्ध होगी । इसमें संतुलन बनाए रखना न्यायपालिका का परम कर्तव्य होना चाहिए । संहिता के अध्याय 33 के साथ पठित धारा 167(2)

के परंतुक का प्रयोजन पुलिस अधिकारियों द्वारा विहित परिसीमा के भीतर अन्वेषण को शीघ्रातिशीघ्र पूरा करने की आवश्यकता और इस निमित्त स्थिरता को रोकने पर जोर दिया जाना है । पुलिस अधिकारियों द्वारा व्यतिक्रम किए जाने पर मजिस्ट्रेट अभियुक्त को जमानत पर उस स्थिति में छोड़ देगा यदि अभियुक्त जमानत देने के लिए तैयार है और दे देता है । साथ ही अन्वेषण या विचारण के दौरान जमानत को रद्द करने और अभियुक्त को अभिरक्षा में लेने संबंधी न्यायालय की शक्ति को सुरक्षित रखा गया है । किंतु जैसा कि इस न्यायालय द्वारा निर्वचन किया गया है, उत्प्रेरक कार्य घटित होने पर अर्थात् 90/60 दिन की अवधि समाप्त होने पर अभियुक्त को व्यतिक्रम के आधार पर छोड़ दिया जाएगा । आरोप पत्र (चालान) का बाद में फाइल किया जाना अपने आप में जमानत को रद्द किए जाने या अभियुक्त को विचारण के लिए सुपुर्द करने या अपराध का संज्ञान करने के लिए सुसंगत नहीं है । जैसा कि इस न्यायालय द्वारा बशीर [(1977) 4 एस. सी. सी. 410] और रघुबीर [(1986) 4 एस. सी. सी. 481] वाले मामलों में जोर दिया गया है, आरोप पत्र (चालान) फाइल करके इस दोष को दूर करने के बाद यदि अभियोजन पक्ष जमानत को इस आधार पर रद्द कराने की ईप्सा करता है कि यह विश्वास करने के लिए युक्तियुक्त आधार है कि अभियुक्त ने अजमानतीय अपराध किया है और उसे प्रथमदृष्ट्या उस प्रक्रम पर गिरफ्तार करना और अभिरक्षा में सुपुर्द करना आवश्यक है तो इसके लिए निस्संदेह दृढ़ आधार होना आवश्यक है । आरोप पत्र फाइल करने के पश्चात् जमानत के रद्दकरण के लिए पूर्वोत्तर अवसर पर जमानत के नामंजूर किए जाने का तथ्य सुसंगत नहीं है । किंतु अन्वेषण के दौरान प्रथम दृष्टया प्रबल साक्ष्य और अपराध की गंभीरता तथा गुरुता अथवा वह रीति जिसमें अपराध किया गया है और अन्य परिस्थितियां जमानत को रद्द किए जाने के लिए नए सिरे से विचार करने हेतु प्रथम दृष्टया आधार के रूप में सुसंगत हो सकते हैं । अध्याय 33 में जमानत के रद्दकरण के लिए आधार मामले के गुणागुण से असंबद्ध हैं अर्थात् अभियुक्त के आचरण के कारण आवश्यकता और

स्वतंत्रता का दुरुपयोग अर्थात् सुचारु अन्वेषण में बाधा पहुंचाना अथवा साक्षियों को डराने-धमकाने या साक्ष्य को बिगाड़ने का प्रयास करना या साक्षियों को गंभीर परिणामों की धमकी देना या सुचारु विचारण में बाधा पहुंचाने के लिए स्वयं को न्यायालय की पहुंच से बाहर करना या उसका प्रयास करना आदि बातें मामले के गुणागुण से अलग हैं । जमानत रद्द किए जाने की आवश्यकता अभियुक्त के छोड़े जाने के पश्चात् स्वयं उसके आचरण के कारण भी पड़ सकती है । मैं विद्वान् बंधु न्यायमूर्ति पंछी की इस बात से सहमत हूं कि अभियुक्त को जमानत पर छोड़े जाने को सुकर बनाने के लिए अन्वेषण पूरा करने में जानबूझकर विलंब करते हुए परंतुक का दुरुपयोग किया जाना संभव है । मैं इस बात से भी सहमत हूं कि आरोप पत्र में उपवर्णित की गई बातें और अन्य परिस्थितियां सुसंगत हैं क्योंकि न्यायालय द्वारा जमानत गुणागुण का उल्लेख किए बिना अन्वेषण अधिकारी द्वारा व्यतिक्रम किए जाने के कारण मंजूर की गई थी किंतु जमानत को रद्द करने के लिए दृढ़ आधार आवश्यक हैं । इस सीमा तक विद्वान् बंधु न्यायमूर्ति अहमदी ने भी इस बात पर जोर दिया है अर्थात् यह कि आरोप पत्र में दृढ़ आधार सिद्ध किए जाने चाहिएं । ससम्मान मैं विद्वान् बंधु न्यायमूर्ति अहमदी द्वारा इस पर जोर दिए जाने की बात से भी सहमत हूं कि आरोप पत्र (चालान) का फाइल किया जाना अपने आप में पर्याप्त नहीं है । तथापि, मैं इस बात पर जोर देना चाहूंगा कि उच्च न्यायालय या सेशन न्यायालय को मामले के गुणागुण पर विचार करना चाहिए । ससम्मान न्यायमूर्ति के. जे. शेट्टी ने आरोप पत्र के बाद में फाइल किए जाने और संहिता की धारा 437 और 439 के अधीन जमानत को रद्द किए जाने की शक्ति पर जोर दिया है । दुर्भाग्यवश, परिडा [(1975) 2 एस. सी. सी. 220] और बशीर [(1977) 4 एस. सी. सी. 410] वाले मामलों के विनिश्चयाधार विद्वान् न्यायाधीशों की जानकारी में नहीं लाए गए थे जिनका इस प्रश्न से सीधा संबंध है और ऊपर कथित कारणों के आधार पर मैं इस बाबत विद्वान् न्यायाधीश के साथ सहमत होने में कठिनाई पाता हूं । मैं विद्वान् बंधु न्यायमूर्ति अहमदी द्वारा

व्यक्त किए गए विचारों और उनके द्वारा प्रस्थापित आदेश से पूर्ण सहमत हूं ।"

9.2 न्यायमूर्ति के. रामास्वामी (जैसे वे उस समय थे) ने सम्मत निर्णय में न्यायमूर्ति एम. एम. पंछी (जैसे वे उस समय थे) द्वारा विसम्मत निर्णय में की गई इन कुछ मताभिव्यक्तियों से सम्मति व्यक्त की थी कि अभियुक्त को जमानत पर छोड़े जाने को सुकर बनाने के लिए अन्वेषण को पूरा करने में जानबूझकर विलंब करके दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 167(2) के परंतुक का दुरुपयोग किया जाना संभव है । तथापि, उसके पश्चात् इस मत से सहमति व्यक्त की कि आरोप पत्र में उल्लिखित गुणागुण और विद्यमान परिस्थितियां सुसंगत हैं क्योंकि न्यायालय द्वारा जमानत गुणागुण का उल्लेख किए बिना अन्वेषण अधिकारी के व्यतिक्रम के कारण मंजूर की गई थीं किंतु जमानत रद्द करने के लिए दृढ़ आधार आवश्यक हैं और केवल आरोप पत्र फाइल कर देना ही पर्याप्त नहीं है ।

9.3 न्यायमूर्ति एम. एम. पंछी (जैसे वे उस समय थे) ने अपने विसम्मत निर्णय के पैरा 23, 25, 26, 27 और 28 में निम्नलिखित मत व्यक्त किया है :–

> "23. इस परिस्थिति मात्र से कि धारा 167(2) यह आदेश करती है कि इस उपधारा के अधीन जमानत पर छोड़ा गया प्रत्येक व्यक्ति अध्याय 33 के प्रयोजनों के लिए उक्त अध्याय के उपबंधों के अधीन छोड़ा गया समझा जाएगा, से स्वयमेव यह अभिप्रेत नहीं है कि जमानत का आदेश गुणागुण के आधार पर ऐसे जमानत के आदेशों की अंतर्वस्तु और स्वरूप ग्रहण कर लेता है जिसकी परिकल्पना संहिता की धारा 437 की उपधारा (1) और (2) या धारा 439 की उपधारा (1) में की गई है । धारा 167(2) की आभासी अपेक्षा ऐसे व्यक्ति की जमानत पर निर्मुक्ति को ऐसा मानती है मानो वह अध्याय 33 के उपबंधों के अधीन और केवल उक्त अध्याय के प्रयोजनों के लिए है । दूसरे शब्दों में, इससे यह अभिप्रेत है कि इस कल्पना के कारण इस उपबंध को अध्याय 33 के एक भाग के रूप में पढ़ा जाएगा जिससे कि उक्त अध्याय के

प्रयोजनों की पूर्ति हो सके, जैसे कि बंधपत्र फाइल किया जाना, प्रतिभू आदि की व्यवस्था करना और साथ ही जमानत का रद्दकरण अनुज्ञात करना । इसी समावेश के आधार पर धारा 437(5) के अधीन रद्दकरण के लिए इस प्रकार प्रयास किया जा सकता है मानो कल्पनात्मक रूप से ऐसी जमानत का आदेश धारा 437 की उपधारा (1) और (2) के अधीन पारित किया गया था किंतु ऐसी विचारणाओं के आधार पर नहीं है मानो जमानत का आदेश गुणागुण के आधार पर किया गया था । इस प्रकार कि कल्पना को किसी जमानत के आदेश को, जो गुणागुण के आधार पर पारित न किया गया हो, गुणागुण के आधार पर पारित किए गए आदेश के रूप में संपरिवर्तित किए जाने के लिए अनुज्ञात नहीं किया जा सकता ।

* * * *

25. जिन शब्दों पर जोर दिया गया है वे इस दृष्टिकोण को प्रतिबिम्बित करते हैं कि यह न्यायालय चालान फाइल कर दिए जाने के पश्चात् के प्रक्रम पर भी यह मत अपना सकता है कि यह दृष्टिकोण अपनाए जाने के लिए पर्याप्त आधार प्रतीत होते हैं कि अभियुक्त ने अजमानतीय अपराध कारित किया था और यह आवश्यक है कि उसे गिरफ्तार किया जाए और अभिरक्षा में सुपुर्द किया जाए । रद्दकरण के लिए ऊपर उल्लिखित आधार के अलावा भी, जो व्यतिक्रम के आधार पर आदेश पारित करने के लिए अकेला ही पर्याप्त और विशेष है, न्यायालय ऐसे व्यक्ति को अन्य आधारों पर जिन पर न्यायिक रूप से विचार किया गया हो और अन्य सुसंगत आधारों पर, जैसे कि साक्ष्य बिगाड़ना आदि, उसे गिरफ्तार कर सकता है और अभिरक्षा में सुपुर्द कर सकता है । बाद में उल्लिखित किए गए आधार वे आधार हैं, जिन पर सामान्यतया न्यायालय द्वारा धारा 437(5) के अधीन किसी गुणागुण के आधार पर दी गई जमानत को रद्द करते समय विचार में लिया जाता है जबकि यथार्थत: वह धारा 437 की उपधारा (1) और (2) के अधीन गुणागुण के आधार पर मंजूर की जा चुकी है ।

किंतु धारा 167(2) के आधार पर अध्याय 33 के अधीन आभासी जमानत मुझे एक भिन्न आधार पर आधारित होना प्रतीत होती है जो जमानत के रद्दकरण के लिए न केवल सर्वविदित आधारों पर ही बल्कि न्यायालय द्वारा यह दृष्टिकोण अपनाए जाने के विशेष आधार पर भी जमानत के रद्दकरण अनुज्ञात करती है कि इस बात के पर्याप्त आधार हैं कि अभियुक्त ने अजमानतीय अपराध किया है और यह आवश्यक है कि उसे गिरफ्तार किया जाए और अभिरक्षा में सुपुर्द किया जाए । बसीर वाले मामले [(1977) 4 एस. सी. सी. 410] में व्यक्त इस आभासी भिन्नता का अवलंब केवल उस समय लिया जाता है यदि यह समझा जाता हो कि धारा 167(2) के अधीन जमानत आदेश मानो धारा 437 की उपधारा (1) और (2) के अधीन गुणागुण के आधार पर किया गया आदेश है । किंतु जैसा कि मुझे प्रतीत होता है, जब इस कल्पना का विस्तार किसी जमानत आदेश को अध्याय 33 के अधीन और वह भी उक्त अध्याय के अभिन्न अंग के रूप में धारा 167(2) के उपबंधों के साथ पठित धारा 437 की उपधारा (1) और (2) के अधीन पारित किए गए जमानत आदेश के रूप में माने जाने तक होता है जिससे कि जमानत आदेश व्यतिक्रम के आधार पर पारित किया गया आदेश बना रहता है न कि गुणागुण के आधार पर पारित किया गया आदेश, तब यह प्रवृत्ति गायब हो जाती है । इस पर भी यदि इस पहलू की उपेक्षा कर दी जाए तो भी बसीर वाले मामले [(1977) 4 एस. सी. सी. 410] में संहिता की धारा 437 की उपधारा (1) और (2) के अधीन मंजूर किए गए जमानत के रद्दकरण के लिए अन्य सर्वविदित आधारों के अलावा धारा 167(2) के अधीन मंजूर की गई जमानत के रद्दकरण के लिए एक एकल और विशेष आधार जोड़ा गया है । उस स्थिति में लागू होने वाला उपबंध इस बात के अतिरिक्त कि न्यायालय के पास अन्य कोई उपबंध नहीं है, उपबंध के पाठ के होते हुए भी, पुन: संहिता की धारा 437(5) है ।

26. जमानत के रद्दकरण के लिए सर्वविदित आधारों के

अलावा संहिता की धारा 167(2) के अधीन मंजूर की जा चुकी जमानत के रद्दकरण के लिए ऐसे विशेष आधार के अस्तित्व की रघुबीर सिंह और अन्य **बनाम** बिहार राज्य [(1986) 4 एस. सी. सी. 481] वाले मामले में इस न्यायालय की दो सदस्यीय न्यायपीठ के विनिश्चय में पुन: पुष्टि की गई है और पुनरावृत्ति की गई है । उक्त मामले में पृष्ठ 826 पर (एस. सी. सी. पृ. 502, पैरा 22) इस न्यायालय ने यह मत व्यक्त किया है :–

> 'जहां 60 दिन के भीतर अन्वेषण पूरा करने में अभियोजन पक्ष के व्यतिक्रम के कारण धारा 167(2) के परंतुक के अधीन जमानत मंजूर की गई है, वहां आरोप पत्र फाइल करके दोष को दूर करने के बाद अभियोजन पक्ष इस आधार पर जमानत को रद्द करने की मांग कर सकता है कि यह विश्वास करने के लिए युक्तियुक्त कारण हैं कि अभियुक्त ने अजमानतीय अपराध किया है और उसे गिरफ्तार करना और अभिरक्षा में भेजना आवश्यक है । अंतिम वर्णित स्थिति में वस्तुत: बहुत दृढ़ आधार होने चाहिएं ।'

इस संदर्भ में निर्दिष्ट दृढ़ आधार स्पष्टत: मामले के गुणागुण पर आधारित आधार हैं जो उस चालान में जिसका अभियुक्त को विचारण के समय सामना करना है, लगाए गए प्ररूपिक अभियोग से प्रतिबिम्बित होते हैं ।

27. रघुबीर सिंह वाले मामले [(1986) 4 एस. सी. सी. 481] का रजनीकांत जीवनलाल और एक अन्य **बनाम** आसूचना अधिकारी, स्वापक नियंत्रण ब्यूरो, नई दिल्ली [(1989) 3 एस. सी. सी. 532] वाले मामले में इस न्यायालय के अवकाश न्यायाधीश के विनिश्चय में अवलंब लिया गया था । उक्त निर्णय के पृष्ठ 536 (एस. सी. सी. पृ. 536, पैरा 13 और 14) पर इस प्रकार मत व्यक्त किया गया है –

> 'धारा 167(2) के परंतुक (क) के अधीन जमानत पर छोड़े जाने के आदेश को समुचित रूप से व्यतिक्रम के आधार

पर आदेश कहा जा सकता है । वास्तव में, यह विहित कालावधि के भीतर आरोप पत्र फाइल करने में अभियोजन पक्ष के व्यतिक्रम के लिए जमानत पर छोड़ा जाना है । धारा 167(2) के परंतुक (क) के अधीन जमानत का अधिकार आत्यांतिक है । यह विधायी आदेश है न कि न्यायालय का विवेकाधिकार । यदि अन्वेषण अभिकरण, यथास्थिति 90/60 दिन की समाप्ति से पूर्व आरोप पत्र फाइल करने में असफल रहता है तो अभिरक्षा में के अभियुक्त को जमानत पर छोड़ा जाना चाहिए । किंतु इस प्रक्रम पर, मामले के गुणागुण की परीक्षा नहीं की जाती । ऐसा कदापि नहीं किया जाना चाहिए । वास्तव में, मजिस्ट्रेट को 90/60 की नियत कालावधि से आगे किसी व्यक्ति को प्रतिप्रेषित करने की किसी प्रकार की शक्ति नहीं है । उसे जमानत का आदेश पारित करना चाहिए और अपेक्षित जमानत बंधपत्र प्रस्तुत करने के लिए इसे अभियुक्त को संसूचित करना चाहिए ।

अत: अभियुक्त जमानत पर रहने का इसी प्रकार का विशेष अधिकार प्राप्त करने का दावा नहीं कर सकता । यदि अन्वेषण से यह प्रकट होता है कि अभियुक्त ने गंभीर अपराध किया है और आरोप पत्र फाइल कर दिया जाता है तो धारा 167(2) के परंतुक (क) के अधीन मंजूर की गई जमानत रद्द की जा सकती है ।'

28. ऊपर चर्चित निर्णयज विधि के विश्लेषण के आधार मैं अपेक्षाकृत इस निष्कर्ष पर पहुंचा हूं कि संहिता की धारा 167(2) के अधीन न्यायालय द्वारा किए गए बाध्यताकारी जमानत आदेश में गुणागुण के आधार पर पारित आदेश न होने के कारण उस समय जब उसे चालान फाइल किए जाने के पश्चात् रद्द किए जाने की अपेक्षा की जाए, गुणागुण के आधार पर किए गए किसी विनिश्चय के पुनर्विलोकन का तत्व अंतर्वलित नहीं होगा । यदि न्यायालय के पास यह विश्वास करने का कारण है कि अभियुक्त ने अजमानतीय अपराध किया है और यह आवश्यक है कि उसे

गिरफ्तार किया जाए और अभिरक्षा में सुपुर्द किया जाए, तो ऐसी जमानत रद्द की जा सकेगी । गुणागुण के आधार पर जमानत मंजूर करने अथवा नामंजूर करने का अवसर चालान फाइल किए जाने के पश्चात् न्यायालय को उपलब्ध होता है क्योंकि इससे पहले जमानत के गुणागुण की बात कोई बाध्यताकारी जमानत मंजूर किए जाने के समय उत्पन्न नहीं हो सकती । प्रत्येक स्थिति में न्यायालय का उद्देश्य एक न्यायिक संतुलन बनाए रखना होता है जो अन्य बातों के साथ-साथ व्यक्तिगत स्वतंत्रता के दावों और राज्य के व्यापक हित को ध्यान में रखते हुए स्थिति की अत्यावश्यकता पर निर्भर होता है । इस बात की उपेक्षा नहीं की जा सकती कि संहिता की धारा 167(2) के अधीन जमानत आदेश किसी सुविधाजनक अन्वेषण अधिकारी के माध्यम से भी प्राप्त किया जा सकता है, चाहे अपराध कितना ही जघन्य क्यों न हो । न्यायालय को विधि के आदेशों के अधीन जमानत मंजूर करनी होगी और उसे उस प्रक्रम पर मामले के गुणागुण पर विचार नहीं करना होता । यह कहना कि इसके बाद न्यायालय को कभी मामले के गुणागुण पर विचार करना नहीं होता हालांकि उसे अन्यथा जमानत रद्द करने की शक्ति है, उसे न्याय का प्रशासन करने और दावों को पक्षकारों के बीच गुणागुण के आधार पर तोलने से वंचित करना होगा । मैं ऐसे निर्वचन की अपेक्षा करना चाहूंगा क्योंकि इससे न्याय विफल होगा और साथ ही इससे न्यायालय को ऐसी स्थिति में मामले की एक बार गुणागुण के आधार पर परीक्षा कर चुकने के कारण जमानत को रद्द करने की शक्ति होगी ।"

अत: न्यायमूर्ति पंछी ने भी अन्य माननीय न्यायाधीशों से यह दृष्टिकोण अपनाते हुए सम्मति व्यक्त की थी कि दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 167 की उपधारा (2) के अधीन जमानत पर छोड़े गए प्रत्येक व्यक्ति को अध्याय 33 के उपबंधों के अधीन इस अध्याय के प्रयोजनों के लिए छोड़ा गया समझा जाएगा और इसका स्वयमेव यह अर्थ नहीं है कि जमानत आदेश दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 437 की उपधारा (1) और (2) या धारा 439 की उपधारा (1) में कल्पित प्रकार के गुणागुण के आधार पर

जमानत आदेशों की अंतर्वस्तु और स्वरूप धारण कर लेता है ।

9.4 इस प्रकार, **असलम बाबालाल देसाई** (उपर्युक्त) वाले मामले में इस न्यायालय द्वारा अधिकथित विधि के अनुसार (i) दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 167(2) के अधीन व्यतिक्रम जमानत पर अभियुक्त को गुणागुण के आधार पर नहीं छोड़ा जाता है अपितु अन्वेषण अभिकरण द्वारा इसमें विहित अनुबंधित सीमा के भीतर अन्वेषण पूरा करने और आरोप पत्र फाइल करने में असफलता के आधार पर छोड़ा जाता है ;

(ii) दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 167(2) के अधीन जमानत पर छोड़े गए प्रत्येक व्यक्ति को दंड प्रक्रिया संहिता के अध्याय 33 के उपबंधों के अधीन छोड़ा गया समझा जाएगा, जिसमें धारा 437(5) और धारा 439(2) सम्मिलित हैं ;

(iii) किसी व्यक्ति के पक्ष में जमानत को, जिसे दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 167(2) के अधीन व्यतिक्रम जमानत पर छोड़ा जाता है, केवल आरोप पत्र फाइल करने के आधार पर रद्द नहीं किया जा सकता किंतु इसे यह विशेष और प्रबल आधार सिद्ध करने पर रद्द किया जा सकता है कि आरोप पत्र से अजमानतीय अपराध का किया जाना प्रकट होता है ।

9.5 **अब्दुल बासित** उर्फ **राजू और अन्य** (उपर्युक्त) वाले मामले में **असलम बाबालाल देसाई** (उपर्युक्त) वाले मामले में इस न्यायालय के विनिश्चय पर विचार करने के पश्चात् पैरा 13 और 14 में यह मत व्यक्त और अभिनिर्धारित किया गया है :–

> "13. यह अति सामान्य बात है कि धारा 167(2) एक गृहीत कल्पना का सृजन करती है जिसके द्वारा किसी व्यक्ति को छोड़ा जाना संहिता के अध्याय 33 के अधीन उसको छोड़े जाने के समान है । तथापि, धारा 167(2) के परंतुक (क) के अधीन जमानत पर छोड़े जाने का आदेश गुणागुण के आधार पर आदेश नहीं होता है बल्कि अभियोजन अभिकरण के व्यतिक्रम के आधार पर किया गया आदेश होता है । ऐसे आदेश को दोष/व्यतिक्रम को ठीक करने के पश्चात् विशेष कारणों से अकृत किया जा सकता है । अत: अभियुक्त जमानत पर रहने के लिए किसी विशेष अधिकार का

दावा नहीं कर सकता । यदि अन्वेषण से यह प्रकट होता है कि अभियुक्त ने गंभीर अपराध किया है और आरोप पत्र फाइल किया जाता है, तो धारा 167(2) के परंतुक (क) के अधीन मंजूर की गई जमानत को अभियोजन अभिकरण द्वारा आवेदन करने पर रद्द किया जा सकता है ।

14. अध्याय 33 के अधीन धारा 439(1) में उच्च न्यायालय तथा सेशन न्यायालय को किसी अभियुक्त व्यक्ति को जमानत पर छोड़े जाने का निदेश देने के लिए सशक्त किया गया है । धारा 439(2) में उच्च न्यायालय को ऐसे किसी व्यक्ति को, जिसे संहिता के अध्याय 33 के अधीन जमानत पर छोड़ा गया है, गिरफ्तार किए जाने और अभिरक्षा में सुपुर्द किए जाने का निदेश देने के लिए सशक्त किया गया है अर्थात् अभियुक्त व्यक्ति को मंजूर की गई जमानत को रद्द करने की शक्ति है । आमतौर पर जमानत को रद्द करने के आधार मोटे तौर पर ये हैं (i) अभियुक्त अपनी स्वतंत्रता का वैसे ही आपराधिक क्रियाकलाप में लगा रहकर दुरुपयोग करता है, (ii) अन्वेषण की प्रक्रिया में हस्तक्षेप करता है, (iii) साक्ष्य या साक्षियों को तोड़ने का प्रयास करता है, (iv) साक्षियों को डराता है अथवा ऐसे ही क्रियाकलाप में लगा रहता है जो सुचारु अन्वेषण में बाधा उत्पन्न कर सकते हैं, (v) उसके किसी अन्य देश में भाग जाने की संभावना है, (vi) भूमिगत होकर या अन्वेषण अभिकरण के लिए उपलब्ध न होकर स्वयं चंपत हो जाने का प्रयत्न करता है, (vii) स्वयं को अपने प्रतिभू की पहुंच से परे रखने का प्रयास करता है, आदि । ये आधार दृष्टांतस्वरूप हैं, नि:शेष नहीं । जहां 60 दिन के भीतर अन्वेषण पूरा करने में अभियोजन पक्ष के व्यतिक्रम के कारण धारा 167(2) के परंतुक के अधीन जमानत मंजूर की गई है, वहां आरोप पत्र फाइल करके दोष को दूर करने के बाद अभियोजन पक्ष इस आधार पर जमानत रद्द करने की ईप्सा कर सकता है कि यह विश्वास करने के लिए उपयुक्त कारण हैं कि अभियुक्त ने अजमानतीय अपराध किया है और यह आवश्यक है कि उसे गिरफ्तार किया जाए और अभिरक्षा सुपुर्द

किया जाए । तथापि, अंतिम वर्णित स्थिति में वस्तुत: बहुत दृढ़ आधार होने चाहिएं ।"

9.6 अब, जहां तक प्रत्यर्थी-मूल अभियुक्त सं. 1 की ओर से हाजिर होने वाले विद्वान् ज्येष्ठ काउंसेल द्वारा **मोहम्मद इकबाल मदार शेख और अन्य** (उपर्युक्त) वाले मामले में इस न्यायालय के विनिश्चय का अवलंब लेने का संबंध है, आरंभ में यह उल्लेख किया जाना आवश्यक है कि उक्त विनिश्चय में इस न्यायालय ने **असलम बाबालाल देसाई** (उपुर्यक्त) वाले मामले में अपनाए गए दृष्टिकोण की बनिश्वत एक प्रतिकूल दृष्टिकोण नहीं अपनाया था । **मोहम्मद इकबाल मदार शेख और अन्य** (उपर्युक्त) वाले मामले में, अभियुक्त को व्यतिक्रम जमानत पर छोड़े जाने से इनकार करने का मामला था । अभियुक्त को व्यतिक्रम जमानत पर छोड़ते हुए उसके पश्चात् इस न्यायालय ने यह मत व्यक्त किया कि यदि अभियुक्त को अन्वेषण पूरा करने में व्यतिक्रम के कारण जमानत पर छोड़ा जाता है, तब जब तक आरोप पत्र फाइल नहीं किया जाता है, ऐसे अभियुक्त को जमानत मंजूर करने के आदेश को रद्द नहीं किया जा सकता । तथापि, उसके पश्चात् पैरा 10 में यह मत व्यक्त किया गया कि ऐसे अभियुक्त की जमानत को, जिसे अन्वेषण पूरा करने के लिए अन्वेषण अधिकारी की ओर से किए गए व्यतिक्रम के कारण छोड़ा गया है, रद्द किया जा सकता है किंतु केवल इस आधार पर नहीं कि छोड़े जाने के पश्चात् ऐसे अभियुक्त के विरुद्ध किसी अपराध के लिए आरोप पत्र प्रस्तुत कर दिया गया है । उसके पश्चात्, यह भी मत व्यक्त किया गया कि जमानत रद्द करने के लिए, जैसा कि इस न्यायालय द्वारा **असलम बाबालाल देसाई** (उपर्युक्त) वाले मामले में मत व्यक्त किया गया है, जमानत के रद्दकरण के संबंध में सुस्थिर सिद्धांतों को सिद्ध किया जाना चाहिए । अत: **मोहम्मद इकबाल मदार शेख और अन्य** (उपर्युक्त) वाले मामले में इस न्यायालय द्वारा की गई मताभिव्यक्तियों से भी केंद्रीय अन्वेषण ब्यूरो की ओर से इस पक्षकथन का समर्थन होता है कि जमानत मंजूर करने वाले आदेश को दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 437(1) या (2) अथवा धारा 439(1) के अधीन किया गया समझा जाएगा और उस आदेश को तब रद्द किया जा सकता है जब दंड प्रक्रिया

संहिता की धारा 437(5) या 439(2) के अधीन रद्दकरण का मामला सिद्ध किया जाता है ।

9.7 इस प्रकार, जब आरोप पत्र से विशेष कारण/आधार सिद्ध हो रहे हों और आरोप पत्र से एक अजमानतीय अपराध कारित किया जाना प्रकट होता है, तो ऐसे व्यक्ति के पक्ष में जमानत को, जिसे दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 167(2) के अधीन व्यतिक्रम जमानत पर छोड़ा गया है, दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 437(5) और धारा 439(2) पर विचार करते हुए रद्द किया जा सकता है ।

9.8 जमानत के रद्दकरण के लिए विशेष आधार किसे कहा जा सकता है, दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 167(2) के अधीन मंजूर की गई जमानत के रद्दकरण के लिए सुपरिचित आधारों के अतिरिक्त **रघुबीर सिंह और अन्य** बनाम **बिहार राज्य**[1] वाले मामले में इस न्यायालय द्वारा विचार किया गया है । पैरा 22 में यह मत व्यक्त और अभिनिर्धारित किया गया है :–

> "22. ..... जहां 60 दिन के भीतर अन्वेषण पूरा करने में अभियोजन पक्ष के व्यतिक्रम के कारण धारा 167(2) के परंतुक के अधीन जमानत मंजूर की गई है, वहां आरोप पत्र फाइल करके दोष को दूर करने के बाद अभियोजन पक्ष इस आधार पर जमानत को रद्द करने की मांग कर सकता है कि यह विश्वास करने के लिए युक्तियुक्त कारण हैं कि अभियुक्त ने अजमानतीय अपराध किया है और उसे गिरफ्तार करना और अभिरक्षा में भेजना आवश्यक है । अंतिम वर्णित स्थिति में वस्तुत: बहुत दृढ़ आधार होने चाहिएं ।"

9.9 **रघुबीर सिंह और अन्य** (उपर्युक्त) वाले मामले में के विनिश्चय का इस न्यायालय द्वारा **रजनीकांत जीवनलाल और एक अन्य** बनाम **आसूचना अधिकारी, स्वापक नियंत्रण ब्यूरो, नई दिल्ली**[2] वाले मामले में अनुसरण किया गया है, जिसमें पैरा 13 और 14 में निम्नलिखित मत व्यक्त और अभिनिर्धारित किया गया है :–

---

[1] [1987] 1 उम. नि. प. 244 = (1986) 4 एस. सी. सी. 481.

[2] (1989) 3 एस. सी. सी. 532.

"13. धारा 167(2) के परंतुक (क) के अधीन जमानत पर छोड़े जाने के आदेश को समुचित रूप से व्यतिक्रम की बाबत आदेश कहा जा सकता है । वास्तव में यह विहित कालावधि के भीतर आरोप पत्र फाइल करने में अभियोजन पक्ष के व्यतिक्रम के लिए जमानत पर छोड़ा जाना है । धारा 167(2) के परंतुक (क) के अधीन जमानत का अधिकार आत्यंतिक है । यह विधायी आदेश है न कि न्यायालय का विवेकाधिकार । यदि अन्वेषण अभिकरण, यथास्थिति, 90/60 दिन की समाप्ति से पूर्व आरोप पत्र फाइल करने में असफल रहता है तो अभिरक्षा में के अभियुक्त को जमानत पर छोड़ा जाना चाहिए । किंतु इस प्रक्रम पर मामले के गुणागुण की परीक्षा नहीं की जाती । ऐसा कदापि नहीं किया जाना चाहिए । वास्तव में, मजिस्ट्रेट को 90/60 दिन की नियत कालावधि से आगे किसी व्यक्ति को प्रतिप्रेषित करने की किसी प्रकार की शक्ति नहीं है । उसे जमानत का आदेश पारित करना चाहिए और अपेक्षित जमानत बंधपत्र प्रस्तुत करने के लिए इससे अभियुक्त को संसूचित करना चाहिए ।

14. अत: अभियुक्त जमानत पर रहने का किसी प्रकार का विशेष अधिकार प्राप्त करने का दावा नहीं कर सकता । यदि अन्वेषण से यह प्रकट होता है कि अभियुक्त ने गंभीर अपराध किया है और आरोप पत्र फाइल कर दिया जाता है, तो धारा 167(2) के परंतुक (क) के अधीन मंजूर की गई जमानत रद्द की जा सकती है ।"

10. उपरोक्त से जो विधि प्रकट होती है, वह यह है कि दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 167(2) के अधीन किसी व्यक्ति को व्यतिक्रम जमानत पर छोड़े जाने के पश्चात् केवल आरोप पत्र फाइल किया जाना उस व्यक्ति की जमानत को रद्द करने का आधार नहीं हो सकता है जिसे व्यक्तिक्रम जमानत पर छोड़ा जाता है । तथापि, अन्वेषण समाप्त होने के पश्चात् आरोप पत्र फाइल किए जाने पर यदि एक दृढ़ मामला सिद्ध किया जाता है और गुणागुण के आधार पर यह पाया जाता है कि उसने एक अजमानतीय अपराध किया है, तो विशेष कारणों/आधारों पर और

उन उपरोक्त अन्य आधारों के अतिरिक्त जिन पर ऐसे किसी व्यक्ति की जमानत को गुणागुण के आधार पर रद्द किया जा सकता है जिसे जमानत पर छोड़ा गया है और दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 437(5) और धारा 439(2) पर विचार करते हुए गुणागुण के आधार पर जमानत को रद्द किया जा सकता है ।

11. अत: ऐसा कोई आत्यंतिक वर्जन नहीं है जैसा कि उच्च न्यायालय द्वारा आक्षेपित निर्णय और आदेश में मत व्यक्त और अभिनिर्धारित किया गया है कि जब एक बार किसी व्यक्ति को दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 167(2) के अधीन व्यतिक्रम जमानत पर छोड़ा जाता है, तो उसकी जमानत गुणागुण के आधार पर रद्द नहीं की जा सकती और उसकी जमानत साक्ष्य/साक्षियों के साथ छेड़छाड़ करने, अन्वेषण अभिकरण के साथ सहयोग न करने और/या संबंधित विचारण न्यायालय आदि के साथ सहयोग न करने जैसे अन्य साधारण आधारों पर रद्द की जा सकती है ।

12. अत: हम पूर्वोक्त विनिश्चयों में इस न्यायालय द्वारा अपनाए गए दृष्टिकोण से पूर्णत: सहमत हैं । प्रत्यर्थी-मूल अभियुक्त सं. 1 की ओर से दी गई दलील और उच्च न्यायालय द्वारा आक्षेपित निर्णय और आदेश में अपनाए गए इस दृष्टिकोण को स्वीकार किया जाए कि जब एक बार किसी अभियुक्त को दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 167(2) के अधीन व्यतिक्रम जमानत पर छोड़ दिया जाता है तो उसकी जमानत गुणागुण के आधार पर रद्द नहीं की जा सकती, उस दशा में अकर्मण्यता और/या उपेक्षा को बढ़ावा देना होगा, चाहे ऐसा किसी प्रस्तुत मामले में अन्वेषण अभिकरण द्वारा जानबूझकर विहित समयावधि के भीतर आरोप पत्र फाइल करने का प्रयत्न करके किया गया हो । किसी प्रस्तुत मामले में, यदि अभियुक्त ने अति गंभीर अपराध किया है, जो स्वापक ओषधि और मन:प्रभावी पदार्थ अधिनियम (एनडीपीएस) के अधीन किया गया हो सकता है या यहां तक कि हत्या (हत्याएं) किए जाने का हो सकता है, तथापि, फिर भी वह सुविधाजनक अन्वेषण अधिकारी के माध्यम से व्यवस्था कर लेता है और यह भी व्यवस्था कर लेता है कि दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 167(2) के अधीन वर्णित विहित समय-

सीमा के भीतर आरोप पत्र फाइल न किया जाए और व्यतिक्रम जमानत पर रिहा हो जाता है, तो यह अवैधता और/या बेइमानी को बढ़ावा देना होगा । जैसा कि इसमें ऊपर मत व्यक्त किया गया है, अभियुक्त को व्यतिक्रम जमानत पर इस प्रकार छोड़ा जाना कतई गुणागुण के आधार पर नहीं होता है और धारा 167 की उपधारा (2) के परंतुक में प्रकट संभाव्य घटना के आधार पर छोड़ा जाता है । तथापि, बाद में दोष को ठीक करने और आरोप पत्र फाइल करने पर यद्यपि यह एक दृढ़ मामला सिद्ध किया जाता है कि अभियुक्त ने अति गंभीर अपराध और अजमानतीय अपराध किया है, तो भी न्यायालय जमानत को रद्द नहीं कर सकता और उस व्यक्ति को अभिरक्षा में सुपुर्द नहीं कर सकता तथा अभियुक्त द्वारा कारित अपराध की गंभीरता पर विचार नहीं करेगा, तो न्यायालय ऐसे निर्वचन को पसंद नहीं करेंगे क्योंकि इससे न्याय विफल हो जाएगा । न्यायालयों को ऐसी दशा में जमानत रद्द करने और मामले के गुणागुण की परीक्षा करने की शक्ति है जहां अभियुक्त को व्यतिक्रम जमानत पर छोड़ा जाता है न कि पहले गुणागुण के आधार पर छोड़ा जाता है । ऐसा निर्वचन न्याय प्रशासन को अग्रसर करने के लिए होगा ।

13. उपरोक्त को दृष्टिगत करते हुए और ऊपर उल्लिखित कारणों से केंद्रीय अन्वेषण ब्यूरो द्वारा दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 439(2) के अधीन जमानत के रद्दकरण के लिए फाइल किए गए आवेदन को रद्द करते हुए उच्च न्यायालय द्वारा पारित आक्षेपित निर्णय और आदेश अभिखंडित और अपास्त किए जाने योग्य है और तद्नुसार अभिखंडित और अपास्त किया जाता है । वर्तमान अपील में अंतर्वलित विवाद्यक का उत्तर सकारात्मक दिया जाता है और यह मत व्यक्त और अभिनिर्धारित किया जाता है कि ऐसे किसी मामले में जहां अभियुक्त को दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 167(2) के अधीन व्यतिक्रम जमानत पर छोड़ा जाता है और उसके पश्चात् आरोप पत्र फाइल करने पर एक दृढ़ मामला सिद्ध किया जाता है तथा आरोप पत्र से यह विशेष कारण सिद्ध होने पर कि अभियुक्त ने एक अजमानतीय अपराध कारित किया है और धारा 437(5) तथा धारा 439(2) में उपवर्णित आधारों पर विचार करते हुए उसकी जमानत को गुणागुण के आधार पर रद्द किया जा सकता है

और न्यायालय गुणागुण के आधार पर जमानत के रद्दकरण के लिए आवेदन पर विचार करने के लिए विवर्जित नहीं हैं । तथापि, केवल आरोप पत्र फाइल करना पर्याप्त नहीं है, किंतु जैसा कि इसमें ऊपर मत व्यक्त और अभिनिर्धारित किया गया है, आरोप पत्र के आधार पर यह दृढ़ मामला सिद्ध किया जाना चाहिए कि अभियुक्त ने अजमानतीय अपराध कारित किया है और वह अभिरक्षा में रहने योग्य है ।

14. चूंकि उच्च न्यायालय ने जमानत के रद्दकरण के लिए आवेदन पर कतई गुणागुण के आधार पर विचार नहीं किया है इसलिए मामले को विधि के अनुसार और गुणागुण के आधार पर तथा इसमें ऊपर की गई मताभिव्यक्तियों को ध्यान में रखते हुए उक्त आवेदन पर नए सिरे से विचार करने के लिए उच्च न्यायालय को विप्रेषित किया जाना चाहिए । चूंकि 2022 की रिट याचिका (दांडिक) सं. 169 में इस न्यायालय द्वारा तारीख 29 नवंबर, 2022 को पारित किए गए पूर्ववर्ती निर्णय और आदेश के अनुसरण में वर्तमान मामले में प्रथम इत्तिला रिपोर्ट के विचारण को केंद्रीय अन्वेषण ब्यूरो विशेष न्यायालय, हैदराबाद में स्थानांतरित किए जाने का आदेश किया गया है इसलिए जमानत के रद्दकरण के आवेदन की कार्यवाहियां, जो पूर्व में आंध्र प्रदेश उच्च न्यायालय, अमरावती के समक्ष फाइल की गई थीं, को तेलंगाना उच्च न्यायालय, हैदराबाद को स्थानांतरित किए जाने का आदेश किया जाता है और अब तेलंगाना उच्च न्यायालय जमानत के रद्दकरण के आवेदन पर गुणागुण के आधार पर और इसमें ऊपर की गई मताभिव्यक्तियों को ध्यान में रखते हुए विचार करेगा, विनिश्चय करेगा और निपटारा करेगा । तद्नुसार, यह अपील पूर्वोक्त सीमा तक मंजूर की जाती है ।

अपील मंजूर की गई ।

जस.

[2023] 1 उम. नि. प. 226

गजानंद शर्मा

बनाम

आदर्श शिक्षा परिषद् समिति और अन्य

[2023 की सिविल अपील सं. 100-101]

19 जनवरी, 2023

न्यायमूर्ति एम. आर. शाह और न्यायमूर्ति सी. टी. रविकुमार

राजस्थान गैर-सरकारी शैक्षणिक संस्था अधिनियम, 1989 (1992 का 19) – धारा 18 – मान्यताप्राप्त शैक्षणिक संस्थान के कर्मचारियों की सेवा-समाप्ति – शिक्षा निदेशक के पूर्व अनुमोदन की आवश्यकता – कर्मचारी-प्रत्यर्थी को विभागीय जांच के पश्चात् सेवा से हटाया जाना – सेवा-समाप्ति का आदेश शिक्षा निदेशक का पूर्व अनुमोदन अभिप्राप्त किए बिना पारित किया जाना – विधिमान्यता – जहां अधिनियम में स्पष्ट रूप से यह उपबंध हो कि किसी मान्यताप्राप्त संस्था के कर्मचारी को प्रबंधमंडल द्वारा सुनवाई का युक्तियुक्त अवसर दिए बिना सेवा से हटाया, बर्खास्त या पंक्ति में अवनत नहीं किया जाएगा और साथ ही संबंधित धारा के परंतुक में यह भी उपबंध हो कि इस बाबत कोई अंतिम आदेश शिक्षा निदेशक के पूर्व अनुमोदन के बिना पारित नहीं किया जाएगा, वहां विभागीय जांच/कार्यवाहियां आयोजित करने के पश्चात् भी किसी मान्यताप्राप्त संस्था के कर्मचारी की सेवा-समाप्ति से पूर्व शिक्षा निदेशक का पूर्व अनुमोदन अभिप्राप्त किया जाना आवश्यक होने के कारण निदेशक के पूर्व अनुमोदन के बिना सेवा-सामप्ति के आदेश को कायम रखते हुए उच्च न्यायालय के निर्णय को अपास्त करना न्यायोचित होगा ।

अपील के तथ्यों के अनुसार, अपीलार्थी-कर्मचारी प्रत्यर्थियों के पास सेवारत था । उसके विरुद्ध राजस्थान गैर-सरकारी शैक्षणिक संस्था अधिनियम, 1989 (जिसे इसमें इसके पश्चात् अधिनियम, 1989 कहा गया है) के उपबंधों के अधीन एक अनुशासनिक जांच आरंभ की गई

थी । उसके पश्चात् विभागीय जांच के पूर्ण होने पर अपीलार्थी की सेवाओं को समाप्त कर दिया गया, जो विद्वान् अधिकरण के समक्ष चुनौती की विषयवस्तु थी । अधिकरण ने सेवा-समाप्ति के आदेश को यह अभिनिर्धारित करते हुए अपास्त कर दिया कि अधिनियम, 1989 की धारा 18 की अपेक्षा अनुसार शिक्षा निदेशक का पूर्व अनुमोदन अभिप्राप्त नहीं किया गया था । विद्वान् एकल न्यायाधीश द्वारा विद्वान् अधिकरण द्वारा पारित किए गए आदेश की पुष्टि की गई । उच्च न्यायालय में रिट अपील फाइल की गई । उच्च न्यायालय द्वारा यह मत व्यक्त करते हुए रिट अपील मंजूर की गई कि अनुशासनिक जांच/कार्यवाहियों के पश्चात् सेवा-समाप्ति की दशा में शिक्षा निदेशक का पूर्व अनुमोदन अपेक्षित नहीं है और विद्वान् अधिकरण तथा विद्वान् एकल न्यायाधीश द्वारा पारित किए गए आदेशों को अपास्त कर दिया गया और सेवा-समाप्ति के आदेश को कायम रखा गया । उच्च न्यायालय के निर्णय के विरुद्ध उच्चतम न्यायालय में अपीलें फाइल की गईं । उच्चतम न्यायालय द्वारा अपीलें मंजूर करते हुए,

अभिनिर्धारित – राजस्थान गैर-सरकारी शैक्षणिक संस्था अधिनियम, 1989 की धारा 18 का उचित अनुशीलन करने पर इस न्यायालय की यह राय है कि किसी मान्यताप्राप्त संस्था के कर्मचारी की सेवा-समाप्ति की दशा में शिक्षा निदेशक या उसके द्वारा इस निमित्त प्राधिकृत अधिकारी का पूर्व अनुमोदन अभिप्राप्त किया जाना चाहिए । धारा 18 में अनुशासनिक कार्यवाहियों/जांच के पश्चात् या यहां तक कि अनुशासनिक कार्यवाहियों/जांच के बिना भी सेवा-समाप्ति, बर्खास्तगी, या पंक्ति में अवनति के बीच कोई विभेद नहीं है । विधि की स्थिर स्थिति के अनुसार, कानून के उपबंधों को वैसे ही पढ़ा जाना चाहिए जैसे वे हैं । कुछ भी जोड़ा और/या घटाया नहीं जाना चाहिए । जो शब्द प्रयुक्त किए गए हैं वे हैं "किसी मान्यताप्राप्त संस्था के किसी कर्मचारी को जांच किए बिना हटाया नहीं जाएगा और इसमें यह भी उपबंधित है कि इस संबंध में कोई अंतिम आदेश तब तक पारित नहीं किया जाएगा जब तक शिक्षा निदेशक का पूर्व अनुमोदन अभिप्राप्त नहीं किया गया हो ।" धारा 18 के प्रथम भाग को पहले परंतुक के साथ पढ़ा जाना चाहिए । इन परिस्थितियों में, यह प्रतिकूल दृष्टिकोण अपनाना कि किसी मान्यताप्राप्त

संस्था के ऐसे कर्मचारी को बर्खास्त करने/हटाए जाने की दशा में जिसे विभागीय जांच करने के पश्चात् बर्खास्त/हटाया जाता है, शिक्षा निदेशक का पूर्व अनुमोदन अपेक्षित नहीं है, असंधार्य है और इस सीमा तक केंद्रीय अकादमी सोसाइटी (उपर्युक्त) वाले मामले में राजस्थान उच्च न्यायालय की बृहत्तर न्यायपीठ का निर्णय विधि की दृष्टि में उचित नहीं है । अत: अधिनियम, 1989 की धारा 18 का सही निर्वचन करने पर विनिर्दिष्ट रूप से यह मत व्यक्त और अभिनिर्धारित किया जाता है कि किसी मान्यताप्राप्त संस्था के कर्मचारी को विभागीय जांच/ कार्यवाहियां करने के पश्चात् सेवा-समाप्ति/हटाए जाने की दशा में भी अधिनियम, 1989 की धारा 18 के पहले परंतुक के अनुसार शिक्षा निदेशक का पूर्व अनुमोदन अभिप्राप्त किया जाना चाहिए । उपरोक्त को दृष्टिगत करते हुए और इसमें ऊपर उल्लिखित कारणों से उच्च न्यायालय की खंड न्यायपीठ द्वारा सेवा-समाप्ति के आदेश को, जो शिक्षा निदेशक का पूर्व अनुमोदन प्राप्त किए बिना पारित किया गया था, प्रत्यावर्तित करते हुए पारित किया गया आक्षेपित निर्णय और आदेश अभिखंडित और अपास्त किए जाने योग्य है और तद्नुसार अभिखंडित और अपास्त किया जाता है । सेवा-समाप्ति के आदेश को अपास्त करते हुए विद्वान् अधिकरण का आदेश, जिसकी पुष्टि विद्वान् एकल न्यायाधीश द्वारा की गई है, तद्द्वारा प्रत्यावर्तित किया जाता है । परिणामत:, अपीलार्थी को सेवा में बहाल किया जाएगा और इस तथ्य पर विचार करते हुए कि प्रत्यर्थी असहायता प्राप्त संस्था है/हैं और सेवा-समाप्ति का आदेश बहुत पहले वर्ष 1988 में पारित किया गया था, यह न्यायालय निदेश देता है कि अपीलार्थी 50 प्रतिशत पिछले वेतन का हकदार होगा, तथापि, वह ज्येष्ठता इत्यादि, यदि कोई है, सहित सभी अन्य फायदों का सैद्धांतिक रूप से हकदार होगा । अब जहां तक 2011 की खंड न्यायपीठ विशेष रिट अपील सं. 826 में पारित आक्षेपित निर्णय और आदेश से उद्भूत 2023 की सिविल अपील सं. 101 का संबंध है, उच्च न्यायालय की खंड न्यायपीठ ने सेवा-समाप्ति के आदेश को कायम रखते हुए उक्त अपील पर कतई विचार नहीं किया था । अत: यह न्यायालय 2011 की खंड न्यायपीठ विशेष रिट अपील सं. 826 में उच्च न्यायालय द्वारा पारित किए गए आदेश को अपास्त करता है और इस पर विधि के अनुसार और इसके स्वयं के गुणागुण के आधार पर

विनिश्चय करने के लिए मामले को उच्च न्यायालय को विप्रेषित करता है । (पैरा 5.5, 5.6, 6 और 6.2)

निर्दिष्ट निर्णय

		पैरा
[2020]	(2020) 14 एस. सी. सी. 449 : **मारवाड़ी बालिका विद्यालय** बनाम **आशा श्रीवास्तव** ;	3.2, 5.4
[2020]	2020 की रिट याचिका (सि.) सं. 3415 : **मंगल सेन जैन** बनाम **प्रधानाचार्य बलवंत्रे मेहता विद्या भवन और अन्य** ;	3.3, 5.4
[2016]	(2016) 6 एस. सी. सी. 541 : **राज कुमार** बनाम **शिक्षा निदेशक और अन्य** ;	2.1,3,3.1,3.2, 3.3, 3.4, 4.1, 5.1, 5.2, 5.4
[2010]	(2010) 3 डब्ल्यू. एल. सी. 21 : **केंद्रीय अकादमी सोसाइटी** बनाम **राजस्थान गैर-सरकारी शैक्षणिक संस्थान अधिकरण** ;	2.1, 3.1, 4.2
[2002]	(2002) 8 एस. सी. सी. 481 : **टी. एम. ए. पाई फाउंडेशन** बनाम **कर्नाटक राज्य** ।	2.1, 3, 3.1, 4.1, 5.1

अपीली (सिविल) अधिकारिता : 2023 की सिविल अपील सं. 100-101.

2005 की खंड न्यायपीठ विशेष रिट अपील सं. 1077 और 2011 की खंड न्यायपीठ विशेष रिट अपील सं. 826 में राजस्थान उच्च न्यायालय, जयपुर न्यायपीठ के तारीख 6 मई, 2022 के निर्णय और आदेश के विरुद्ध अपीलें ।

अपीलार्थी की ओर से सर्वश्री प्रदीप अग्रवाल, लाल प्रताप सिंह, उमेश प्रताप सिंह, अर्जुन अग्रवाल, भास्कर आदित्य, विशाल सिंह और (सुश्री) रुचि कोहली

प्रत्यर्थियों की ओर से सर्वश्री निखिल सिंघवी, (सुश्री) शारदा देशमुख, बिलाल इकरम और शिखर किशोर

न्यायालय का निर्णय न्यायमूर्ति एम. आर. शाह ने दिया ।

न्या. शाह – 2005 की खंड न्यायपीठ विशेष रिट अपील सं. 1077 (प्रबंधमंडल द्वारा फाइल की गई) और 2011 की खंड न्यायपीठ विशेष रिट अपील सं. 826 (कर्मचारी द्वारा फाइल की गई) में राजस्थान उच्च न्यायालय, जयपुर न्यायपीठ द्वारा तारीख 6 मई, 2022 को पारित किए गए उस आक्षेपित निर्णय और आदेश से व्यथित और असंतुष्ट होकर कर्मचारी ने ये अपीलें फाइल की हैं, जिसके द्वारा उच्च न्यायालय की खंड न्यायपीठ ने इस अपील में प्रत्यर्थियों-प्रबंधमंडल द्वारा फाइल की गई अपील मंजूर की और विद्वान् एकल न्यायाधीश द्वारा पारित निर्णय और आदेश तथा विद्वान् अधिकरण द्वारा तारीख 6 अगस्त, 1998 के सेवा-समाप्ति के आदेश को अभिखंडित और अपास्त करते हुए पारित किए गए आदेश को अभिखंडित और अपास्त कर दिया और परिणामत: सेवा-समाप्ति के आदेश को कायम रखा ।

2. वे तथ्य जिनसे वर्तमान अपीलें उद्भूत हुई हैं, संक्षेप में निम्नलिखित हैं –

2.1 इस अपील में अपीलार्थी-कर्मचारी प्रत्यर्थी सं. 1 और 2 के पास सेवारत था । उसके विरुद्ध राजस्थान गैर-सरकारी शैक्षणिक संस्था अधिनियम, 1989 (जिसे इसमें इसके पश्चात् अधिनियम, 1989 कहा गया है) के उपबंधों के अधीन एक अनुशासनिक जांच आरंभ की गई थी । उसके पश्चात् विभागीय जांच के पूर्ण होने पर अपीलार्थी की सेवाओं को समाप्त कर दिया गया, जो विद्वान् अधिकरण के समक्ष चुनौती की विषयवस्तु थी । अधिकरण ने सेवा-समाप्ति के आदेश को यह मत व्यक्त और अभिनिर्धारित करते हुए अपास्त कर दिया कि शिक्षा निदेशक का पूर्व अनुमोदन अभिप्राप्त नहीं किया गया था, जैसा कि अधिनियम, 1989 की धारा 18 के अधीन आज्ञापक है । विद्वान् एकल न्यायाधीश ने विद्वान् अधिकरण द्वारा पारित किए गए आदेश की पुष्टि की । आक्षेपित निर्णय और आदेश द्वारा और इस तथ्य के

बावजूद कि **राज कुमार** बनाम **शिक्षा निदेशक और अन्य**[1] वाले मामले में इस न्यायालय के विनिश्चय में दिल्ली विद्यालय शिक्षा अधिनियम (जिसे इसमें इसके पश्चात् दिल्ली विद्यालय शिक्षा अधिनियम कहा गया है) के सम-विषयक उपबंधों पर विचार किया था और यह दृष्टिकोण अपनाया था कि कर्मचारी की सेवा-समाप्ति से पूर्व शिक्षा निदेशक का पूर्व अनुमोदन आज्ञापक और अपेक्षित है, उच्च न्यायालय की खंड न्यायपीठ ने **राज कुमार** (उपर्युक्त) वाले मामले में इस न्यायालय के विनिश्चय का गलत रूप से यह मत व्यक्त करते हुए अनुसरण नहीं किया कि **राज कुमार** (उपर्युक्त) वाले मामले में इस न्यायालय ने **टी. एम. ए. पाई फाउंडेशन** बनाम **कर्नाटक राज्य**[2] वाले मामले में पूर्ववर्ती विनिश्चय पर विचार नहीं किया था । उसके पश्चात्, उच्च न्यायालय की खंड न्यायपीठ ने **केंद्रीय अकादमी सोसाइटी** बनाम **राजस्थान गैर-सरकारी शैक्षणिक संस्थान अधिकरण**[3] वाले मामले में उच्च न्यायालय की बृहत्तर न्यायपीठ के विनिश्चय का अनुसरण करने के पश्चात् अधिनियम, 1989 की धारा 18 का संकीर्ण निर्वचन करते हुए यह मत व्यक्त किया कि अनुशासनिक जांच/कार्यवाहियों के पश्चात् सेवा-समाप्ति की दशा में शिक्षा निदेशक का पूर्व अनुमोदन अपेक्षित नहीं है, रिट अपील मंजूर की और विद्वान् अधिकरण तथा विद्वान् एकल न्यायाधीश द्वारा पारित किए गए आदेशों को अपास्त कर दिया और सेवा-समाप्ति के आदेश को कायम रखा । उच्च न्यायालय द्वारा पारित किया गया आक्षेपित निर्णय और आदेश वर्तमान अपीलों में से एक की विषयवस्तु है । इस प्रक्रम पर, यह उल्लेख किया जाना आवश्यक है कि 2011 की लेटर्स पेटेंट अपील (डी. बी. विशेष रिट अपील) सं. 826 विद्वान् एकल न्यायाधीश द्वारा समान कार्य के लिए समान वेतन हेतु अपीलार्थी के पक्षकथन से इनकार करते हुए तारीख 6 जनवरी, 2011 को पारित आदेश की विषयवस्तु थी । तथापि, चूंकि सेवा-समाप्ति के आदेश को कायम रखा गया था, उसके पश्चात् उच्च न्यायालय की खंड न्यायपीठ ने अपील के गुणागुण पर आगे विचार किए बिना उक्त अपील खारिज कर दी और

---

[1] (2016) 6 एस. सी. सी. 541.

[2] (2002) 8 एस. सी. सी. 481.

[3] (2010) 3 डब्ल्यू. एल. सी. 21.

वह भी वर्तमान अपीलों में से एक की विषयवस्तु है ।

3. अब जहां तक उच्च न्यायालय की खंड न्यायपीठ द्वारा सेवा-समाप्ति के आदेश को कायम रखते हुए और विद्वान् अधिकरण और विद्वान् एकल न्यायाधीश द्वारा पारित किए गए आदेशों को अभिखंडित और अपास्त करते हुए पारित किए गए आक्षेपित निर्णय और आदेश का संबंध है, अपीलार्थी-कर्मचारी की ओर से हाजिर होने वाले विद्वान् काउंसेल द्वारा जोरदार रूप से यह दलील दी गई कि उच्च न्यायालय ने **राज कुमार** (उपर्युक्त) वाले मामले में इस न्यायालय के आबद्धकारी विनिश्चय का अनुसरण न करके तात्विक रूप से गलती की है । यह दलील दी गई कि यद्यपि यह अनुज्ञेय नहीं है, तो भी उच्च न्यायालय की खंड न्यायपीठ ने **राज कुमार** (उपर्युक्त) वाले मामले में के विनिश्चय का इस आधार पर अनुसरण नहीं किया था कि **राज कुमार** (उपर्युक्त) वाले मामले में इस न्यायालय ने **टी. एम. ए. पाई फाउंडेशन** (उपर्युक्त) वाले मामले में के विनिश्चय पर विचार नहीं किया था । यह दलील दी गई कि पूर्वोक्त बात तथ्यात्मक रूप से गलत है । यह दलील दी गई कि **राज कुमार** (उपर्युक्त) वाले मामले में निर्णय और आदेश पारित करते हुए इस न्यायालय ने **टी. एम. ए. पाई फाउंडेशन** (उपर्युक्त) वाले मामले में के विनिश्चय के कम से कम 8-9 से अधिक पैराओं (पैरा 13, 42, 43, 47, 50-52, 61 और 64) पर विचार किया था । अत: यह दलील दी गई कि उच्च न्यायालय की खंड न्यायपीठ ने **राज कुमार** (उपर्युक्त) वाले मामले में इस न्यायालय के आबद्धकारी विनिश्चय का अनुसरण न करके गंभीर गलती की है ।

3.1 अपीलार्थी की ओर से हाजिर होने वाले विद्वान् काउंसेल द्वारा यह भी दलील दी गई कि **राज कुमार** (उपर्युक्त) वाले मामले में दिल्ली विद्यालय शिक्षा अधिनियम के सम-विषयक उपबंधों अर्थात् दिल्ली विद्यालय शिक्षा अधिनियम की धारा 8 पर विचार करते हुए इस न्यायालय ने विनिर्दिष्ट रूप से यह मत व्यक्त और अभिनिर्धारित किया था कि किसी असहायता प्राप्त संस्था के मामले में भी किसी कर्मचारी की सेवा-समाप्ति से पूर्व शिक्षा निदेशक का पूर्व अनुमोदन आज्ञापक है । अपीलार्थी की ओर से हाजिर होने वाले विद्वान् काउंसेल द्वारा यह

दलील दी गई कि ऐसा अभिनिर्धारित करते हुए इस न्यायालय ने **टी. एम. ए. पाई फाउंडेशन** (उपर्युक्त) वाले मामले में इस न्यायालय के विनिश्चय पर विचार किया था । अत: यह दलील दी गई कि उच्च न्यायालय की खंड न्यायपीठ ने **राज कुमार** (उपर्युक्त) वाले मामले में इस न्यायालय के विनिश्चय की बजाय प्रतिकूल दृष्टिकोण अपनाकर तात्विक रूप से गलती की है और उच्च न्यायालय की खंड न्यायपीठ ने **केंद्रीय अकादमी सोसाइटी** (उपर्युक्त) वाले मामले में बृहतर न्यायपीठ के निर्णय/विनिश्चय का अवलंब लेकर और यह दृष्टिकोण अपनाकर तात्विक रूप से गलती की है कि अनुशासनिक कार्यवाहियों/जांच के पश्चात् सेवा-समाप्ति की दशा में शिक्षा निदेशक के पूर्व अनुमोदन की अपेक्षा करने वाली धारा 18 लागू नहीं होगी ।

3.2 यह दलील दी गई कि यहां तक कि **मारवाड़ी बालिका विद्यालय** बनाम **आशा श्रीवास्तव**[1] वाले मामले में भी **राज कुमार** (उपर्युक्त) वाले मामले में इस न्यायालय के विनिश्चय का अनुसरण करते हुए यह मत व्यक्त और अभिनिर्धारित किया गया है कि किसी कर्मचारी की सेवा-समाप्ति/बर्खास्तगी से पूर्व शिक्षा निदेशक का पूर्व अनुमोदन अपेक्षित/आज्ञापक है ।

3.3 अपीलार्थी की ओर से हाजिर होने वाले विद्वान् काउंसेल द्वारा यह भी दलील दी गई कि **राज कुमार** (उपर्युक्त) वाले मामले के विनिश्चय को बाद में दिल्ली उच्च न्यायालय द्वारा **मंगल सेन जैन** बनाम **प्रधानाचार्य बलवंत्रे मेहता विद्या भवन और अन्य**[2] वाले मामले में अनुसरण किया गया था जिसके विरुद्ध प्रबंधमंडल द्वारा फाइल की गई विशेष इजाजत याचिका को इस न्यायालय द्वारा **मंगल सेन जैन** बनाम **प्रधानाचार्य बलवंत्रे मेहता विद्या भवन और अन्य** (उपर्युक्त) वाले मामले में तारीख 10 जनवरी, 2021 के आदेश द्वारा खारिज कर दिया गया था । अत: यह दलील दी गई कि उच्च न्यायालय की खंड न्यायपीठ ने सेवा-समाप्ति के आदेश को यह मत व्यक्त करते हुए प्रत्यावर्तित करके तात्विक रूप से गलती की है कि असहायता प्राप्त संस्था की दशा में

---

[1] (2020) 14 एस. सी. सी. 449.

[2] 2020 की रिट याचिका (सि.) सं. 3415.

और उस दशा में जहां सेवा-समाप्ति अनुशासनिक जांच/कार्यवाहियों के पश्चात् की जाती है, वहां शिक्षा निदेशक का पूर्व अनुमोदन आज्ञापक नहीं है ।

3.4 उपरोक्त दलीलें देने और **राज कुमार** (उपर्युक्त) वाले मामले में इस न्यायालय के विनिश्चय का अवलंब लेते हुए वर्तमान अपीलों को मंजूर करने का निवेदन किया गया ।

4. प्रबंधमंडल-प्रत्यर्थी (प्रत्यर्थियों) की ओर से हाजिर होने वाले विद्वान् काउंसेल द्वारा वर्तमान अपीलों को जोरदार रूप से विरोध किया गया ।

4.1 प्रबंधमंडल की ओर से हाजिर होने वाले विद्वान् काउंसेल द्वारा जोरदार रूप से यह दलील दी गई कि **राज कुमार** (उपुर्यक्त) और **टी. एम. ए. पाई फाउंडेशन** (उपर्युक्त) वाले मामले में इस न्यायालय का विनिश्चय प्रस्तुत मामले के तथ्यों को लागू नहीं होगा क्योंकि पूर्वोक्त विनिश्चयों में कोई अनुशासनिक जांच/विभागीय कार्यवाहियां किए बिना सेवा-समाप्ति का मामला था । **राज कुमार** (उपर्युक्त) वाले मामले में यह न्यायालय दिल्ली विद्यालय शिक्षा अधिनियम की धारा 8 पर विचार कर रहा था । यह दलील दी गई कि वर्तमान मामले में सेवा-समाप्ति का आदेश विभागीय जांच करने के पश्चात् और सभी आरोपों और अवचार के साबित हो जाने के पश्चात् पारित किया गया था । यह दलील दी गई कि अत: अधिनियम, 1989 की धारा 18 लागू नहीं होगी ।

4.2 प्रबंधमंडल की ओर से हाजिर होने वाले विद्वान् काउंसेल ने **केंद्रीय अकादमी सोसाइटी** (उपुर्यक्त) वाले मामले में राजस्थान उच्च न्यायालय की बृहत्तर न्यायपीठ के विनिश्चय का जोरदार अवलंब लिया । यह दलील दी गई कि उच्च न्यायालय की बृहतर न्यायपीठ ने इसी उपबंध अर्थात् अधिनियम, 1989 की धारा 18 पर चर्चा और/या विचार किया था और **टी. एम. ए. पाई फाउंडेशन** (उपर्युक्त) वाले मामले में के विनिश्चय पर विचार करने के पश्चात् इसका निर्वचन किया था और यह मत व्यक्त और अभिनिर्धारित किया था कि विभागीय जांच/कार्यवाहियां करने के पश्चात् किसी कर्मचारी की सेवा-समाप्ति के मामले में अधिनियम, 1989 की धारा 18 लागू नहीं होगी और शिक्षा निदेशक का पूर्व अनुमोदन अपेक्षित नहीं है ।

4.3 यह भी दलील दी गई कि अन्यथा भी वर्तमान मामले में सेवा-समाप्ति के आदेश को इस आधार पर अपास्त किया जाना अपेक्षित नहीं है कि शिक्षा निदेशक का पूर्व अनुमोदन अभिप्राप्त नहीं किया गया था क्योंकि अनुशासनिक समिति में जिला शिक्षा अधिकारी सम्मिलित था । यह दलील दी गई कि समिति ने, जिसमें जिला शिक्षा अधिकारी का एक नामनिर्देशिती एक सदस्य था, सभी अभिकथित आरोपों और अवचार को साबित होना ठहराया था । यह दलील दी गई कि अपीलार्थी के विरुद्ध विद्यालय के प्रधानाचार्य के साथ गाली-गलौच करने, दुर्व्यवहार करने और धमकी देने, विद्यालय की निधियों का गबन करने और विद्यालय की संपत्ति को संभालने में उपेक्षा करने के साबित किए गए आरोप और अवचार बहुत ही गंभीर थे । यह दलील दी गई कि अत: जब अनुशासनिक समिति में जिला शिक्षा अधिकारी का एक नामनिर्देशिती का सदस्य था, तो शिक्षा निदेशक के पूर्व अनुमोदन के बिना भी सेवा-समाप्ति का आदेश अपास्त नहीं किया जाना चाहिए ।

4.4 उपरोक्त दलीलें देते हुए वर्तमान अपीलों को खारिज करने का निवेदन किया गया ।

5. आरंभ में, यह उल्लेख किया जाना आवश्यक है और यह एक स्वीकृत स्थिति है कि पक्षकार राजस्थान गैर-सरकारी शैक्षणिक संस्था अधिनियम, 1989 द्वारा शासित होते हैं । धारा 18 में यह उपबंधित है कि किसी मान्यताप्राप्त संस्था का कोई कर्मचारी तब तक हटाया, बर्खास्त या पंक्ति में अवनत नहीं किया जाएगा जब तक प्रबंधमंडल द्वारा की जाने वाली प्रस्तावित कार्यवाही के विरुद्ध सुने जाने का युक्तियुक्त अवसर न दिया गया हो और इस संबंध में कोई अंतिम आदेश शिक्षा निदेशक या इस निमित्त उसके द्वारा प्राधिकृत अधिकारी का पूर्व अनुमोदन प्राप्त किए बिना पारित नहीं किया जाएगा । विद्वान् अधिकरण ने सेवा-समाप्ति के आदेश को अधिनियम, 1989 की धारा 18 के अननुपालन के आधार पर अपास्त कर दिया था क्योंकि अपीलार्थी-कर्मचारी की सेवाओं को समाप्त करने से पूर्व शिक्षा निदेशक का पूर्व अनुमोदन अभिप्राप्त नहीं किया गया था । इसकी पुष्टि विद्वान् एकल न्यायाधीश द्वारा की गई थी, तथापि, उच्च न्यायालय की खंड

न्यायपीठ ने एक प्रतिकूल दृष्टिकोण अपनाते हुए आक्षेपित निर्णय और आदेश द्वारा अपील मंजूर की और सेवा-समाप्ति के आदेश को प्रत्यावर्तित कर दिया ।

5.1 उच्च न्यायालय द्वारा पारित किए गए आक्षेपित निर्णय और आदेश से यह प्रतीत होता है कि उच्च न्यायालय के समक्ष **राज कुमार** (उपर्युक्त) वाले मामले में एक प्रतिकूल दृष्टिकोण अपनाते हुए और यह दृष्टिकोण अपनाते हुए कि किसी मान्यताप्राप्त संस्था के कर्मचारी की सेवाओं को समाप्त करने से पूर्व शिक्षा निदेशक का पूर्व अनुमोदन अपेक्षित है, इस न्यायालय के विनिश्चय को प्रयोग किया गया था । तथापि, उच्च न्यायालय ने उक्त आबद्धकारी विनिश्चय का यह मत व्यक्त करते हुए अनुसरण नहीं किया, यद्यपि यह अननुज्ञेय था, कि **राज कुमार** (उपर्युक्त) वाले मामले में इस न्यायालय ने **टी. एम. ए. पाई फाउंडेशन** (उपर्युक्त) वाले मामले में इस न्यायालय के विनिश्चय पर विचार नहीं किया था । इस तथ्य के अतिरिक्त कि ऐसा करना उच्च न्यायालय के लिए पूर्णत: अननुज्ञेय है, यहां तक कि उक्त मताभिव्यक्तियां भी तथ्यात्मक रूप से गलत हैं । यदि **राज कुमार** (उपर्युक्त) वाले मामले के विनिश्चय को देखा जाए तो इस न्यायालय ने 8-9 से अधिक पैराओं में **टी. एम. ए. पाई फाउंडेशन** (उपर्युक्त) वाले मामले को निर्दिष्ट और विचार किया था । यहां तक कि **राज कुमार** (उपर्युक्त) वाले मामले में इस न्यायालय द्वारा **टी. एम. ए. पाई फाउंडेशन** (उपर्युक्त) वाले मामले में के विनिश्चय को स्पष्ट और विचार किया गया था । अत: उच्च न्यायालय की खंड न्यायपीठ यह मत व्यक्त करने में तथ्यात्मक रूप से गलत है कि **राज कुमार** (उपर्युक्त) वाले मामले में के विनिश्चय को विनिश्चित करते हुए इस न्यायालय ने **टी. एम. ए. पाई फाउंडेशन** (उपर्युक्त) वाले मामले में इस न्यायालय के विनिश्चय पर विचार नहीं किया था । **राज कुमार** (उपर्युक्त) वाले मामले में इस न्यायालय के विनिश्चय पर टिप्पणी करने से पूर्व उच्च न्यायालय की खंड न्यायपीठ को **राज कुमार** (उपर्युक्त) वाले मामले में विनिश्चय को पूरी तरह से पढ़ लेना और/या विचार कर लेना चाहिए था । यहां तक कि यह गलत मताभिव्यक्तियां करने के पश्चात् कि **राज कुमार** (उपर्युक्त) वाले मामले में इस न्यायालय ने **टी. एम. ए. पाई फाउंडेशन**

(उपर्युक्त) वाले मामले में इस न्यायालय के विनिश्चय पर विचार नहीं किया था, उच्च न्यायालय की खंड न्यायपीठ ने न्यायिक अनुशासन के कुछ विनिश्चयों पर विचार किया जो कतई लागू नहीं होते थे । न्यायिक अनुशासन यह भी अपेक्षा करता है कि इस न्यायालय के निर्णय/ विनिश्चय पर पूरी तरह से विचार किया जाना चाहिए और पढ़ा जाना चाहिए । जैसा कि इसमें ऊपर मत व्यक्त किया गया है, **राज कुमार** (उपर्युक्त) वाले मामले में इस न्यायालय का विनिश्चय उच्च न्यायालय पर आबद्धकर था । अत: उच्च न्यायालय की खंड न्यायपीठ ने **राज कुमार** (उपर्युक्त) वाले मामले में इस न्यायालय के विनिश्चय का अनुसरण न करके गंभीर गलती की है ।

5.2 अब जहां तक **राज कुमार** (उपर्युक्त) वाले मामले में इस न्यायालय के विनिश्चय का संबंध है, यह न्यायालय दिल्ली विद्यालय शिक्षा अधिनियम के अधीन सम-विषयक उपबंधों पर विचार कर रहा था । यह न्यायालय दिल्ली विद्यालय शिक्षा अधिनियम की धारा 8 पर विचार कर रहा था, जो निम्नलिखित है :–

> "8. (2) किसी ऐसे नियम के अध्यधीन रहते हुए जो इस बाबत बनाया जाए, किसी मान्यताप्राप्त प्राइवेट स्कूल के कर्मचारी को निदेशक के पूर्व अनुमोदन के सिवाय बर्खास्त नहीं किया जाएगा, हटाया नहीं जाएगा या पंक्ति में अवनत नहीं किया जाएगा और न ही उसकी सेवा अन्यथा समाप्त की जाएगी ।"

5.3 जहां तक अधिनियम, 1989 की धारा 18 का संबंध है, इसमें इसी प्रकार का उपबंध है, जो निम्नलिखित है :–

> "18. **कर्मचारियों को हटाया जाना, बर्खास्तगी या पंक्ति में अवनत किया जाना** – ऐसे किन्हीं नियमों के अधीन रहते हुए, जो इस बाबत बनाए जाएं, किसी मान्यताप्राप्त संस्था के कर्मचारी को तब तक हटाया, बर्खास्त या पंक्ति में अवनत नहीं किया जाएगा जब तक उसे प्रबंधमंडल द्वारा की जाने वाले प्रस्तावित कार्रवाई के विरुद्ध सुनवाई का युक्तियुक्त अवसर न दिया गया हो :
>
> परंतु इस संबंध में कोई अंतिम आदेश तब तक पारित नहीं किया जाएगा जब तक शिक्षा निदेशक या उसके द्वारा इस निमित्त

प्राधिकृत अधिकारी का पूर्व अनुमोदन अभिप्राप्त न किया गया हो ।"

5.4 **राज कुमार** (उपर्युक्त) वाले मामले में दिल्ली विद्यालय शिक्षा अधिनियम के अधीन सम-विषयक उपबंध पर विचार करते हुए और **टी. एम. ए. पाई फाउंडेशन** (उपर्युक्त) वाले मामले में इस न्यायालय के विनिश्चय पर विचार करने के पश्चात् इस न्यायालय द्वारा विनिर्दिष्ट रूप से यह मत व्यक्त और अभिनिर्धारित किया गया था कि किसी मान्यताप्राप्त संस्था की दशा में, किसी कर्मचारी की सेवाओं को समाप्त करने से पूर्व शिक्षा निदेशक का अनुमोदन अपेक्षित है । अत: उच्च न्यायालय की बृहत्तर न्यायपीठ द्वारा उच्च न्यायालय की खंड न्यायपीठ का अवलंब लेकर अपनाया गया प्रतिकूल दृष्टिकोण एक उचित विधि नहीं है । यह उल्लेख किया जाना आवश्यक है कि **राज कुमार** (उपर्युक्त) वाले मामले में इस न्यायालय के विनिश्चय पर **मारवाड़ी बालिका विद्यालय** (उपर्युक्त) वाले मामले में इस न्यायालय द्वारा विचार किया गया था और दिल्ली उच्च न्यायालय द्वारा भी **मंगल सेन जैन** (उपर्युक्त) वाले मामले में विचार किया गया था । **मारवाड़ी बालिका विद्यालय** (उपर्युक्त) वाले मामले में इस न्यायालय ने **राज कुमार** (उपर्युक्त) वाले मामले में के विनिश्चय पर और दिल्ली विद्यालय शिक्षा अधिनियम की धारा 8 के उद्देश्य और प्रयोजन पर पैरा 13 और 14 में निम्नलिखित प्रकार से विचार किया था :–

> "13. राज कुमार **बनाम** शिक्षा निदेशक [(2016) 6 एस. एस. सी. 641 = (2016) 2 एस. सी. सी. (एल. एंड. एस.) 111] वाले मामले में इस न्यायालय ने अभिनिर्धारित किया था कि दिल्ली विद्यालय शिक्षा अधिनियम, 1973 की धारा 8(2) कर्मचारी के पक्ष में यह सुनिश्चित करने के लिए एक प्रक्रियात्मक रक्षोपाय है कि मान्यताप्राप्त प्राइवेट स्कूल के कर्मचारी की मनमानी या अयुक्तियुक्त सेवा-समाप्ति/बर्खास्तगी से बचने के लिए सेवा-समाप्ति या बर्खास्तगी का आदेश शिक्षा निदेशक के पूर्व अनुमोदन के बिना पारित न किया जाए । इसके अतिरिक्त, इस न्यायालय ने दिल्ली विद्यालय शिक्षा अधिनियम, 1973 के उद्देश्यों और कारणों पर भी विचार किया और इस निष्कर्ष पर पहुंचा कि किसी प्राइवेट

स्कूल के ड्राइवर की सेवा-समाप्ति शिक्षा निदेशक का पूर्व अनुमोदन अभिप्राप्त किए बिना विधि की दृष्टि से दूषित थी । इस न्यायालय ने यह मत व्यक्त किया (एस. सी. सी. पृ. 560 पैरा 45) –

> '45. हम प्रत्यथी-विद्यालय की ओर से हाजिर होने वाले विद्वान् काउंसेल द्वारा दी गई दलील से सहमत होने में असमर्थ हैं । दिल्ली विद्यालय शिक्षा अधिनियम की धारा 8(2) कर्मचारी के पक्ष में यह सुनिश्चित करने के लिए एक प्रक्रियात्मक रक्षोपाय है कि सेवा-समाप्ति या बर्खास्तगी का आदेश शिक्षा निदेशक के पूर्व अनुमोदन के बिना पारित न किया जाए । यह किसी मान्यताप्राप्त प्राइवेट विद्यालय के कर्मचारी की मनमानी या अयुक्तियुक्त सेवा-समाप्ति या बर्खास्तगी से बचने के लिए है ।'

14. राज कुमार **बनाम** शिक्षा निदेशक [(2016) 6 एस. एस. सी. 641 = (2016) 2 एस. सी. सी. (एल. एंड. एस.) 111] वाले मामले में इस न्यायालय ने यह अधिकथित किया है कि दिल्ली विद्यालय शिक्षा अधिनियम, 1973 (संक्षेप में दिल्ली विद्यालय शिक्षा अधिनियम) अधिनियमित करते समय विधानमंडल का आशय विद्यालय के कर्मचारियों के सेवाकाल को सुरक्षा प्रदान करना और उनके नियोजन के निबंधनों और शर्तों को विनियमित करना था । जबकि सहायता प्राप्त और असहायता प्राप्त शैक्षणिक संस्थाओं का कार्य अनावश्यक सरकारी हस्तक्षेप से मुक्त रहना चाहिए, किंतु इन संस्थाओं के कर्मचारियों के नियोजन की शर्तों के साथ मेल-मिलाप होना और उनके हितों के रक्षोपायों के लिए पर्याप्त पूर्वावधानियों के उपबंध होना भी आवश्यक है । दिल्ली विद्यालय शिक्षा अधिनियम की धारा 8(2) एक ऐसा ही पूर्वावधानी रक्षोपाय है जिसका यह सुनिश्चित करने के लिए अनुसरण किया जाना आवश्यक है कि शैक्षणिक संस्थाओं के कर्मचारियों को प्रबंधमंडल के हाथों अनुचित बर्ताव न सहना पड़े ।"

5.5 यहां तक कि अधिनियम, 1989 की धारा 18 का उचित अनुशीलन करने पर हमारी यह राय है कि किसी मान्यताप्राप्त संस्था के

कर्मचारी की सेवा-समाप्ति की दशा में शिक्षा निदेशक या उसके द्वारा इस निमित्त प्राधिकृत अधिकारी का पूर्व अनुमोदन अभिप्राप्त किया जाना चाहिए । धारा 18 में अनुशासनिक कार्यवाहियों/जांच के पश्चात् या यहां तक कि अनुशासनिक कार्यवाहियों/जांच के बिना भी सेवा-समाप्ति, बर्खास्तगी, या पंक्ति में अवनति के बीच कोई विभेद नहीं है । विधि की स्थिर स्थिति के अनुसार, कानून के उपबंधों को वैसे ही पढ़ा जाना चाहिए जैसे वे हैं । कुछ भी जोड़ा और/या घटाया नहीं जाना चाहिए । जो शब्द प्रयुक्त किए गए हैं वे हैं "किसी मान्यताप्राप्त संस्था के किसी कर्मचारी को जांच किए बिना हटाया नहीं जाएगा और इसमें यह भी उपबंधित है कि इस संबंध में कोई अंतिम आदेश तब तक पारित नहीं किया जाएगा जब तक शिक्षा निदेशक का पूर्व अनुमोदन अभिप्राप्त नहीं किया गया हो ।" धारा 18 के प्रथम भाग को पहले परंतुक के साथ पढ़ा जाना चाहिए । इन परिस्थितियों में, यह प्रतिकूल दृष्टिकोण अपनाना कि किसी मान्यताप्राप्त संस्था के ऐसे कर्मचारी को बर्खास्त करने/हटाए जाने की दशा में जिसे विभागीय जांच करने के पश्चात् बर्खास्त/हटाया जाता है, शिक्षा निदेशक का पूर्व अनुमोदन अपेक्षित नहीं है, असंधार्य है और इस सीमा तक **केंद्रीय अकादमी सोसाइटी** (उपर्युक्त) वाले मामले में राजस्थान उच्च न्यायालय की बृहतर न्यायपीठ का निर्णय विधि की दृष्टि में उचित नहीं है ।

5.6 अत: अधिनियम, 1989 की धारा 18 का सही निर्वचन करने पर विनिर्दिष्ट रूप से यह मत व्यक्त और अभिनिर्धारित किया जाता है कि किसी मान्यताप्राप्त संस्था के कर्मचारी को विभागीय जांच/कार्यवाहियां करने के पश्चात् सेवा-समाप्ति/हटाए जाने की दशा में भी अधिनियम, 1989 की धारा 18 के पहले परंतुक के अनुसार शिक्षा निदेशक का पूर्व अनुमोदन अभिप्राप्त किया जाना चाहिए ।

6. उपरोक्त को दृष्टिगत करते हुए और इसमें ऊपर उल्लिखित कारणों से उच्च न्यायालय की खंड न्यायपीठ द्वारा सेवा-समाप्ति के आदेश को, जो शिक्षा निदेशक का पूर्व अनुमोदन प्राप्त किए बिना पारित किया गया था, प्रत्यावर्तित करते हुए पारित किया गया आक्षेपित निर्णय और आदेश अभिखंडित और अपास्त किए जाने योग्य है और तदनुसार

अभिखंडित और अपास्त किया जाता है । सेवा-समाप्ति के आदेश को अपास्त करते हुए विद्वान् अधिकरण का आदेश, जिसकी पुष्टि विद्वान् एकल न्यायाधीश द्वारा की गई है, तद्द्वारा प्रत्यावर्तित किया जाता है । परिणामत:, अपीलार्थी को सेवा में बहाल किया जाएगा और इस तथ्य पर विचार करते हुए कि प्रत्यर्थी असहायता प्राप्त संस्था है/हैं और सेवा-समाप्ति का आदेश बहुत पहले वर्ष 1988 में पारित किया गया था, हम निदेश देते हैं कि अपीलार्थी 50 प्रतिशत पिछले वेतन का हकदार होगा, तथापि, वह ज्येष्ठता इत्यादि, यदि कोई है, सहित सभी अन्य फायदों का सैद्धांतिक रूप से हकदार होगा ।

6.1 2005 की खंड न्यायपीठ विशेष रिट अपील सं. 1077 में पारित आक्षेपित निर्णय और आदेश से उद्भूत 2003 की सिविल अपील सं. 100 को पूर्वोक्त सीमा तक मंजूर किया जाता है ।

6.2 अब जहां तक 2011 की खंड न्यायपीठ विशेष रिट अपील सं. 826 में पारित आक्षेपित निर्णय और आदेश से उद्भूत 2023 की सिविल अपील सं. 101 का संबंध है, उच्च न्यायालय की खंड न्यायपीठ ने सेवा-समाप्ति के आदेश को कायम रखते हुए, उक्त अपील पर कतई विचार नहीं किया था । अत: हम 2011 की खंड न्यायपीठ विशेष रिट अपील सं. 826 में उच्च न्यायालय द्वारा पारित किए गए आदेश को अपास्त करते हैं और इस पर विधि के अनुसार और इसके स्वयं के गुणागुण के आधार पर विनिश्चय करने के लिए मामले को उच्च न्यायालय को विप्रेषित करते हैं । तद्नुसार, दोनों अपीलें पूर्वोक्त सीमा तक और उपरोक्त निबंधनों के अनुसार मंजूर की जाती हैं । इस मामले के तथ्यों और परिस्थितियों में खर्चे के बारे में कोई आदेश नहीं किया जाएगा ।

अपीलें मंजूर की गईं ।

जस.

[2023] 1 उम. नि. प. 242

प्रसाद प्रधान और एक अन्य

बनाम

छत्तीसगढ़ राज्य

[2022 की दांडिक अपील सं. 2025]

24 जनवरी, 2023

न्यायमूर्ति कृष्ण मुरारी और न्यायमूर्ति एस. रवीन्द्र भट

दंड संहिता, 1860 (1860 का 45) – धारा 302/34 – हत्या – सामान्य आशय – अभियुक्तों द्वारा आयुधों से लैस होकर मृतक पर आक्रमण किया जाना – मृतक को पहुंची क्षतियों विशेष रूप से सिर पर पहुंची क्षति के कारण बीस दिनों के पश्चात् मृत्यु हो जाना – नातेदार साक्षियों का साक्ष्य – दोषसिद्धि – उच्च न्यायालय द्वारा पुष्टि – संधार्यता – जहां घटना के प्रत्यक्षदर्शी नातेदार साक्षियों का साक्ष्य विश्वसनीय और भरोसेमंद पाया गया हो, वहां केवल नातेदारी के आधार पर उनके साक्ष्य पर संदेह करते हुए उसे त्यक्त नहीं किया जा सकता और अभियुक्तों द्वारा आयुधों से लैस होकर घटनास्थल पर आने तथा किसी प्रकोपन के बिना मृतक पर आक्रमण करने से उनका पूर्व-चिंतन दर्शित होने, अभियुक्तों द्वारा मृतक के मार्मिक अंग सिर पर हमला किए जाने से उनके द्वारा स्थिति का असम्यक् फायदा उठाए जाने के कारण हत्या के अपराध के लिए उनकी दोषसिद्धि न्यायोचित है और मृतक की मृत्यु घटना घटने से बीस दिनों के पश्चात् होने के आधार पर उनका हत्या के अपराध का दायित्व कम नहीं हो जाएगा ।

इस अपील के तथ्यों के अनुसार, छत्तीसगढ़ राज्य द्वारा वृंदावन नामक व्यक्ति की मृत्यु की घटना के संबंध में अपीलार्थियों को अभियोजित किया गया था । अभियोजन पक्ष का यह अभिकथन था कि अपीलार्थी/अभियुक्त और मृतक वृंदावन चचेरे भाई थे । तारीख 28 फरवरी, 2012 को दोपहर बाद जब मृतक एक जेसीबी मशीन द्वारा अपनी भूमि को समतल कर रहा था, तब अपीलार्थी उस स्थान पर पहुंचे

और उस पर आक्रमण किया । वृंदावन को सिर पर क्षतियों सहित कई क्षतियां पहुंची । उसे अस्पताल ले जाया गया और चूंकि सिर पर गंभीर क्षतियां थीं इसलिए उसकी शल्य-क्रिया की गई । तथापि, वृंदावन को बचाया नहीं जा सका । मरणोत्तर परीक्षा करने वाले डाक्टर ने अपनी रिपोर्ट में उल्लेख किया कि मृतक की मृत्यु सिर पर पहुंचीं क्षतियों के कारण हुई थी । पुलिस ने मृतक वृंदावन की पुत्री द्वारा दर्ज की गई प्रथम इत्तिला रिपोर्ट के आधार पर सभी अभियुक्तों के विरुद्ध भारतीय दंड संहिता की धारा 34 के साथ पठित धारा 302 के अधीन मामला रजिस्ट्रीकृत किया । प्रथम इत्तिला रिपोर्ट में यह अभिकथन किया गया था कि अपीलार्थी घटनास्थल पर पहुंचे, वृंदावन को गालियां दी और फिर उस पर हमला किया । अभियुक्त-1 प्रसाद प्रधान के विरुद्ध अभिकथन यह था कि वह एक कुल्हाड़ी से लैस था और मृतक के सिर पर आक्रमण किया था । अभियुक्त-2 लिंगराज प्रधान के विरुद्ध अभिकथन यह था कि वह एक कुल्हाड़ी से लैस था और मृतक की टांगों पर हमला किया था । तीसरे अभियुक्त-सौदागर प्रधान, जो अभियुक्त-1 का पौत्र और अभियुक्त-2 का पुत्र है, के विरुद्ध अभिकथन यह था कि वह घटनास्थल पर गया था और मृतक को पकड़ लिया था । अंतिम रिपोर्ट फाइल किए जाने के पश्चात् विचारण न्यायालय द्वारा सभी तीनों अभियुक्तों को सामान्य आशय सांझा करने और फिर वृंदावन की हत्या करने के लिए भारतीय दंड संहिता की धारा 34 के साथ पठित धारा 294, 323 और धारा 34 के साथ पठित धारा 302 के अधीन अपराधों के लिए आरोपित किया गया । न्यायालय ने सभी अपीलार्थियों को उनके विरुद्ध अभिकथित अपराध कारित करने का दोषी अभिनिर्धारित किया और उन्हें हत्या के अपराध के लिए आजीवन कारावास और भारतीय दंड संहिता की धारा 323 के अधीन अपराध के लिए छह माह के कठोर कारावास का दंडादेश दिया । उच्च न्यायालय के समक्ष अपीलार्थियों की अपील को भागत: मंजूर किया गया । उच्च न्यायालय ने सौदागर प्रधान को दोनों अपराधों के लिए दोषमुक्त कर दिया किंतु अभियुक्त-1 और अभियुक्त-2 की दोषसिद्धि और दंडादेश की अभिपुष्टि की । अभियुक्तों द्वारा उच्च न्यायालय के निर्णय से व्यथित होकर उच्चतम न्यायालय में अपील फाइल की गई । उच्चतम न्यायालय द्वारा अपील खारिज करते हुए,

अभिनिर्धारित – अपीलार्थियों द्वारा किए गए हमले की प्रकृति और अभियोजन साक्षियों, विशेष रूप से अभि. सा. 1 से अभि. सा. 5, के प्रत्यक्षदर्शी परिसाक्ष्य की गुणवत्ता पर संदेह नहीं किया जा सकता है । इस न्यायालय की यह राय है इस परिस्थिति से कि अधिकांश साक्षी मृतक के नातेदार हैं, स्वयमेव उनका परिसाक्ष्य अपवर्जित नहीं हो जाता है । विश्वसनीयता और विश्वासप्रदता की कसौटी को लागू करने पर उनके परिसाक्ष्यों की दृढ़ता के संबंध में इस कसौटी का पूर्णत: समाधान हो जाता है । यद्यपि अभि. सा. 1 मृतक की पुत्री है, तो भी यह बात, उसने विचारण के दौरान जो यह दोहराया था कि उसने अपीलार्थियों को कुल्हाड़ियों से अपने पिता पर आक्रमण करते हुए देखा था, उसकी सत्यता पर संदेह करने के लिए अपर्याप्त है । उसने बीच-बचाव करने और मृतक को बचाने की कोशिश की थी और ऐसा करने पर उसकी टांग पर भी कुल्हाड़ी से प्रहार किया गया था । अपीलार्थियों की ओर से ऐसा कोई स्पष्टीकरण नहीं दिया गया है कि यह साक्षी क्यों मिथ्या रूप से अभिसाक्ष्य देगी; न ही इस बारे में कोई स्पष्टीकरण दिया गया है कि उसे कैसे क्षतियां पहुंच सकती थीं । सबसे महत्वपूर्ण बात यह है कि उसके परिसाक्ष्य की संपुष्टि अभि. सा. 2, अभि. सा. 3 और अभि. सा. 4 द्वारा की गई है । इसलिए इस न्यायालय की यह राय है कि अपीलार्थियों के विरुद्ध तथ्यात्मक अभियोगों के सभी महत्वपूर्ण पहलुओं पर और उन्होंने कैसे प्रकोपन के बिना मृतक पर आक्रमण किया था, संदेह नहीं किया जा सकता है । इसके पश्चात् प्रश्न यह है कि क्या अपीलार्थी भारतीय दंड संहिता की धारा 302 के अधीन दंडनीय हत्या के अपराध के दोषी हैं, या क्या वे दांडिक रूप से कम गंभीर धारा 304 के अधीन दायी हैं । जैसा कि कई निर्णयों में उल्लेख किया गया है, इस प्रश्न ने एक शताब्दी तक न्यायालयों को परेशान रखा । इन दोनों धाराओं के बीच विभेद, जिस रीति में वे भारतीय दंड संहिता की धारा 299 और धारा 300 के अधीन परिभाषित हैं, उसके कारण है । वर्तमान मामले में प्रश्न यह है कि क्या आक्रमण के कारण कारित की गई क्षति ऐसी है जो धारा 300 के तृतीय खंड के अंतर्गत आती है ("यदि वह किसी व्यक्ति को शारीरिक क्षति कारित करने के आशय से किया गया हो और वह शारीरिक क्षति, जिसके कारित करने का आशय हो, प्रकृति

के मामूली अनुक्रम में मृत्यु कारित करने के लिए पर्याप्त हो") अथवा क्या यह धारा 300 के चौथे खंड ("यदि कार्य करने वाला व्यक्ति यह जानता हो कि वह कार्य इतना आसन्नसंकट है कि पूरी अधिसंभाव्यता है कि वह मृत्यु कारित कर ही देगा या ऐसी शारीरिक क्षति कारित कर ही देगा जिससे मृत्यु कारित होना संभाव्य है और वह मृत्यु कारित करने या पूर्वोक्त रूप की क्षति कारित करने का जोखिम उठाने के लिए किसी प्रतिहेतु के बिना ऐसा कार्य करे") की अपहानि के अंतर्गत आती है । समवर्ती निष्कर्ष, जिन्हें स्वीकार करने में इस न्यायालय को कोई कठिनाई दिखाई नहीं देती है, यह हैं कि पहला, अपीलार्थी आक्रामक थे; दूसरा, उन्होंने कुल्हाड़ियों से मृतक पर आक्रमण किया था; तीसरा, मृतक निहत्था था; चौथा, आक्रमण के दौरान विपदग्रस्त की पुत्री अभि. सा. 1 घटनास्थल पर पहुंची और अपीलार्थियों को रोकने की कोशिश की; पांचवां, अपीलार्थियों ने विपदग्रस्त पर अपना हमला करना जारी रखा और इस साक्षी पर भी कुल्हाड़ी से आक्रमण किया; छठा, चूंकि अपीलार्थियों द्वारा कारित की गई तीन क्षतियां सिर पर थीं, इसलिए वह नीचे गिर गया था; सातवां, विपदग्रस्त को अस्पताल ले जाया गया था और शल्य-क्रिया के लिए एक अन्य विशेष अस्पताल में स्थानांतरित करना पड़ा था; आठवां मृतक अपना कथन अभिलिखित करने योग्य नहीं था; उसे कभी छुट्टी नहीं दी गई और 20 दिनों के पश्चात् अस्पताल में ही उसकी मृत्यु हो गई थी । अंतिमत:, जिस डाक्टर ने (अभि. सा. 14) मरणोत्तर परीक्षा की थी, उसने यह कथन किया था कि क्षतियां एक कठोर और कुंद वस्तु से कारित की गई थीं और मृतक की मृत्यु "उसके शरीर पर कारित कई सारी क्षतियों और उनकी जटिलताओं के परिणामस्वरूप" हृदय-श्वसन अवरुद्ध हो जाने के कारण हुई थी । सिर के अतिरिक्त, कई अन्य क्षतियां थीं जो कोहनी पर खरोंच, नील, पीठ पर नीचे की तरफ पसली का अस्थि भंग आदि के रूप में थीं । मृत्यु के समय वृंदावन की आयु 55 वर्ष थी । (पैरा 14, 15 और 20)

इसके पश्चात् प्रश्न यह है कि क्या मृतक और अपीलार्थियों के बीच "अचानक झगड़ा" हुआ था जिससे मामला हत्या का नहीं अपितु अपवाद 4 के निबंधनों के अनुसार ("यदि यह अचानक झगड़ा जनित आवेश की

तीव्रता हुई अचानक लड़ाई में पूर्व-चिंतन बिना और अपराधी द्वारा अनुचित लाभ उठाए बिना या क्रूरतापूर्ण अप्रायिक रीति से कार्य किए बिना किया गया हो") आपराधिक मानव वध का होगा । इस न्यायालय की राय में, कोई "अचानक झगड़ा" नहीं हुआ था । दो महत्वपूर्ण प्रत्यक्षदर्शी साक्षियों, अभि. सा. 1 और अभि. सा. 2 के परिसाक्ष्यों से सिद्ध होता है कि जब मृतक अपनी संपत्ति पर सेप्टिक टैंक को समतल कर रहा था, तब अभियुक्त/अपीलार्थी उसे गालियां देने लगे; उसने उन्हें ऐसा न करने के लिए कहा । अपीलार्थी, जो साथ लगी संपत्ति पर थे, दीवार पर चढ़ गए, मृतक के घर में प्रवेश किया और कुल्हाड़ियों से उस पर आक्रमण किया । इन तथ्यों से इस बात पर विचार करते हुए "अचानक झगड़े" का गठन नहीं होता है कि अपीलार्थियों ने मृतक को प्रकोपन के बिना गालियां दीं और फिर वे कुल्हाड़ियों से लैस होकर वहां गए, जहां वह था और उस पर आक्रमण किया । तर्क के लिए, यदि यह मान लिया जाए कि तथ्यों से यह प्रकट होता है कि अचानक लड़ाई हुई थी, तो भी यह नहीं कहा जा सकता कि अभियुक्तों ने क्रूरतापूर्ण रीति में कार्य नहीं किया था, या असम्यक् लाभ नहीं उठाया था । ऐसा इसलिए है क्योंकि वे आयुधों से लैस थे: यह एक ऐसा तथ्य है जिससे उनका पूर्व-चिंतन दर्शित होता है । इसके अतिरिक्त, उन दोनों ने मृतक के सिर पर आक्रमण किया था, जो शरीर का एक मार्मिक अंग है और इस प्रकार अपनी स्थिति का असम्यक् लाभ उठाया था । पुनः, इस प्रश्न पर कि क्या इस मामले के तथ्य धारा 300 के पहले अपवाद के अंतर्गत आते हैं अर्थात् अभियुक्तों/अपीलार्थियों ने गंभीर और अचानक प्रकोपन के कारण अपना आत्म-संयम खो देने के कारण वह कार्य किया था जिनका उन पर अभियोग लगाया गया था (आक्रमण और गंभीर क्षतियां कारित करना जिनके परिणाम वृंदावन की मृत्यु हुई थी) – उत्तर वही होना चाहिए और वह है कि इस उपबंध (धारा 300 का अपवाद 1) को लागू नहीं किया जा सकता । लंबे समय से चले आ रहे पहले से विद्यमान विवाद के अतिरिक्त, अपीलार्थियों को किस बात से "अचानक" प्रकोपन हुआ था, उनके द्वारा इसे दर्शित नहीं किया गया है । अपवाद 1 के अंतर्गत आने के लिए न तो उन्होंने कोई साक्ष्य प्रस्तुत किया और न ही ऐसी दलील को सिद्ध करने के लिए अभिलेख पर साक्ष्य है । सुनवाई के

दौरान, अपीलार्थियों की ओर से काउंसेल ने दलील दी कि वृंदावन की मृत्यु आक्रमण करने के बीस दिन पश्चात् हुई थी और इतना समय बीत जाने से यह दर्शित होता है कि क्षतियां प्रकृति के मामूली अनुक्रम में मृत्यु कारित करने के लिए पर्याप्त नहीं थीं । इस पहलू पर, कई सारे निर्णय हैं जिनमें इस बात पर जोर दिया गया है कि ऐसा समय बीत जाने से स्वयंमेव अपराधी के हत्या के अपराध के दायित्व को हत्या की कोटि में न आने वाले आपराधिक मानव वध के रूप में कम करने के लिए एक निश्चायक बात का गठन नहीं होगा । ऐसी कोई रूढ़िबद्ध धारणा या सूत्र नहीं है कि जहां मृत्यु क्षतियां (जिनसे मृत्यु हो सकती थी) कारित होने के कुछ समय बीत जाने के पश्चात् होती है, वहां आपराधिक मानव वध का अपराध होता है । प्रत्येक मामले की अपनी विशेष तथ्यात्मक स्थिति होती है । तथापि, जो महत्वपूर्ण है वह है क्षतियों का स्वरूप, और क्या यह मामूली अनुक्रम में मृत्यु का कारण बनने के लिए पर्याप्त हैं । चिकित्सीय देख-रेख की पर्याप्तता या अन्यथा की बात इस मामले में सुसंगत नहीं है क्योंकि मरणोत्तर परीक्षा करने वाले डाक्टर ने स्पष्ट रूप से यह अभिसाक्ष्य दिया था कि मृत्यु मृतक को पहुंची क्षतियों के परिणामस्वरूप हृदय-श्वसन अवरुद्ध हो जाने के कारण हुई थी । इस प्रकार, क्षतियां और मृत्यु घनिष्ठ और प्रत्यक्ष रूप से संबद्ध थी । (पैरा 22, 23, 24, 25 और 26)

निर्दिष्ट निर्णय

पैरा

[2019] (2019) 5 एस. सी. सी. 639 :
राजस्थान राज्य बनाम **कन्हैया लाल** ; 12

[2019] (2019) 13 एस. सी. सी. 131 :
राजस्थान राज्य बनाम **लीला राम** ; 12

[2015] (2015) 7 एस. सी. सी. 641 :
संतोष पुत्र शंकर पवार बनाम **महाराष्ट्र राज्य** ; 19

[2011] (2011) 9 एस. सी. सी. 115 :
राजस्थान राज्य बनाम **अर्जुन सिंह और अन्य** ; 12

[2006] (2006) 11 एस. सी. सी. 444 :
पुलीचेर्ला नागराजू उर्फ **नागराजा रेड्डी** बनाम
आंध्र प्रदेश राज्य ; 16

[2002] (2002) 1 एस. सी. सी. 22 :
पटेल हीरालाल जोयताराम बनाम **गुजरात राज्य** ; 25

[1992] [1992] 3 एस. सी. आर. 921 :
ओम प्रकाश बनाम **पंजाब राज्य** ; 25

[1977] [1977] 3 उम. नि. प. 1104 =
[1977] 1 एस. सी. आर. 601 :
आंध्र प्रदेश राज्य बनाम **रायवरपू पुन्नया** ; 16

[1975] (1975) 3 एस. सी. सी. 831 :
सुदर्शन कुमार बनाम **दिल्ली राज्य** ; 12, 25

[1968] [1968] 1 उम. नि. प. 21 =
[1968] 2 एस. सी. आर. 522 :
मध्य प्रदेश राज्य बनाम **राम प्रसाद** ; 19

[1962] [1962] 1 एस. सी. आर. (सप्ली.) 567 :
के. एम. नानावती बनाम **महाराष्ट्र राज्य** ; 23

[1958] [1958] एस. सी. आर. 1495 :
विरसा सिंह बनाम **पंजाब राज्य** । 15

अपीली (दांडिक) अधिकारिता : 2022 की दांडिक अपील सं. 2025.

2013 की दांडिक अपील सं. 178 में छत्तीसगढ़ उच्च न्यायालय, बिलासपुर द्वारा तारीख 20 फरवरी, 2019 को पारित निर्णय और आदेश के विरुद्ध अपील ।

अपीलार्थियों की ओर से सर्वश्री रवि प्रकाश मेहरोत्रा, ज्येष्ठ अधिवक्ता, अपूर्व श्रीवास्तव और जोगी स्कारिया

प्रत्यर्थी की ओर से सर्वश्री सौरव राय, उप महाधिवक्ता,

महेश कुमार, कौशल शर्मा, निखिलेख कुमार, (सुश्री) देविका खन्ना, (श्रीमती) वी. डी. खन्ना और वीएमजेड चेम्बर्स

न्यायालय का निर्णय न्यायमूर्ति एस. रवीन्द्र भट ने दिया ।

न्या. भट – विशेष इजाजत द्वारा यह अपील 2013 की दांडिक अपील सं. 178 में छत्तीसगढ़ उच्च न्यायालय के वर्तमान अपीलार्थियों पर अभिलिखित दोषसिद्धि और अधिरोपित दंडादेश की पुष्टि करते हुए तारीख 20 फरवरी, 2019 को पारित निर्णय और आदेश से उद्भूत हुई है ।

2. छत्तीसगढ़ राज्य (जिसे इसमें इसके पश्चात् "राज्य" कहा गया है) ने वृंदावन नामक व्यक्ति की मृत्यु की घटना के संबंध में अपीलार्थियों को अभियोजित किया था । अभियोजन पक्ष का यह अभिकथन था कि अपीलार्थी/अभियुक्त और मृतक वृंदावन चचेरे भाई थे । तारीख 28 फरवरी, 2012 को दोपहर बाद जब मृतक एक जेसीबी मशीन द्वारा अपनी भूमि को समतल कर रहा था, तब अपीलार्थी उस स्थान पर पहुंचे और उस पर आक्रमण किया । वृंदावन को सिर पर क्षतियों सहित कई क्षतियां पहुंचीं । उसे अस्पताल ले जाया गया और डा. बागेश्वर पटेल (अभि. सा. 11) द्वारा परीक्षण किया गया । चूंकि सिर पर गंभीर क्षतियां थीं इसलिए डा. एस. एन. मधारिया (अभि. सा. 15) द्वारा वृंदावन की शल्यक्रिया की गई । तथापि, वृंदावन को बचाया नहीं जा सका और तारीख 23 मार्च, 2012 को उसकी मृत्यु हो गई । डा. एस. के. बाघ (अभि. सा. 14) ने मरणोत्तर परीक्षा की और अपनी रिपोर्ट (प्रदर्श पी-28) में उल्लेख किया कि मृतक की मृत्यु सिर पर पहुंचीं क्षतियों के कारण हुई थी ।

3. पुलिस ने मृतक वृंदावन की पुत्री आरती प्रधान (अभि. सा. 1) द्वारा दर्ज की गई प्रथम इत्तिला रिपोर्ट के आधार पर सभी अभियुक्तों के विरुद्ध भारतीय दंड संहिता की धारा 34 के साथ पठित धारा 302 के अधीन मामला रजिस्ट्रीकृत किया । प्रथम इत्तिला रिपोर्ट (प्रदर्श पी-1) में यह अभिकथन किया गया था कि अपीलार्थी घटनास्थल पर पहुंचे, वृंदावन को गालियां दीं और फिर उस पर हमला किया । अभियुक्त सं. 1

प्रसाद प्रधान के विरुद्ध अभिकथन यह था कि वह एक कुल्हाड़ी से लैस था और मृतक के सिर पर आक्रमण किया था । अभियुक्त सं. 2 लिंगराज प्रधान के विरुद्ध अभिकथन यह था कि वह एक कुल्हाड़ी से लैस था और मृतक की टांगों पर हमला किया था । तीसरे अभियुक्त-सौदागर प्रधान, जो अभियुक्त सं. 1 का पौत्र और अभियुक्त सं. 2 का पुत्र है, के विरुद्ध अभिकथन यह था कि वह घटनास्थल पर गया था और मृतक को पकड़ लिया था । तथापि, सौदागर प्रधान इस न्यायालय के समक्ष अपीलार्थी नहीं है ।

4. अंतिम रिपोर्ट फाइल किए जाने के पश्चात् विचारण न्यायालय ने सभी तीनों अभियुक्तों को सामान्य आशय सांझा करने और फिर वृंदावन की हत्या करने के लिए आरोपित किया – उन्हें भारतीय दंड संहिता की धारा 34 के साथ पठित धारा 294, 323 और धारा 34 के साथ पठित धारा 302 के अधीन अपराधों के लिए आरोपित किया गया । अपीलार्थियों द्वारा दोषिता से इनकार करने पर उनका विचारण किया गया । अभियोजन पक्ष ने कुल मिलाकर 15 साक्षियों की परीक्षा की । आरती प्रधान (अभि. सा. 1), नरोत्तम (अभि. सा. 2), साफेद प्रधान (अभि. सा. 3), रुक्णी (अभि. सा. 4), अयोध्या बाई (अभि. सा. 5) और नवीन साहू (अभि. सा. 6) मृतक के नातेदार हैं । अपीलार्थियों ने दो प्रतिरक्षा साक्षियों की परीक्षा कराई । न्यायालय ने सभी अपीलार्थियों को उनके विरुद्ध अभिकथित अपराध कारित करने का दोषी अभिनिर्धारित किया और उन्हें हत्या के अपराध के लिए आजीवन कारावास और भारतीय दंड संहिता की धारा 323 के अधीन अपराध के लिए छह माह के कठोर कारावास का दंडादेश दिया । उच्च न्यायालय के समक्ष अपीलार्थियों की अपील को आक्षेपित निर्णय द्वारा भागत: मंजूर किया गया । उच्च न्यायालय ने सौदागर प्रधान को दोनों अपराधों के लिए दोषमुक्त कर दिया किंतु वर्तमान अपीलार्थियों (अभियुक्त सं. 1 और अभियुक्त सं. 2) की दोषसिद्धि और दंडादेश की अभिपुष्टि की । परिणामत:, वे इस न्यायालय के समक्ष आए हैं ।

अपीलार्थियों की दलीलें

5. अपीलार्थियों ने दलील दी कि अभियोजन पक्ष के साक्ष्य को

त्यक्त किया जाना चाहिए । तीनों प्रत्यक्षदर्शी साक्षियों की विश्वसनीयता अधिक्षेपणीय है क्योंकि वे मृतक के नातेदार हैं और इसके अतिरिक्त, अपीलार्थियों के अनुसार, उनके कथन अन्यथा तात्विक विरोधाभासों से ग्रसित हैं और अविश्वसनीय हैं । विद्वान् काउंसेल ने दलील दी कि समग्र रूप से विचार करने पर साक्ष्य से यह निष्कर्ष नहीं निकाला जा सकता कि सामान्य आशय का निष्कर्ष सिद्ध होता है । विद्वान् काउंसेल ने दलील दी कि विवाद घटनास्थल पर तड़क-भड़क में अचानक तब उद्भूत हुआ था जब मृतक वृंदावन विवादग्रस्त भूमि को समतल करने लगा, जिसके कारण अपीलार्थी (जो उसी अवस्थान में एक-दूसरे से सटे मकानों में रहते थे) अपने मकानों से बाहर आए और अभिकथित रूप से मृतक पर आक्रमण किया । अत: यह दलील दी गई कि इन परिस्थितियों में अपीलार्थी केवल अपने-अपने स्पष्ट कृत्यों की सीमा तक दायी हैं । आनुकल्पिक रूप से यह दलील दी गई कि घटना अचानक और पूर्व-चिंतन के बिना घटित हुई थी । अपीलार्थियों का मृत्यु कारित करने का कोई आशय नहीं था अपितु विवादग्रस्त भूमि पर कोई कार्यकलाप करने के लिए वृंदावन को रोकना था । अत: अपीलार्थियों की दोषसिद्धि भारतीय दंड संहिता की धारा 304, भाग 2 से परे नहीं जा सकती है ।

6. अपीलार्थियों की ओर से विद्वान् काउंसेल ने यह भी दलील दी कि वृंदावन की मृत्यु शल्यक्रिया में समस्या आने के कारण घटना के लगभग 20 दिन पश्चात् हुई थी और यह नहीं कहा जा सकता कि मृत्यु का कारण क्षति थी क्योंकि अभियोजन पक्ष यह साबित नहीं कर सका था कि मृतक को कारित क्षति प्रकृति के मामूली अनुक्रम में मृत्यु कारित करने के लिए पर्याप्त थी । विद्वान् काउंसेल ने रेखांकित किया कि अपीलार्थियों द्वारा कारित क्षति, विशिष्ट रूप से सिर पर क्षति, पर टांके लगाए गए थे और घाव भर गया था । विद्वान् काउंसेल ने इस बात पर जोर दिया कि वृंदावन की मृत्यु, जैसा कि अभि. सा. 14 द्वारा उल्लेख किया गया है, हृदय-श्वसन अवरुद्ध हो जाने के कारण हुई थी । ऐसी स्थिति में, निचले न्यायालयों का यह निष्कर्ष स्पष्ट रूप से विधि की दृष्टि से गलत था कि अपीलार्थी भारतीय दंड संहिता की धारा 302 के अधीन अपराध के दोषी थे । यह दलील दी गई कि यदि यह कहा जा

सके कि अभियोजन पक्ष ने अपीलार्थियों द्वारा मृतक पर आक्रमण करने की बात को साबित किया है, तो मृत्यु का कारण न तो तत्काल था और न ही इसका प्रत्यक्ष परिणाम था । इसलिए भारतीय दंड संहिता की धारा 302 के अधीन हत्या के अपराध के संघटकों को युक्तियुक्त संदेह के परे साबित किए जाने का कोई प्रश्न नहीं है ।

7. यह दलील दी गई कि सभी बातों पर विचार करते हुए अपीलार्थियों को अधिक से अधिक भारतीय दंड संहिता की धारा 304, भाग 1 के अधीन हत्या की कोटि में न आने वाले आपराधिक मानव वध के अपराध के लिए दोषसिद्ध किया जा सकता था चूंकि न तो उनका आशय मृतक की हत्या करने का था और न ही ऐसी क्षति पहुंचाने का था जो प्रकृति के मामूली अनुक्रम में मृत्यु कारित करने के लिए पर्याप्त हो – यह बात आक्रमण के बाद 20 दिनों तक उसके जीवित रहने की परिस्थिति से सिद्ध होती है । यह दलील दी गई कि दोषसिद्धि को उपांतरित करके अपीलार्थियों को इस उपबंध के अधीन फायदा दिया जाना चाहिए । विद्वान् काउंसेल ने अपनी दलील को न्यायोचित ठहराते हुए यह कहा कि अपीलार्थियों और मृतक के बीच विवादों का इतिहास पुराना था । एक भारी जेसीबी मशीन बुलाने, संपत्ति पर टैंक की मरम्मत कराने में मृतक का आचरण, पुरानी दुश्मनी को देखते हुए, जैसा कि अभियोजन साक्षी (अभि. सा. 1) ने अभिसाक्ष्य दिया है, एक अचानक प्रकोपन देने वाला था । अत: भारतीय दंड संहिता की धारा 300 का अपवाद इस मामले के तथ्यों को लागू होता है ।

8. यह दलील दी गई कि उच्च न्यायालय ने जिस रीति में तीसरे अभियुक्त सौदागर प्रधान को संदेह का फायदा दिया था, उस रीति में अपीलार्थियों को संदेह का फायदा न देकर गलती की है । यह दलील दी गई कि उसकी अभिकथित अंतर्ग्रस्तता के संबंध में साक्ष्य और सामग्री वही थे जो अपीलार्थियों के मामले में थे, इसलिए वे भी उसी रीति में व्यवहार किए जाने और दोषमुक्त किए जाने के हकदार थे ।

राज्य/प्रत्यर्थी की दलीलें

9. राज्य की ओर से यह दलील दी गई कि निचले न्यायालयों के समवर्ती निष्कर्षों तथा अधिरोपित दंडादेश में किसी हस्तक्षेप की

आवश्यकता नहीं है क्योंकि उनमें कोई स्पष्ट खामी या गलती नहीं है । विद्वान् काउंसेल ने दो डाक्टरों द्वारा दिए गए अभिसाक्ष्यों का अवलंब लिया और यह भी रेखांकित किया कि विपदग्रस्त अपनी क्षतियों से कभी होश में नहीं आ सका था; यहां तक कि वह कोई कथन अभिलिखित कराने की स्थिति में भी नहीं था । यह भी दलील दी गई कि विपदग्रस्त घटना के पश्चात् जितनी अवधि तक जीवित रहा, वह अस्पताल में था जहां वह कभी होश में नहीं आया और उसकी मृत्यु ही हो गई ।

10. यह दलील दी गई कि प्रत्यक्षदर्शी साक्षी के रूप में अभि. सा. 1 की विश्वसनीयता को प्रश्नगत नहीं किया जा सकता; वास्तव में वह भी आक्रमण का शिकार हुई थी और उसे अभियुक्त/अपीलार्थियों में से एक द्वारा किए गए कुल्हाड़ी के प्रहार के कारण टांग पर क्षतियां पहुंची थीं । इसी प्रकार से, विद्वान् काउंसेल ने यह कहा कि मृतक के एक अन्य भाई अभि. सा. 2 ने अभि. सा. 1 के साक्ष्य की सभी तात्विक पहलुओं पर अभिपुष्टि की थी । उसने दोनों अभियुक्तों को अभि. सा. 1 द्वारा अभिसाक्ष्य दी गई रीति में आयुध लिए हुए और मृतक पर आक्रमण करते हुए देखा था । इसके अतिरिक्त, मृतक की पत्नी अभि. सा. 3 ने भी अन्य दो साक्षियों के परिसाक्ष्यों की अभिपुष्टि की थी । यद्यपि उसने वास्तविक हमले को नहीं देखा था, तो भी उसने दो अपीलार्थियों को कुल्हाड़ियों से लैस देखा था । अभि. सा. 3 की देवरानी अभि. सा. 4 ने भी यह अभिसाक्ष्य दिया था कि वृंदावन पर अभियुक्तों द्वारा उस समय आक्रमण किया गया था जब वह सैप्टिक टैंक के निकट सफाई के काम में लगा था और दो अपीलार्थियों ने कुल्हाड़ियों से उस पर आक्रमण किया था ।

11. विद्वान् काउंसेल ने दलील दी कि मृतक का चिकित्सीय परीक्षण डा. बागेश्वर पटेल (अभि. सा. 11) ने किया था और उसने चिकित्सा रिपोर्ट (प्रदर्श पी-21) तैयार की थी । शल्य-चिकित्सक, डा. एस. एन. मधारिया (अभि. सा. 15) ने यह अभिसाक्ष्य दिया था कि मृतक की खोपड़ी का पिछला हिस्सा टूटा हुआ था और उसकी शल्यक्रिया की गई थी । डा. एस. के. बाघ (अभि. सा. 14), जिसने मरणोत्तर परीक्षा की थी, ने वर्तमान मामले में मृत्यु के कारण के संबंध में स्पष्ट

रूप से उल्लेख किया था, जिसने मृत्यु का कारण कई सारी क्षतियों के कारण हृदय-श्वसन अवरुद्ध हो जाना बताया था । अपीलार्थी प्रतिपरीक्षा में इस साक्षी से यह बात नहीं निकलवा सके थे कि मृतक को पहुंची क्षति प्रकृति के मामूली अनुक्रम में मृत्यु कारित करने के लिए अपर्याप्त थीं या मृत्यु शल्यक्रिया संबंधी समस्या के कारण हुई थी न कि क्षति के कारण ।

12. राज्य की ओर से विद्वान् काउंसेल ने **सुदर्शन कुमार** बनाम **दिल्ली राज्य**[1], **राजस्थान राज्य** बनाम **अर्जुन सिंह और अन्य**[2], **राजस्थान राज्य** बनाम **कन्हैया लाल**[3] और **राजस्थान राज्य** बनाम **लीला राम**[4] वाले मामलों में इस न्यायालय के विनिश्चयों का यह दलील देने के लिए अवलंब लिया कि इस मामले के तथ्यों से अपीलार्थियों की इस दलील का समर्थन नहीं होता है कि धारा 304, भाग 2 के अधीन आपराधिक मानव वध का अपराध बनता है । यह दलील दी गई कि इस मामले में पहले से विद्यमान विवाद के कारण यह नहीं कहा जा सकता कि इससे एक "गंभीर और अचानक" प्रकोपन का गठन होता है । इसके अतिरिक्त, विपदग्रस्त कुछ समय तक जीवित रहा था, यह परिस्थिति स्वयंमेव एक असंगत बात है चूंकि अभियोजन पक्ष ने यह सिद्ध किया था कि मृत्यु का कारण प्रत्यक्ष रूप से मृतक को पहुंचीं उन क्षतियों से जुड़ा था जो अपीलार्थियों द्वारा कारित की गई थीं ।

13. विद्वान् काउंसेल ने दलील दी कि इस मामले के तथ्यों में स्पष्ट रूप से भारतीय दंड संहिता की धारा 300 का अपवाद 4 लागू नहीं होता है क्योंकि अपीलार्थियों ने वास्तव में एक अप्रायिक और क्रूर रीति में व्यवहार किया था और स्थिति का सम्यक् लाभ भी उठाया था क्योंकि वे पूरी तरह से आयुधों से लैस थे और मृतक पर गंभीर क्षतियां कारित की थीं जिसके पास न तो आयुध था और न ही उन्हें प्रकोपन दिया था ।

---

[1] (1975) 3 एस. सी. सी. 831.

[2] (2011) 9 एस. सी. सी. 115.

[3] (2019) 5 एस. सी. सी. 639.

[4] (2019) 13 एस. सी. सी. 131.

विश्लेषण और निष्कर्ष

14. इस मामले में, अपीलार्थियों द्वारा किए गए हमले की प्रकृति और अभियोजन साक्षियों, विशेष रूप से अभि. सा. 1 से अभि. सा. 5, के प्रत्यक्षदर्शी परिसाक्ष्य की गुणवत्ता पर संदेह नहीं किया जा सकता है । इस न्यायालय की यह राय है इस परिस्थिति से कि अधिकांश साक्षी मृतक के नातेदार हैं, स्वयंमेव उनका परिसाक्ष्य अपवर्जित नहीं हो जाता है । विश्वसनीयता और विश्वासप्रदता की कसौटी को लागू करने पर इस कसौटी का उनके परिसाक्ष्यों की दृढ़ता के संबंध में पूर्णत: समाधान हो जाता है । यद्यपि अभि. सा. 1 मृतक की पुत्री है, तो भी उसने विचारण के दौरान जो यह दोहराया था कि उसने अपीलार्थियों को कुल्हाड़ियों से अपने पिता पर आक्रमण करते हुए देखा था, यह बात उसकी सत्यता पर संदेह करने के लिए अपर्याप्त है । उसने बीच-बचाव करने और मृतक को बचाने की कोशिश की थी और ऐसा करने पर उसकी टांग पर भी कुल्हाड़ी से प्रहार किया गया था । अपीलार्थियों की ओर से ऐसा कोई स्पष्टीकरण नहीं दिया गया है कि यह साक्षी क्यों मिथ्या रूप से अभिसाक्ष्य देगी; न ही इस बारे में कोई स्पष्टीकरण दिया गया है कि उसे कैसे क्षतियां पहुंच सकती थीं । सबसे महत्वपूर्ण बात यह है कि उसके परिसाक्ष्य की संपुष्टि अभि. सा. 2, अभि. सा. 3 और अभि. सा. 4 द्वारा की गई है । इसलिए इस न्यायालय की यह राय है कि अपीलार्थियों के विरुद्ध तथ्यात्मक अभियोगों के सभी महत्वपूर्ण पहलुओं पर और उन्होंने कैसे प्रकोपन के बिना मृतक पर आक्रमण किया था, संदेह नहीं किया जा सकता है ।

15. इसके पश्चात् प्रश्न यह है कि क्या अपीलार्थी भारतीय दंड संहिता की धारा 302 के अधीन दंडनीय हत्या के अपराध के दोषी हैं, या क्या वे दांडिक रूप से कम गंभीर धारा 304 के अधीन दायी हैं । जैसा कि कई निर्णयों में उल्लेख किया गया है, इस प्रश्न ने एक शताब्दी तक न्यायालयों को परेशान रखा । इन दोनों धाराओं के बीच विभेद जिस रीति में वे भारतीय दंड संहिता की धारा 299 और धारा 300 के अधीन परिभाषित हैं, उसके कारण है । ये धाराएं इस प्रकार हैं :–

"**धारा 299 आपराधिक मानव वध** – जो कोई मृत्यु कारित

करने के आशय से, या ऐसी शारीरिक क्षति कारित करने के आशय से जिससे मृत्यु कारित हो जाना संभाव्य हो, या यह ज्ञान रखते हुए कि यह संभाव्य है कि वह उस कार्य से मृत्यु कारित कर दे, कोई कार्य करके मृत्यु कारित कर देता है, वह आपराधिक मानव वध का अपराध करता है ।

दृष्टांत

(क) **क** एक गड्ढे पर लकड़ियां और घास इस आशय से बिछाता है कि तद्द्वारा मृत्यु कारित करे या यह ज्ञान रखते हुए बिछाता है कि संभाव्य है कि तद्द्वारा मृत्यु कारित हो । **य** यह विश्वास करते हुए कि वह भूमि सुदृढ़ है उस पर चलता है, उसमें गिर पड़ता है और मारा जाता है । **क** ने आपराधिक मानव वध का अपराध किया है ।

(ख) **क** यह जानता है कि **य** एक झाड़ी के पीछे है । **ख** यह नहीं जानता । **य** की मृत्यु करने के आशय से या यह जानते हुए कि उससे **य** की मृत्यु कारित होना संभाव्य है, **ख** को उस झाड़ी पर गोली चलाने के लिए **क** उत्प्रेरित करता है । **ख** गोली चलाता है और **य** को मार डालता है । यहां यह हो सकता है कि **ख** किसी भी अपराध का दोषी न हो, किंतु **क** ने आपराधिक मानव वध का अपराध किया है ।

(ग) **क** एक मुर्गे को मार डालने और उसे चुरा लेने के आशय से उस पर गोली चलाकर **ख** को, जो एक झाड़ी के पीछे है, मार डालता है, किंतु **क** यह नहीं जानता था कि **ख** वहां है । यहां, यद्यपि **क** विधिविरुद्ध कार्य कर रहा था, तथापि वह आपराधिक मानव वध का दोषी नहीं है क्योंकि उसका आशय **ख** को मार डालने का, या कोई ऐसा कार्य करके, जिससे मृत्यु कारित करना वह संभाव्य जानता हो, मृत्यु कारित करने का नहीं था ।

स्पष्टीकरण 1 – वह व्यक्ति, जो किसी दूसरे व्यक्ति को, जो किसी विकार, रोग या अंग-शैथिल्य से ग्रस्त है, शारीरिक क्षति कारित करता है और तद्द्वारा उस दूसरे व्यक्ति की मृत्यु त्वरित कर देता है, उसकी मृत्यु कारित करता है, यह समझा जाएगा ।

स्पष्टीकरण 2 – जहां कि शारीरिक क्षति से मृत्यु कारित की गई हो, वहां जिस व्यक्ति ने, ऐसी शारीरिक क्षति कारित की हो, उसने वह मृत्यु कारित की है, यह समझा जाएगा, यद्यपि उचित

उपचार और कौशलपूर्ण चिकित्सा करने से वह मृत्यु रोकी जा सकती थी ।

स्पष्टीकरण 3 – मां के गर्भ में स्थित किसी शिशु की मृत्यु कारित करना मानव वध नहीं है । किंतु किसी जीवित शिशु की मृत्यु कारित करना आपराधिक मानव वध की कोटि में आ सकेगा, यदि उस शिशु का कोई भाग बाहर निकल आया हो, यद्यपि उस शिशु ने श्वास न ली हो या वह पूर्णत: उत्पन्न न हुआ हो ।

धारा 300 हत्या – एतस्मिन् पश्चात् अपवादित दशाओं को छोड़कर आपराधिक मानव वध हत्या है, यदि वह कार्य, जिसके द्वारा मृत्यु कारित की गई हो, मृत्यु कारित करने के आशय से किया गया हो, अथवा

दूसरा – यदि वह ऐसी शारीरिक क्षति कारित करने के आशय से किया गया हो जिससे अपराधी जानता हो कि उस व्यक्ति की मृत्यु कारित करना संभाव्य है जिसको वह अपहानि कारित की गई है, अथवा

तीसरा – यदि वह किसी व्यक्ति को शारीरिक क्षति कारित करने के आशय से किया गया हो और वह शारीरिक क्षति, जिसके कारित करने का आशय हो, प्रकृति के मामूली अनुक्रम में मृत्यु कारित करने के लिए पर्याप्त हो, अथवा

चौथा – यदि कार्य करने वाला व्यक्ति यह जानता हो कि वह कार्य इतना आसन्नसंकट है कि पूरी अधिसंभाव्यता है कि वह मृत्यु कारित कर ही देगा या ऐसी शारीरिक क्षति कारित कर ही देगा जिससे मृत्यु कारित होना संभाव्य है और वह मृत्यु कारित करने या पूर्वोक्त रूप की क्षति कारित करने का जोखिम उठाने के लिए किसी प्रतिहेतु के बिना ऐसा कार्य करे ।

दृष्टांत

(क) **य** को मार डालने के आशय से **क** उस गोली चलाता है परिणामस्वरूप **य** मर जाता है । **क** हत्या करता है ।

(ख) **क** यह जानते हुए कि **य** ऐसे रोग से ग्रस्त है कि संभाव्य है कि एक प्रहार उसकी मृत्यु कारित कर दे, शारीरिक क्षति कारित करने के आशय से उस पर आघात करता है । **य** उस प्रहार के परिणामस्वरूप मर जाता है । **क** हत्या का दोषी है, यद्यपि वह प्रहार किसी अच्छे स्वस्थ व्यक्ति की मृत्यु करने के लिए प्रकृति के मामूली अनुक्रम में पर्याप्त न होता । किंतु यदि **क**, यह न जानते हुए कि **य** किसी रोग से ग्रस्त है, उस पर ऐसा प्रहार करता है, जिससे कोई अच्छा स्वस्थ व्यक्ति प्रकृति के मामूली अनुक्रम में न मरता, तो यहां, **क**, यद्यपि शारीरिक क्षति कारित करने का उसका आशय हो, हत्या का दोषी नहीं है, यदि उसका आशय मृत्यु कारित करने का या ऐसी शारीरिक क्षति कारित करने का नहीं था, जिससे प्रकृति के मामूली अनुक्रम में मृत्यु कारित हो जाए ।

(ग) **य** को तलवार या लाठी से ऐसा घाव **क** साशय करता है, जो प्रकृति के मामूली अनुक्रम में किसी मनुष्य की मृत्यु कारित करने के लिए पर्याप्त है । परिणामस्वरूप **य** की मृत्यु कारित हो जाती है, यहां **क** हत्या का दोषी है, यद्यपि उसका आशय **य** की मृत्यु कारित करने का न रहा हो ।

(घ) **क** किसी प्रतिहेतु के बिना व्यक्तियों के एक समूह पर भरी हुई तोप चलाता है और उनमें से एक का वध कर देता है । **क** हत्या का दोषी है, यद्यपि किसी विशिष्ट व्यक्ति की मृत्यु कारित करने की उसकी पूर्व-चिंतित परिकल्पना न रही हो ।

अपवाद 1 – आपराधिक मानव वध कब हत्या नहीं है – आपराधिक मानव वध हत्या नहीं है, यदि अपराधी उस समय जब कि वह गंभीर और अचानक प्रकोपन से आत्म-संयम की शक्ति से वंचित हो, उस व्यक्ति, की जिसने कि वह प्रकोपन दिया था, मृत्यु कारित करे या किसी अन्य व्यक्ति की मृत्यु भूल या दुर्घटनावश कारित करे ।

ऊपर का अपवाद निम्नलिखित परंतुकों के अध्यधीन है –

पहला – यह कि वह प्रकोपन किसी व्यक्ति का वध करने या अपहानि करने के लिए अपराधी द्वारा प्रतिहेतु के रूप में ईप्सित न हो या स्वेच्छया प्रकोपित न हो ।

दूसरा – यह कि वह प्रकोपन किसी ऐसी बात द्वारा न दिया

गया हो, जो विधि के पालन में या लोक सेवक द्वारा ऐसे लोक सेवक की शक्तियों के विधिपूर्ण प्रयोग में हो, की गई हो ।

तीसरा – यह कि वह प्रकोपन किसी ऐसी बात द्वारा न दिया गया हो, जो प्राइवेट प्रतिरक्षा के अधिकार के विधिपूर्ण प्रयोग में की गई हो ।

स्पष्टीकरण – प्रकोपन इतना गंभीर और अचानक था या नहीं कि अपराध को हत्या की कोटि में जाने से बचा दे, यह तथ्य का प्रश्न है ।

दृष्टांत

(क) **य** द्वारा दिए गए प्रकोपन के कारण प्रदीप्त आवेश के असर में **म** का, जो **य** का शिशु है, **क** साशय वध करता है । यह हत्या है, क्योंकि प्रकोपन उस शिशु द्वारा नहीं दिया गया था और उस शिशु की मृत्यु उस प्रकोपन से किए गए कार्य को करने में दुर्घटना या दुभाग्य से नहीं हुई है ।

(ख) **क** को **म** गंभीर और अचानक प्रकोपन देता है । **क** इस प्रकोपन से **म** पर पिस्तौल चलाता है, जिसमें न तो उसका आशय **य** का, जो समीप ही है किंतु दृष्टि से बाहर है, वध करने का है, और न वह यह जानता है कि संभाव्य है कि वह **य** का वध कर दे । **क**, **य** का वध करता है । यहां, **क** ने हत्या नहीं की है, किंतु केवल आपराधिक मानव वध किया है ।

(ग) **य** द्वारा, जो एक बेलिफ है, **क** विधिपूर्वक गिरफ्तार किया जाता है । उस गिरफ्तारी के कारण **क** को अचानक और तीव्र आवेश आ जाता है और वह **य** का वध कर देता है । यह हत्या है, क्योंकि प्रकोपन ऐसी बात द्वारा दिया गया था, जो एक लोक सेवक द्वारा उसकी शक्ति के प्रयोग में की गई थी ।

(घ) **य** के समक्ष, जो एक मजिस्ट्रेट है, साक्षी के रूप में **क** उपसंजात होता है । **य** यह कहता है कि वह **क** के अभिसाक्ष्य के एक शब्द पर भी विश्वास नहीं करता और यह कि **क** ने शपथ भंग किया है । **क** को इन शब्दों से अचानक आवेश आ जाता है और वह **य** का वध कर देता है यह हत्या है ।

(ङ) **य** की नाक खींचने का प्रयत्न **क** करता है । **य** प्राइवेट प्रतिरक्षा के अधिकार के प्रयोग में ऐसा करने से रोकने के लिए **क** को पकड़ लेता है । परिणामस्वरूप **क** को अचानक और तीव्र आवेश आ जाता है और वह **य** का वध कर देता है । यह हत्या है, क्योंकि प्रकोपन ऐसी बात द्वारा दिया गया था जो प्राइवेट प्रतिरक्षा के अधिकार के प्रयोग में गई थी ।

(च) **ख** पर **य** आघात करता है । **ख** को इस प्रकोपन से तीव्र क्रोध आ जाता है । **क**, जो निकट ही खड़ा हुआ है, **ख** के क्रोध का लाभ उठाने और उससे **य** का वध कराने के आशय से उसके हाथ में एक छुरी उस प्रयोजन के लिए दे देता है । **ख** उस छुरी से **य** का वध कर देता है यहां **ख** ने चाहे केवल आपराधिक मानव वध ही किया हो, किंतु हत्या का दोषी है ।

अपवाद 2 – आपराधिक मानव वध हत्या नहीं है, यदि अपराधी, शरीर या संपत्ति की प्राइवेट प्रतिरक्षा के अधिकार को सद्भावपूर्वक प्रयोग में लाते हुए विधि द्वारा उसे दी गई शक्ति का अतिक्रमण कर दे, और पूर्व-चिंतन बिना और ऐसी प्रतिरक्षा के प्रयोजन से जितनी अपहानि करना आवश्यक हो उससे अधिक अपहानि करने के किसी आशय के बिना उस व्यक्ति की मृत्यु कारित कर दे जिसके विरुद्ध वह प्रतिरक्षा का ऐसा अधिकार प्रयोग में ला रहा हो ।

दृष्टांत

क को चाबुक मारने का प्रयत्न **य** करता है, किंतु इस प्रकार नहीं कि **क** को घोर उपहति कारित हो । **क** एक पिस्तौल निकाल लेता है । **य** हमले को चालू रखता है । **क** सद्भावपूर्वक यह विश्वास करते हुए कि वह अपने को चाबुक लगाए जाने से किसी अन्य साधन द्वारा नहीं बचा सकता है गोली से **य** का वध कर देता है । **क** ने हत्या नहीं की है, किंतु केवल आपराधिक मानव वध किया है ।

अपवाद 3 – आपराधिक मानव वध हत्या नहीं है, यदि वह अपराधी ऐसा लोक सेवक होते हुए, या ऐसे लोक सेवक को मदद देते हुए, जो लोक न्याय की अग्रसरता में कार्य कर रहा है, उसे

विधि द्वारा दी गई शक्ति से आगे बढ़ जाए, और कोई ऐसा कार्य करके जिसे वह विधिपूर्ण और ऐसे लोक सेवक के नाते उसके कर्तव्य के सम्यक् निर्वहन के लिए आवश्यक होने का सद्भावपूर्वक विश्वास करता है, और उस व्यक्ति के प्रति, जिसकी मृत्यु कारित की गई है, वैमनस्य के बिना मृत्यु कारित करे ।

अपवाद 4 – आपराधिक मानव वध हत्या नहीं है यदि मानव वध अचानक झगड़ा जनित आवेश की तीव्रता में हुई अचानक लड़ाई में पूर्व-चिंतन बिना और अपराधी द्वारा अनुचित लाभ उठाए बिना या क्रुरतापूर्ण या अप्रायिक रीति से कार्य किए बिना किया गया हो ।

स्पष्टीकरण – ऐसी दशाओं में यह तत्वहीन है कि कौन पक्ष प्रकोपन देता है या पहला हमला करता है ।

अपवाद 5 – आपराधिक मानव वध हत्या नहीं है, यदि व्यक्ति जिसकी मृत्यु वह कारित की जाए, अठारह वर्ष से अधिक आयु का होते हुए, अपनी सम्मति से मृत्यु होना सहन करे, या मृत्यु का जोखिम उठाए ।

दृष्टांत

य को, जो अठारह वर्ष से कम आयु का है, उकसाकर **क** उससे स्वेच्छया आत्महत्या करवाता है । यहां कम उम्र होने के कारण **य** अपनी मृत्यु के लिए सम्मति देने में असमर्थ था, इसलिए **क** ने हत्या का दुष्प्रेरण किया है ।"

विरसा सिंह बनाम **पंजाब राज्य**[1] वाले मामले में के विनिश्चय में, जो अब इस मुद्दे पर शास्त्रीय निर्णय है, इस न्यायालय ने निम्नलिखित उल्लेख किया था :–

"अभियोजन पक्ष को किसी मामले को धारा 300 के 'तृतीय' खंड के अधीन लाने के पूर्व निम्नलिखित तथ्य अवश्य साबित करने चाहिएं । पहला, उसे पूर्णत: वस्तुपरक रूप से यह सिद्ध करना

[1] [1958] एस. सी. आर. 1495.

चाहिए कि कोई शारीरिक क्षति विद्यमान है; दूसरा, क्षति का स्वरूप साबित किया जाना चाहिए । ये विशुद्ध रूप से वस्तुपरक अन्वेषण हैं । यह अवश्य साबित किया जाना चाहिए कि वही विशिष्ट क्षति कारित करने का आशय था अर्थात् वह क्षति आकस्मिक या अनाशयित नहीं थी या किसी और प्रकार की क्षति कारित करना आशयित नहीं था । एक बार जब इन तीनों बातों का विद्यमान होना साबित कर दिया जाता है, तो आगे जांच की जाती है और चौथा, यह साबित किया जाना होगा कि ऊपर वर्णित प्रकार की क्षति, जिसमें उपवर्णित तीनों तत्व विद्यमान थे, प्रकृति के मामूली अनुक्रम में मृत्यु कारित करने के लिए पर्याप्त थी । जांच का यह भाग विशुद्ध रूप से वस्तुपरक और आनुमानिक होता है और इसका अपराधी के आशय से कोई संबंध नहीं होता है ।"

16. **आंध्र प्रदेश राज्य** बनाम **रायवरपू पुन्नया**[1] वाले मामले में, जो प्राय: उद्धृत किया जाने वाला एक अन्य निर्णय है, इस न्यायालय ने निम्नलिखित मत व्यक्त किया था :–

"धारा 299 का खंड (ख) धारा 300 के खंड (2) और खंड (3) का तत्समानी है । खंड (2) के अधीन अपेक्षित आपराधिक मन:स्थिति वाली प्रभेदक बात विशिष्ट आहत व्यक्ति के स्वास्थ्य की ऐसी विशेष दशा या स्थिति की बाबत अपराधी की जानकारी है जिसमें कि उसे साशय कारित अपहानि का इस तथ्य के होते हुए भी प्राणांतक होना स्वाभाविक है कि ऐसी अपहानि प्रकृति के मामूली अनुक्रम में अच्छे स्वस्थ व्यक्ति की हत्या कारित करने के लिए पर्याप्त नहीं होगी । यह बात उल्लेखनीय है कि 'हत्या कारित करने का आशय' खंड (2) की अनिवार्य अध्यपेक्षा नहीं है । अपराधी की इस जानकारी के साथ कि यह संभाव्य है कि ऐसी क्षति विशिष्ट आहत व्यक्ति की मृत्यु कारित कर देगी केवल ऐसी शारीरिक क्षति कारित करने का आशय हत्या को इस खंड की व्याप्ति के अंतर्गत लाने के लिए पर्याप्त होता है । खंड (2) के इस पहलू की पुष्टि धारा 300 में दिए गए दृष्टांत (ख) से हो जाती है ।

---

[1] [1977] 3 उम. नि. प. 1104 = [1977] 1 एस. सी. आर. 601.

धारा 299 का खंड (ख) अपराधी के ऐसे किसी ज्ञान की धारणा नहीं करता है । धारा 300 के खंड (2) के अधीन आने वाले मामलों के उदाहरण वे हो सकते हैं जिनमें कि हमलावर यह जानते हुए कि आहत व्यक्ति का जिगर बढ़ा हुआ है या तिल्ली बढ़ी हुई है या उसका हृदय रोगग्रस्त है और यह संभाव्य है कि ऐसा प्रहार, यथास्थिति, जिगर या तिल्ली के फट जाने या हृदयघात के परिणामस्वरूप उस व्यक्ति विशेष की हत्या कारित कर देता है । यदि हमलावर को आहत व्यक्ति की बीमारी या विशेष कमजोरी की बाबत ऐसा ज्ञान न हो, न ही उसकी मृत्यु कारित करने या ऐसी शारीरिक क्षति कारित करने का आशय हो जो कि मामूली अनुक्रम में मृत्यु कारित करने के लिए पर्याप्त होती है तो अपराध हत्या नहीं होगा, भले ही जिस क्षति के कारण मृत्यु हुई थी वह साशय पहुंचाई गई हो ।

धारा 300 के खंड (3) में धारा 299 के तत्समानी खंड (ख) में आने वाले 'जिससे मृत्यु कारित हो जाना संभाव्य है' शब्दों के स्थान पर 'प्रकृति के मामूली अनुक्रम में.....पर्याप्त हो' शब्द प्रयुक्त किए गए हैं । स्पष्ट है कि प्रभेद ऐसी शारीरिक क्षति जिससे मृत्यु कारित हो जाना संभाव्य हो और ऐसी शारीरिक क्षति, जो प्रकृति के मामूली अनुक्रम में मृत्यु कारित करने के लिए पर्याप्त हो, के बीच है । प्रभेद सूक्ष्म किंतु वास्तविक है और यदि इसकी उपेक्षा की जाए तो इसके परिणामस्वरूप न्याय की विफलता हो सकती है । धारा 299 के खंड (ख) और धारा 300 के तीसरे खंड के बीच प्रभेद आशयित शारीरिक क्षति के परिणामस्वरूप मृत्यु की अधिसंभाव्यता की मात्रा विषयक है । मोटे तौर पर मृत्यु की अधिसंभाव्यता की मात्रा ही इस बात का अवधारण करती है कि क्या आपराधिक मानव वध अति घोर कोटि का या मध्यम कोटि का या निम्नतम कोटि का है । धारा 299 के खंड (ख) में 'संभाव्य है' शब्द मात्र 'संभावना' से भिन्न 'अधिसंभाव्यता' का अर्थ देते हैं । 'वह शारीरिक क्षति..... प्रकृति के मामूली अनुक्रम में मृत्यु कारित करने के लिए पर्याप्त हैं' शब्दों से यह अभिप्रेत है कि प्रकृति के मामूली अनुक्रम को ध्यान में रखते हुए मृत्यु क्षति का

अत्यधिक अधिसंभाव्य परिणाम होगा ।

यदि मृत्यु उस साशय शारीरिक क्षति या क्षतियों के परिणामस्वरूप होती है जो कि प्रकृति के मामूली अनुक्रम में मृत्यु कारित करने के लिए पर्याप्त होती हैं तो मामलों के तीसरे खंड के अंतर्गत आने के लिए यह आवश्यक नहीं है कि अपराधी का आशय मृत्यु कारित करने का था । राजवंत और एक अन्य **बनाम** केरल राज्य (ए. आई. आर. 1966 एस. सी. 1874) इस प्रश्न के विषय में एक स्पष्ट दृष्टांत है ।"

इस न्यायालय ने फिर **विरसा सिंह** (उपर्युक्त) वाले मामले के विनिश्चय को उद्धृत किया और अभिनिर्धारित किया कि :–

"इस प्रकार, विरसा सिंह वाले मामले में अधिकथित सिद्धांत के अनुसार भले ही अपराधी का आशय ऐसी शारीरिक क्षति कारित करने तक सीमित था जो कि प्रकृति के मामूली अनुक्रम में मृत्यु कारित करने के लिए पर्याप्त थी और वह मृत्यु कारित करने का आशय नहीं रखता था तो भी अपराध हत्या ही होगा । धारा 300 में दिया गया दृष्टांत (ग) इस बात को स्पष्ट रूप से सिद्ध कर देता है ।

धारा 299 के खंड (ग) और धारा 300 के चौथे खंड अर्थात् दोनों के अधीन ही यह ज्ञान अपेक्षित है कि किए जाने वाले कार्य द्वारा मृत्यु हो जाना अधिसंभाव्य है । इस मामले के प्रयोजनार्थ इन दो तत्समानी खंडों के बीच प्रभेद का सविस्तार वर्णन करने की आवश्यकता नहीं है । यह कहना पर्याप्त होगा कि धारा 300 का चौथा खंड केवल वहीं लागू होगा जहां कि विशिष्ट व्यक्ति या व्यक्तियों से भिन्न साधारणतया व्यक्ति या व्यक्तियों की मृत्यु की, जो कि उसके आसन्न संकट कार्य द्वारा की जाती है, अधिसंभाव्यता के बारे में अपराधी का ज्ञान लगभग निश्चित ही होगा । अपराधी का ऐसा ज्ञान अधिसंभाव्यता की अधिकतम मात्रा का होना चाहिए और कार्य अपराधी द्वारा मृत्यु कारित करने या यथा पूर्वोक्त प्रकार की क्षति कारित करने की जोखिम उठाने के लिए किसी प्रतिहेतु के बिना किया गया होना चाहिए ।"

पुलीचेर्ला नागराजू उर्फ **नागराजा रेड्डी** बनाम **आंध्र प्रदेश राज्य**[1] वाले मामले में के एक बाद के विनिश्चय में इन पहलुओं पर विचार किया गया और यह अभिनिर्धारित किया गया कि :–

> "29. अत: न्यायालय को आशय के महत्वपूर्ण प्रश्न का विनिश्चय करने के लिए सावधानी और सतर्कतापूर्वक अग्रसर होना चाहिए क्योंकि इससे इस बात का विनिश्चय होगा कि क्या मामला धारा 302 अथवा धारा 304 भाग 1 या 304 भाग 2 के अधीन आता है । बहुत सारे तुच्छ या महत्वहीन विषय – कोई फल तोड़ लेना, आवारा पशु, बालकों का झगड़ा, कोई अपमानजनक शब्द बोलना या यहां तक कि आपत्तिजनक दृष्टि से देखना, झगड़े और सामूहिक संघर्ष का कारण बन जाते हैं जिसके परिणामस्वरूप हत्याएं हो जाती हैं । प्रायिक हेतु जैसे प्रतिशोध, लालच, ईर्ष्या या संदेह का ऐसे मामलों में पूरी तरह अभाव हो सकता है । हो सकता है कोई आशय भी न हो । हो सकता है कोई पूर्व-चिंतन भी न हो । वास्तव में, यहां तक कि आपराधिकता भी न हो । इस सिलसिले के दूसरे छोर पर, हत्या के ऐसे मामले हो सकते हैं जहां अभियुक्त ऐसा मामला प्रस्तुत करने का प्रयत्न करके हत्या की शास्ति से बचने का प्रयत्न कर सकता है कि मृत्यु कारित करने का कोई आशय नहीं था । यह सुनिश्चित करने का कार्य न्यायालयों का है कि धारा 302 के अधीन दंडनीय हत्या के मामले धारा 304 भाग 1/भाग 2 के अधीन दंडनीय अपराधों में संपरिवर्तित न हों, या हत्या की कोटि में न आने वाले आपराधिक मानव वध के मामले धारा 302 के अधीन दंडनीय हत्या के रूप में न समझे जाएं । मृत्यु कारित करने के आशय का पता साधारणतया अन्य बातों के साथ-साथ निम्नलिखित कुछेक या कई परिस्थितियों के संयोजन से लगाया जा सकता है –
>
> (i) प्रयुक्त आयुध की प्रकृति;
>
> (ii) क्या अभियुक्त आयुध लिए हुए था या घटनास्थल से उठाया गया था;

---

[1] (2006) 11 एस. सी. सी. 444.

(iii) क्या प्रहार शरीर के महत्वपूर्ण भाग पर किया गया है;

(iv) क्षति कारित करने में प्रयोग किए गए बल की मात्रा;

(v) क्या कृत्य अचानक झगड़े या अचानक लड़ाई या खुली लड़ाई के अनुक्रम में किया गया था;

(vi) क्या घटना अचानक घटी थी या क्या कोई पूर्व-चिंतन था;

(vii) क्या कोई पहले से दुश्मनी थी या मृतक एक अजनबी था;

(viii) क्या कोई गंभीर और अचानक प्रकोपन था, और यदि ऐसा था तो ऐसे प्रकोपन का कारण;

(ix) क्या यह आवेश की तीव्रता में किया गया था ;

(x) क्या क्षति कारित करने वाले व्यक्ति ने असम्यक् लाभ उठाया था या किसी क्रूरतापूर्ण और अप्रायिक रीति में कार्य किया गया था;

(xi) क्या अभियुक्त ने एक ही प्रहार किया था या कई प्रहार किए थे ।

परिस्थितियों की उपरोक्त सूची, निस्संदेह, नि:शेष नहीं है और अलग-अलग मामलों के संदर्भ में कई अन्य विशेष परिस्थितियां हो सकती हैं जो आशय के प्रश्न पर रोशनी डाल सकती हैं ।"

17. अत: इन मामलों की तरह वर्तमान मामले में प्रश्न यह है कि क्या आक्रमण के कारण कारित की गई क्षति ऐसी है जो धारा 300 के तृतीय खंड के अंतर्गत आती है ("यदि वह किसी व्यक्ति को शारीरिक क्षति कारित करने के आशय से किया गया हो और वह शारीरिक क्षति, जिसके कारित करने का आशय हो, प्रकृति के मामूली अनुक्रम में मृत्यु कारित करने के लिए पर्याप्त हो") अथवा क्या यह धारा 300 के चौथे खंड ("यदि कार्य करने वाला व्यक्ति यह जानता हो कि वह कार्य इतना आसन्नसंकट है कि पूरी अधिसंभाव्यता है कि वह मृत्यु कारित कर ही देगा या ऐसी शारीरिक क्षति कारित कर ही देगा जिससे मृत्यु कारित होना संभाव्य है और वह मृत्यु कारित करने या पूर्वोक्त रूप की क्षति

कारित करने का जोखिम उठाने के लिए किसी प्रतिहेतु के बिना ऐसा कार्य करे") की अपहानि के अंतर्गत आती है ।

18. यदि अभियोजन पक्ष साबित कर देता है कि अभियुक्त ने ऐसी क्षति कारित की थी जो विपदग्रस्त की मृत्यु कारित करने के लिए पर्याप्त थी तो धारा 300 के तृतीय खंड की अध्यपेक्षा पूर्ण हो जाती है । अवधारण किया जाने वाला तथ्य होगा ऐसी क्षति कारित करने का आशय और मृत्यु की अधिसंभाव्यता की मात्रा (गंभीर कोटि, मध्यम कोटि, या निम्नतम कोटि) क्या थी जिससे यह अवधारित होता है कि अपराध आपराधिक मानव वध है या हत्या ।

19. क्षति की प्रकृति इतनी गंभीर होने जिसके परिणामस्वरूप मृत्यु हो जाए (धारा 300 का चौथा खंड) के मुद्दे पर निर्णयज विधि में अभियुक्त द्वारा क्षति के परिणामों की परवाह न करने, और परिणाम के प्रति घोर लापरवाही की भावना, जो आशय की द्योतक है और इसे निर्दिष्ट करती है, पर बल दिया गया है । **मध्य प्रदेश राज्य** बनाम **राम प्रसाद**[1] वाले मामले में इस न्यायालय ने यह अभिनिर्धारित किया कि :–

> "यद्यपि चौथे खंड का प्रयोग प्राय: उन्हीं मामलों में किया जाता है जिनमें किसी विशिष्ट व्यक्ति की मृत्यु कारित करने का आशय न हो (जैसा कि दृष्टांत से दर्शित होता है) तथापि, जिन शब्दों में वह खंड है, उनके आधार पर उसका प्रयोग उन मामलों में भी किया जा सकता है जिनमें परिणाम के प्रति ऐसी घोर लापरवाही की भावना होती है और जो जोखिम उठाया जा रहा है वह ऐसा है कि यह कहा जा सकता है कि वह व्यक्ति जानता था कि उस कार्य से मृत्यु कारित होना संभाव्य है, या ऐसी शारीरिक क्षति कारित होना संभाव्य है जिससे मृत्यु कारित होना संभाव्य है । प्रस्तुत मामले में रामप्रसाद ने मुसम्मात रज्जी के कपड़ों पर मिट्टी का तेल डाला और उसके कपड़ों को आग लगाई । यह तो स्वयं विदित है कि ऐसी आग तेजी से फैलती है और व्यापक तौर से जला देती है । यह जानने के लिए किसी विशेष ज्ञान की आवश्यकता नहीं है कि यदि वह किसी व्यक्ति के कपड़ों में आग

[1] [1968] 1 उम. नि. प. 21 = [1968] 2 एस. सी. आर. 522.

लगा रहा है तो वह मृत्यु कारित कर सकता है । अत: यह स्पष्ट है कि रामप्रसाद यह बात जरूर जानता था कि वह रज्जी की मृत्यु कारित करने की जोखिम उठा रहा है या ऐसी शारीरिक क्षति कारित करने का जोखिम उठा रहा है जिससे रज्जी की मृत्यु होना संभाव्य है । क्योंकि वह जोखिम उठाने के लिए उसके पास कोई प्रतिहेतु नहीं था । अत: वह अपराध भारतीय दंड संहिता की धारा 300 के चौथे खंड के अंतर्गत जाना चाहिए । दूसरे शब्दों में, उसका अपराध ऐसा आपराधिक मानव वध है जो हत्या की कोटि में आता है भले ही उसका आशय मुसम्मात रज्जी की मृत्यु कारित करने का न रहा हो । उसने इतना आसन्नसंकट कार्य किया जिससे यह पूरी अधिसंभाव्यता थी कि मृत्यु कारित हो जाए या जिससे ऐसी क्षति कारित हो जाए जिससे संभाव्यत: मृत्यु कारित हो जाए । अत: हमारी यह राय है कि उच्च न्यायालय और सेशन न्यायाधीश दोनों ही अपने इस निष्कर्ष में ठीक नहीं थे कि वह अपराध हत्या की कोटि में नहीं आता है ।"

इसी प्रकार, **संतोष पुत्र शंकर पवार** बनाम **महाराष्ट्र राज्य**[1] वाले मामले में इस न्यायालय के तीन न्यायाधीशों ने यह मत व्यक्त किया था कि :–

"13. यदि यह मान लिया जाए कि अभियुक्त का मृतक की मृत्यु कारित करने का कोई आशय नहीं था, तो भी अभियुक्त का कार्य भारतीय दंड संहिता की धारा 300 के चौथे खंड के अंतर्गत आता है अर्थात् ऐसी क्षति कारित करने का कार्य इतना आसन्नसंकट हो कि जहां पूरी अधिसंभाव्यता है कि इससे मृत्यु हो जाएगी । औसत बुद्धि के किसी व्यक्ति को भी यह जानकारी रहेगी कि मिट्टी का तेल छिड़कने और जलती हुई माचिस की तिल्ली फेंककर उसे आग लगाना इतना आसन्नसंकट है कि पूरी अधिसंभाव्यता है कि वह कार्य ऐसी क्षति कर ही देगा जिससे मृत्यु कारित होना संभाव्य है ।"

20. इस मामले के तथ्यों पर वापस आते हैं । समवर्ती निष्कर्ष,

---

[1] (2015) 7 एस. सी. सी. 641.

जिन्हें स्वीकार करने में इस न्यायालय को कोई कठिनाई दिखाई नहीं देती है, यह हैं कि पहला, अपीलार्थी आक्रामक थे; दूसरा, उन्होंने कुल्हाड़ियों से मृतक पर आक्रमण किया था; तीसरा, मृतक निहत्था था; चौथा, आक्रमण के दौरान विपदग्रस्त की पुत्री अभि. सा. 1 घटनास्थल पर पहुंची और अपीलार्थियों को रोकने की कोशिश की; पांचवां, अपीलार्थियों ने विपदग्रस्त पर अपना हमला करना जारी रखा और इस साक्षी पर भी कुल्हाड़ी से आक्रमण किया; छठा, चूंकि अपीलार्थियों द्वारा कारित की गई तीन क्षतियां सिर पर थीं, इसलिए वह नीचे गिर गया था; सातवां, विपदग्रस्त को अस्पताल ले जाया गया था और शल्य-क्रिया के लिए एक अन्य विशेष अस्पताल में स्थानांतरित करना पड़ा था; आठवां मृतक अपना कथन अभिलिखित करने योग्य नहीं था; उसे कभी छुट्टी नहीं दी गई और 20 दिनों के पश्चात् अस्पताल में ही उसकी मृत्यु हो गई थी । अंतिमत:, जिस डाक्टर ने (अभि. सा. 14) मरणोत्तर परीक्षा की थी, उसने यह कथन किया था कि क्षतियां एक कठोर और कुंद वस्तु से कारित की गई थीं और मृतक की मृत्यु "उसके शरीर पर कारित कई सारी क्षतियों और उनकी जटिलताओं के परिणामस्वरूप" हृदय-श्वसन अवरुद्ध हो जाने के कारण हुई थी । सिर के अतिरिक्त, कई अन्य क्षतियां थीं जो कुहनी पर खरोंच, नील, पीठ पर नीचे की तरफ पसली का अस्थिभंग आदि के रूप में थीं । मृत्यु के समय वृंदावन की आयु 55 वर्ष थी ।

21. अभि. सा. 1 (वृंदावन की पुत्री) और अभि. सा. 2 (वृंदावन के भाई, नरोत्तम) दोनों के कथनों के रूप में यह साक्ष्य है कि मृतक और अपीलार्थियों का पहले से विद्यमान विवाद था । तथापि, इन दोनों साक्षियों ने एक-दूसरे की संपुष्टि की और कथन किया कि झगड़ा या विवाद भूमि के संबंध में था, जो लंबे समय से विद्यमान था । वास्तव में, अभि. सा. 2 ने कथन किया था कि भाइयों के बीच संपत्ति का विभाजन हुआ था, इसके बावजूद झगड़ा चल रहा था ।

22. इसके पश्चात् प्रश्न यह है कि क्या मृतक और अपीलार्थियों के बीच "अचानक झगड़ा" हुआ था जिससे मामला हत्या का नहीं अपितु अपवाद 4 के निबंधनों के अनुसार ("यदि यह अचानक झगड़ा जनित

आवेश की तीव्रता हुई अचानक लड़ाई में पूर्व-चिंतन बिना और अपराधी द्वारा अनुचित लाभ उठाए बिना या क्रूरतापूर्ण अप्रायिक रीति से कार्य किए बिना किया गया हो") आपराधिक मानव वध का होगा । इस न्यायालय की राय में, कोई "अचानक झगड़ा" नहीं हुआ था । दो महत्वपूर्ण प्रत्यक्षदर्शी साक्षियों, अभि. सा. 1 और अभि. सा. 2 के परिसाक्ष्यों से सिद्ध होता है कि जब मृतक अपनी संपत्ति पर सेप्टिक टैंक को समतल कर रहा था, तब अभियुक्त/अपीलार्थी उसे गालियां देने लगे; उसने उन्हें ऐसा न करने के लिए कहा । अपीलार्थी, जो साथ लगी संपत्ति पर थे, दीवार पर चढ़ गए, मृतक के घर में प्रवेश किया और कुल्हाड़ियों से उस पर आक्रमण किया । इन तथ्यों से इस बात पर विचार करते हुए "अचानक झगड़े" का गठन नहीं होता है कि अपीलार्थियों ने मृतक को प्रकोपन के बिना गालियां दीं और फिर वे कुल्हाड़ियों से लैस होकर वहां गए, जहां वह था और उस पर आक्रमण किया । तर्क के लिए, यदि यह मान लिया जाए कि तथ्यों से यह प्रकट होता है कि अचानक लड़ाई हुई थी, तो भी यह नहीं कहा जा सकता कि अभियुक्तों ने क्रूरतापूर्ण रीति में कार्य नहीं किया था, या असम्यक् लाभ नहीं उठाया था । ऐसा इसलिए है क्योंकि वे आयुधों से लैस थे : यह एक ऐसा तथ्य है जिससे उनका पूर्व-चिंतन दर्शित होता है । इसके अतिरिक्त, उन दोनों ने मृतक के सिर पर आक्रमण किया था, जो शरीर का एक मार्मिक अंग है और इस प्रकार अपनी स्थिति का असम्यक् लाभ उठाया था ।

23. पुन:, इस प्रश्न पर कि क्या इस मामले के तथ्य धारा 300 के पहले अपवाद के अंतर्गत आते हैं अर्थात् अभियुक्तों/अपीलार्थियों ने गंभीर और अचानक प्रकोपन के कारण अपना आत्म-संयम खो देने के कारण वह कार्य किया था जिनका उन पर अभियोग लगाया गया था (आक्रमण और गंभीर क्षतियां कारित करना जिनके परिणामस्वरूप वृंदावन की मृत्यु हुई थी) – उत्तर वही होना चाहिए और वह है कि इस उपबंध (धारा 300 का अपवाद 1) को लागू नहीं किया जा सकता । लंबे समय से चले आ रहे पहले से विद्यमान विवाद के अतिरिक्त, अपीलार्थियों को किस बात से "अचानक" प्रकोपन हुआ था, उनके द्वारा इसे दर्शित नहीं किया गया है । अपवाद 1 के अंतर्गत आने के लिए न तो उन्होंने कोई साक्ष्य प्रस्तुत किया और न ही ऐसी दलील को सिद्ध करने के लिए अभिलेख

पर साक्ष्य है । गंभीर और अचानक प्रकोपन क्या है, इसका उल्लेख करते हुए इस न्यायालय ने **के. एम. नानावती** बनाम **महाराष्ट्र राज्य**[1] वाले मामले में "गंभीर और अचानक" प्रकोपन लागू करने के लिए युक्तियुक्तता के मानक को निम्नलिखित रीति में स्पष्ट किया था :–

> "84. क्या 'गंभीर और अचानक' प्रकोपन के सिद्धांत को लागू करने के लिए किसी युक्तियुक्त व्यक्ति का कोई मानक है ? युक्तियुक्तता का कोई निरपेक्ष मानक अधिकथित नहीं किया जा सकता । कोई युक्तियुक्त व्यक्ति कतिपय परिस्थितियों में क्या करेगा यह रूढ़ियों, रीतियों, जीवन जीने के ढंग, पारंपरिक मूल्यों आदि; संक्षेप में, उस समाज की, जिससे अभियुक्त का संबंध है, सांस्कृतिक, सामाजिक और भावनात्मक पृष्ठभूमि पर निर्भर करता है । हमारे विशाल देश में सभ्यता के निम्नतम से लेकर उच्चतम अवस्था तक के सामाजिक समूह हैं । सूक्ष्मता से कोई मानक अधिकथित करना न तो संभव और न ही वांछनीय है : यह न्यायालयों पर है कि वह प्रत्येक मामले में सुसंगत परिस्थितियों को ध्यान में रखते हुए विनिश्चय करे । इस मामले में यह अभिनिश्चय करना आवश्यक नहीं है कि क्या अभियुक्त जैसी स्थिति का कोई युक्तियुक्त व्यक्ति पलभर में या यहां तक कि अस्थायी रूप से अपना आत्म-संयम खो देगा जब उसकी पत्नी अन्य व्यक्ति के साथ अयुक्त प्रेम संबंध होने की उससे स्वीकारोक्ति करे, क्योंकि साक्ष्य के आधार पर हमारा समाधान हो गया है कि अभियुक्त ने अपना आत्म-संयम पुन: प्राप्त कर लिया था और जानबूझकर आहूजा को मारा था ।
>
> 85. वर्तमान जांच से सुसंगत भारतीय विधि का इस प्रकार उल्लेख किया जा सकता है : (1) 'गंभीर और अचानक' प्रकोपन की कसौटी यह है कि क्या कोई युक्तियुक्त व्यक्ति जो समाज के उसी वर्ग का है जिसका अभियुक्त है, उसी स्थिति में जिसमें अभियुक्त था, इतना प्रकोपित हो जाएगा कि अपना आत्म-संयम खो देगा ।

---

[1] [1962] 1 एस. सी. आर. (सप्ली.) 567.

(2) भारत में कतिपय परिस्थितियों में शब्द और अंग-विक्षेप भी अभियुक्त को गंभीर और अचानक प्रकोपन कारित कर सकते हैं जिससे कि उसका कार्य भारतीय दंड संहिता की धारा 300 के पहले अपवाद के अंतर्गत आ सके । (3) विपदग्रस्त के पूर्वतन कार्य द्वारा सृजित मानसिक पृष्ठभूमि पर यह अभिनिश्चय करने के लिए विचार किया जा सकता है कि क्या पश्चात्वर्ती कार्य ने अपराध कारित करने के लिए गंभीर और अचानक प्रकोपन कारित किया था । (4) घातक प्रहार का पता स्पष्ट रूप से उस प्रकोपन से उत्पन्न आवेश के प्रभाव से लगाया जाना चाहिए न कि समय बीत जाने पर आवेश शांत हो जाने के पश्चात्, या अन्यथा पूर्व-चिंतन या परिगणना के लिए गुंजाइश होते हुए पता लगाया जाना चाहिए ।"

24. यदि उपरोक्त कसौटियों को वर्तमान मामले पर लागू किया जाए, तो जो बात स्पष्ट होती है वह यह है कि जबकि अपीलार्थियों और मृतक के बीच पहले से कुछ पुराने विवाद विद्यमान थे, तथापि, यह दर्शित करने के लिए कुछ नहीं है कि उन्हें चिढ़ाया गया था । इसी तरह यह भी स्पष्ट नहीं है कि क्या मृतक ने अपीलार्थियों को कुछ कहा था जिससे वे क्रोधित हो गए थे और इसके परिणामस्वरूप "गंभीर और अचानक प्रकोपन" के कारण आत्म-संयम खो दिया था । किसी भी दशा में, यदि ऐसी कोई बात थी, तो अपीलार्थियों को अभिलेख पर सुसंगत सामग्री या साक्ष्य लाना चाहिए था क्योंकि जो तथ्य विद्यमान थे वे उनकी ही विशिष्ट जानकारी में थे ।

25. सुनवाई के दौरान, अपीलार्थियों की ओर से काउंसेल ने दलील दी कि वृंदावन की मृत्यु आक्रमण करने के बीस दिन पश्चात् हुई थी और इतना समय बीत जाने से यह दर्शित होता है कि क्षतियां प्रकृति के मामूली अनुक्रम में मृत्यु कारित करने के लिए पर्याप्त नहीं थीं । इस पहलू पर, कई सारे निर्णय हैं जिनमें इस बात पर जोर दिया गया है कि ऐसा समय बीत जाने से स्वयमेव अपराधी के हत्या के अपराध के दायित्व को हत्या की कोटि में न आने वाले आपराधिक मानव वध के रूप में कम करने के लिए एक निश्चायक बात का गठन नहीं होगा ।

ओम प्रकाश बनाम **पंजाब राज्य**[1] वाले मामले में मृत्यु आक्रमण करने के तेरह दिनों के पश्चात् हुई थी; अभियुक्त को हत्या के लिए दोषसिद्ध किया गया था । इसी प्रकार, **पटेल हीरालाल जोयताराम** बनाम **गुजरात राज्य**[2] वाले मामले में मृत्यु आक्रमण करने के पंद्रह दिनों के पश्चात् हुई थी और **सुदर्शन कुमार** (उपर्युक्त) वाले मामले में मृत्यु आक्रमण करने के बारह दिनों के पश्चात् हुई थी ।

26. ऐसी कोई रूढ़िबद्ध धारणा या सूत्र नहीं है कि जहां मृत्यु क्षतियां (जिनसे मृत्यु हो सकती थी) कारित होने के कुछ समय बीत जाने के पश्चात् होती है, वहां आपराधिक मानव वध का अपराध होता है । प्रत्येक मामले की अपनी विशेष तथ्यात्मक स्थिति होती है । तथापि, जो महत्वपूर्ण है वह है क्षतियों का स्वरूप, और क्या यह मामूली अनुक्रम में मृत्यु का कारण बनने के लिए पर्याप्त है । चिकित्सीय देखरेख की पर्याप्तता या अन्यथा की बात इस मामले में सुसंगत नहीं है क्योंकि मरणोत्तर परीक्षा करने वाले डाक्टर ने स्पष्ट रूप से यह अभिसाक्ष्य दिया था कि मृत्यु मृतक को पहुंची क्षतियों के परिणामस्वरूप हृदय-श्वसन अवरुद्ध हो जाने के कारण हुई थी । इस प्रकार, क्षतियां और मृत्यु घनिष्ठ और प्रत्यक्ष रूप से संबद्ध थी ।

27. उपरोक्त चर्चा को ध्यान में रखते हुए, इस न्यायालय की यह राय है कि आक्षेपित निर्णय में कोई कमी नहीं है । अत: अपीलार्थियों पर अधिरोपित दोषसिद्धि और दंडादेश में किसी हस्तक्षेप की आवश्यकता नहीं है । परिणामत: यह अपील खर्चे के किसी आदेश के बिना खारिज की जाती है ।

अपील खारिज की गई ।

जस.

---

[1] [1992] 3 एस. सी. आर. 921.

[2] (2002) 1 एस. सी. सी. 22.

[2023] 1 उम. नि. प. 274

मुन्ना लाल

बनाम

उत्तर प्रदेश राज्य

[2017 की दांडिक अपील सं. 490]

तथा

शिव लाल

बनाम

उत्तर प्रदेश राज्य

[2017 की दांडिक अपील सं. 491]

24 जनवरी, 2023

न्यायमूर्ति एस. रविन्द्र भट और न्यायमूर्ति दिपांकर दत्ता

दंड संहिता, 1860 (1860 का 45) – धारा 302 – हत्या – अभियुक्त और मृतक पक्ष के बीच पूर्ववर्ती दुश्मनी होना – अभियुक्तों द्वारा अभिकथित रूप से आयुधों से लैस होकर मृतक पर हमला किया जाना – मृतक को पहुंची क्षतियों के कारण उसकी मृत्यु हो जाना – प्रत्यक्षदर्शी साक्षियों के साक्ष्य के आधार पर अभियुक्तों को दोषसिद्ध किया जाना – अपील में उच्च न्यायालय द्वारा पुष्टि किया जाना – संधार्यता – जहां मामले के तथ्यों और परिस्थितियों के आधार पर तथाकथित प्रत्यक्षदर्शी साक्षियों का साक्ष्य संदेह से मुक्त न पाया गया हो और उनका साक्ष्य अनधिक्षेपणीय गुणवत्ता का न हो तो प्रज्ञा के नियम के अनुसार उनके साक्ष्य की संपुष्टि घटनास्थल पर मौजूद अन्य साक्षियों से कराया जाना आवश्यक है और ऐसे अन्य साक्षियों के साथ-साथ अन्वेषण अधिकारी की परीक्षा न कराए जाने से अभियुक्तों को मामले में मिथ्या रूप से फंसाए जाने की संभाव्यता से इनकार नहीं करने के कारण अभियोजन पक्ष द्वारा मामले को युक्तियुक्त संदेह के

परे साबित नहीं करने पर अभियुक्तों को संदेह का फायदा देते हुए दोषमुक्त करना उचित होगा ।

इस अपील के तथ्यों के अनुसार, राम विलास के पिता, नारायण की तारीख 5 सितंबर, 1985 को सवेरे लगभग 10.00 बजे हत्या कर दी गई थी । इसके ठीक पश्चात् राम विलास द्वारा लगभग 12.10 बजे अपराह्न में एक लिखित शिकायत दर्ज की गई थी जिसके आधार पर भारतीय दंड संहिता की धारा 302 के अधीन एक प्रथम इत्तिला रिपोर्ट रजिस्ट्रीकृत की गई । उक्त प्रथम इत्तिला रिपोर्ट डा. मोहम्मद हनीफ खान द्वारा लिखी गई थी । मुन्ना लाल, शिव लाल, बाबू राम और कलिका इस हत्या को कारित करने के अभियुक्त थे । प्रथम इत्तिला रिपोर्ट के रजिस्ट्रीकरण के परिणामस्वरूप पुलिस थाना तिलहर के थाना पुलिस अधिकारी शैलेन्द्र बहादुर चंद्र (जो अन्वेषण अधिकारी भी थे) उप निरीक्षक राम पाल सागर और कांस्टेबल ऊधम सिंह के साथ घटनास्थल पर गए । मृत्यु-समीक्षा राम पाल सागर द्वारा की गई, जिसके अनुक्रम में घटनास्थल से नारायण को कारित क्षतियों में से एक क्षति से बह रहे रक्त से एक गोली बरामद की गई । अन्वेषण पूर्ण होने के उपरांत, चारों अभियुक्तों के विरुद्ध संबंधित न्यायालय के समक्ष धारा 302 के अधीन आरोप पत्र फाइल किया गया । इसी बीच कलिका का देहांत हो गया । अंततोगत्वा, विद्वान् सेशन न्यायाधीश ने अभिलेख पर के साक्ष्य पर विचार करने के उपरांत यह अभिनिर्धारित किया कि संगत और अकाट्य प्रत्यक्ष साक्ष्य से मामला साबित होता है जिसका समर्थन विश्वसनीय अधिसंभाव्यताओं, हेतुक की विद्यमानता, चिकित्सीय साक्ष्य और सभी अन्य परिस्थितियों से होता है । मुन्ना लाल, शिव लाल और बाबू राम को उन अपराधों का दोषी अभिनिर्धारित करते हुए जिनसे उन्हें आरोपित किया गया था, विचारण न्यायालय अभि. सा. 2 और अभि. सा. 3 के प्रत्यक्ष साक्ष्य से प्रभावित हुआ । यह भी अभिनिर्धारित किया गया कि तुरंत प्रथम इत्तिला रिपोर्ट दर्ज कराना मामले की सत्यता के बारे में एक गारंटी प्रस्तुत करता है । परिणामतः, न्यायाधीश ने अपने तारीख 29 जनवरी, 1986 के निर्णय द्वारा जीवित अभियुक्तों अर्थात् मुन्ना लाल, शिव लाल और बाबू राम को दोषसिद्ध किया और उन पर आजीवन कारावास का दंडादेश अधिरोपित किया । सेशन न्यायाधीश के पूर्वोक्त

निर्णय और आदेश को मुन्ना लाल, शिव लाल और बाबू लाल द्वारा इलाहाबाद उच्च न्यायालय के समक्ष अपील में ले जाया गया । अपील के लंबित रहने के दौरान बाबू राम का देहांत हो गया इसलिए उसकी प्रेरणा पर अपील का उपशमन हो गया । उच्च न्यायालय ने सेशन न्यायाधीश द्वारा निकाले गए निष्कर्षों से सहमति व्यक्त की और यह मत व्यक्त किया कि हस्तक्षेप करने के लिए कोई पर्याप्त आधार नहीं है । उच्च न्यायालय द्वारा अपील की खारिजी से व्यथित होकर मुन्ना लाल और शिव लाल द्वारा विशेष इजाजत लेकर अपील के लिए उच्चतम न्यायालय के समक्ष आवेदन किया गया जिस पर इस न्यायालय द्वारा इजाजत दी गई । उच्चतम न्यायालय द्वारा अपीलें मंजूर करते हुए,

अभिनिर्धारित – अपीलार्थियों के भाग्य का विनिश्चय करने की कवायद को आरंभ करने से पूर्व इन दो अपीलों का विनिश्चय करने के लिए सुसंगत कतिपय सिद्धांतों का उल्लेख करना उपयुक्त होगा । यह कहने की आवश्यकता नहीं है कि ये सिद्धांत पिछले कुछ वर्षों में प्रतिपादित किए गए हैं और 'विधि के स्थिर सिद्धांतों' के रूप में निश्चित हैं । ये हैं – (क) भारतीय साक्ष्य अधिनियम, 1872 की धारा 134 में यह सुविख्यात सूत्र सन्निविष्ट है कि साक्ष्य का विवेचन किया जाना चाहिए न कि गणना । दूसरे शब्दों में, यह साक्ष्य की गुणवत्ता है जो मायने रखती है न कि मात्रा । निष्कर्षत:, यहां तक कि हत्या के मामले में भी साक्षियों की बाहुलता पर जोर देना आवश्यक नहीं है और केवल एक साक्षी के मौखिक साक्ष्य के आधार पर दोषसिद्धि की जा सकती है यदि वह विश्वसनीय और भरोसेमंद पाया जाता है । (ख) साधारणतया, मौखिक परिसाक्ष्य को तीन प्रवर्गों में वर्गीकृत किया जा सकता है, अर्थात् – (i) पूर्णत: विश्वसनीय; (ii) पूर्णत: अविश्वसनीय; (iii) न तो पूर्णत: विश्वसनीय और न ही पूर्णत: अविश्वसनीय । प्रथम दो प्रवर्ग के मामलों में न्यायालय के लिए हो सकता है अपना निष्कर्ष निकालने में गंभीर कठिनाई न हो । तथापि, तीसरे प्रवर्ग के मामलों में न्यायालय को सतर्क रहना चाहिए और प्रज्ञा के नियम की अपेक्षा के रूप में प्रत्यक्ष या पारिस्थितिक विश्वसनीय परिसाक्ष्य द्वारा किन्हीं तात्विक विशिष्टियों की संपुष्टि की तलाश करनी चाहिए । (ग) त्रुटिपूर्ण अन्वेषण सदैव वहां

अभियोजन पक्ष के लिए घातक नहीं होता है जहां प्रत्यक्षदर्शी परिसाक्ष्य विश्वसनीय और तर्कपूर्ण पाया जाता है । जबकि ऐसे मामले में न्यायालय को साक्ष्य का मूल्यांकन करने में सतर्क रहना चाहिए, किंतु दोषपूर्ण अन्वेषण सभी मामलों में एक विश्वसनीय अभियोजन वृत्तांत को त्यक्त करने के लिए एक निश्चायक कारक नहीं हो सकता है । (घ) अन्वेषण अधिकारी की परीक्षा न कराने से अभियुक्त पर अवश्य प्रतिकूल प्रभाव पड़ेगा; यदि कोई प्रतिकूल प्रभाव नहीं पड़ा है, तो परीक्षा न कराने मात्र से यह अभियोजन के पक्षकथन के लिए घातक नहीं होगा । (ङ) जब कोई साक्षी कुछ समय व्यतीत होने के पश्चात् स्वाभाविक रीति में अभिसाक्ष्य देता है, तो उसमें विसंगतियां हो सकती हैं और यदि ऐसी विसंगतियां तुलनात्मक रूप से तुच्छ प्रकृति की हैं और अभियोजन के वृत्तांत की तह में नहीं जाती हैं, तब उन्हें असम्यक् महत्व नहीं दिया जा सकता । (पैरा 28)

अभियोजन साक्षी 2 और 3 द्वारा दिए गए मौखिक साक्ष्य का मूल्यांकन करने पर इस न्यायालय का यह मत है कि इसका निष्कर्ष आक्षेपित निर्णयों में निकाले गए निष्कर्षों से भिन्न नहीं होगा किंतु कतिपय महत्वपूर्ण बातों के लिए, जिन पर दुर्भाग्यवश निचले न्यायालयों ने ध्यान नहीं दिया है, थोड़ी देर में चर्चा की जाएगी । साथ ही, यदि खामी तुच्छ प्रकृति की रही होती, तो इस न्यायालय के लिए अभि. सा. 1 द्वारा दिए गए चिकित्सीय साक्ष्य को ध्यान में रखते हुए अभि. सा. 2 और अभि. सा. 3 द्वारा दिए गए अभिसाक्ष्य को स्वीकार करना और इस निष्कर्ष को कायम रखना कतई मुश्किल नहीं होता कि नारायण की मृत्यु बंदूक की गोली से और अपीलार्थियों द्वारा उसे कारित अन्य क्षतियों के कारण हुई थी । निश्चित रूप से, यह हत्या का एक स्पष्ट मामला रहा होता जिसमें नारायण विपदग्रस्त था और अपीलार्थी अपराध के कर्ता थे । तथापि, नारायण की हत्या से लगभग 10 (दस) वर्षों से उसके (नारायण) और अपीलार्थियों के बीच चली आ रही दुश्मनी के पूर्ववर्ती इतिहास को ध्यान में रखते हुए अभियोजन पक्ष के लिए स्थिति अधिक गंभीर हो जाती है । अपीलार्थियों ने दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 313 के अधीन परीक्षा के दौरान न केवल यह साक्ष्य दिया था कि मुन्ना लाल शिव लाल के हित-पूर्वाधिकारियों और राम विलास (अभि. सा. 2)

के बीच एक संपत्ति विवाद के संबंध में दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 145 के अधीन कार्यवाहियों में शिव लाल की ओर से एक साक्षी था, यह बात स्वयं अभि. सा. 2 के अभिसाक्ष्य से स्पष्ट होती है कि एक ओर नारायण और दूसरी ओर जसवंत (शिव लाल का पिता) और शिव लाल के बीच पिछले 10 (दस) वर्षों से झगड़ा चला आ रहा था; यह भी कि जसवंत और एक अन्य व्यक्ति की उस झगड़े में मृत्यु हो गई थी; और यह दुश्मनी जारी थी चूंकि शिव लाल नारायण की मृत्यु से पूर्व आवासीय भूमि का बलपूर्वक कब्जा लेना चाह रहा था जिसके लिए दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 145 के अधीन एक मामला रजिस्ट्रीकृत किया गया था और जिसमें मुन्ना लाल अभि. सा. 2 के विरुद्ध एक साक्षी था । अपीलार्थियों की ओर से इस न्यायालय के समक्ष यह प्रदर्शित करने का प्रयास किया गया कि मुन्ना लाल और शिव लाल को मिथ्या रूप से फंसाया गया था चूंकि अभि. सा. 2 का आशय यह सुनिश्चित करना था कि उन्हें सलाखों के पीछे रखा जाए और इस संपत्ति विवाद का अंत ऐसी रीति में किया जाए जो विधि द्वारा मान्य न हो । अपीलार्थियों की दलील के इस भाग को पूर्णत: अस्वीकार नहीं किया जा सकता । नारायण की अभिकथित हत्या से पूर्व दोनों समूहों के बीच 10 (दस) वर्षों से चली आ रही दुश्मनी के अविवादग्रस्त साक्ष्य के कारण यह सिद्ध किया जा सकता है कि अभि. सा. 2 की अपीलार्थियों के प्रति व्यक्तिगत दुर्भावना थी और अपीलार्थियों को विधिक कार्यवाहियों तथा सांपत्तिक अधिकारों में हस्तक्षेप करने से दूर रखने के आशय से अभि. सा. 2 द्वारा कार्रवाई करने की संभाव्यता से इनकार नहीं किया जा सकता, इसलिए अभि. सा. 2 की अपीलार्थियों से दुश्मनी होने के कारण उसके परिसाक्ष्य पर थोड़ा विचार किया जाना चाहिए और अभिलेख पर के अन्य साक्ष्य की अधिक गहराई से संवीक्षा किया जाना भी वास्तव में ऊपर निर्दिष्ट किए गए स्थिर सिद्धांतों को ध्यान में रखते हुए आवश्यक है । अभि. सा. 2 के मौखिक साक्ष्य से यह पाए जाने पर कि घटना के दिन सवेरे क्या हुआ था, उस बारे में अभि. सा. 3 के मौखिक परिसाक्ष्य पर विचार करना आवश्यक है । वास्तव में अपीलार्थियों की ओर से यह यह सिद्ध करने का प्रयत्न किया गया है कि अभि. सा. 3, अभि. सा. 2 का नातेदार था और एक 'संयोगी साक्षी' होने के अलावा एक हितबद्ध साक्षी भी था इसलिए उसका परिसाक्ष्य पूर्णत: विश्वनीय नहीं है । अभि.

सा. 3 के परिसाक्ष्य से यह स्पष्ट नहीं है कि इतने सवेरे-सवेरे वह घटनास्थल से होकर क्यों गुजर रहा था । यह पाया गया है कि अभि. सा. 3 नेवदिया, पुलिस थाना खुड्डागंज, जिला शाहजहांपुर का निवासी है जबकि अभि. सा. 2 फतेहपुर बुबुर्ग, पुलिस थाना तिलहर, जिला शाहजहांपुर का निवासी है । दोनों स्थानों के बीच 1-2 मील की दूरी है । हत्या की घटना पुलिस थाना तिलहर की अधिकारिता संबंधी सीमा के भीतर घटी थी । अभि. सा. 3 के साक्ष्य से पूरी तरह स्पष्ट रूप से यह प्रकटित नहीं हुआ था कि वह कहां से चला था और उसे कहां जाना था । गोपालपुर धादीपुरा वह गांव हो सकता है जहां अभि. सा. 3 की बहिन की ससुराल है, किंतु किस प्रयोजन के लिए वह गया था यह पूर्णत: स्पष्ट नहीं है । अभि. सा. 3 द्वारा यह नहीं कहा गया था कि वह अपनी बहिन के निवास स्थान की ओर जा रहा था । प्रतिपरीक्षा में अभि. सा. 3 ने "फतेहपुर बुजुर्ग **उर्फ** मोहद्दीपुर" में निवास करने की बात से इनकार किया था । अपीलार्थियों की दोषिता को युक्तियुक्त संदेह के परे साबित करने के लिए कुछ और विशिष्टियों को इस परिस्थिति पर विचार करने के लिए दिया जाना अपेक्षित है कि अभि. सा. 3 अधिक से अधिक एक 'संयोगी साक्षी' था । संयोगवश, अभि. सा. 2 ने अभि. सा. 3 का नातेदार होने की बात से इनकार किया था और इस तथ्य को देखते हुए कि अभि. सा. 3 एक भिन्न गांव का निवासी था, अभियोजन पक्ष द्वारा अभि. सा. 2 से यह बात नहीं प्रकट कराई जा सकी थी कि उसे कैसे अभि. सा. 3 के नाम का पता था । इसी प्रकार, अभि. सा. 3 ने भी यह नहीं कहा था कि वह पहले से अभि. सा. 2 या उसके पिता को जानता था । अभि. सा. 2 और अभि. सा. 3 के बीच जो जान-पहचान थी, उसकी प्रकृति को अभियोजन पक्ष द्वारा स्पष्ट किया जाना चाहिए था । इसके अतिरिक्त, यद्यपि यह सत्य है कि अभि. सा. 3 ने इस बारे में स्पष्ट विवरण दिया था कि कैसे नारायण को मुन्ना लाल द्वारा गोली मारी गई थी, किंतु जहां तक शिव लाल का संबंध है उसकी किसी विनिर्दिष्ट भूमिका का उल्लेख नहीं किया गया है, सिवाय इसके कि सभी चारों अभियुक्त "मारपीट" कर रहे थे (जैसा कि हिंदी में अभिलिखित किए गए साक्ष्य से प्रकट होता है) और न कि "जान से मार रहे थे" (जैसा कि कागजात पुस्तिका में अनूदित वृत्तांत उपलब्ध है) । पुन:, अभि. सा. 3 ने प्रतिपरीक्षा के दौरान यह अभिसाक्ष्य दिया था कि

मुन्ना लाल ने नारायण को गोली मारी थी और इस बात को विस्तारपूर्वक नहीं बताया था कि क्या शिव लाल ने भी नारायण को कोई क्षति कारित की थी । जहां तक अभि. सा. 2 द्वारा शिव लाल पर आरोपित भूमिका का संबंध है, अभि. सा. 2 और अभि. सा. 3 के वृत्तांतों के बीच स्पष्ट विसंगति है जिससे मुश्किल ही अनदेखा किया जा सकता है । तथापि, सर्वाधिक महत्वपूर्ण बात यह है कि अभिलेख से प्रकट होने वाली परिस्थितियों से घटनास्थल पर अभि. सा. 3 की मौजूदगी औचित्यपूर्ण नहीं लगती है । अत: इस न्यायालय का यह दृढ़ मत है कि अभि. सा. 2 और अभि. सा. 3 के परिसाक्ष्य संदेह से मुक्त नहीं हैं और उनके साक्ष्य अनधिक्षेपणीय गुणवत्ता के न होने के कारण प्रज्ञा का नियम उनके वृत्तांतों की उन अन्य साक्षियों से संपुष्टि की मांग करेगा जो अभि. सा. 2 और अभि. सा. 3 के अनुसार घटनास्थल पर मौजूद थे और नारायण की हत्या करते हुए देखा था । अभि. सा. 2 और अभि. सा. 3 के साक्ष्य के अनुसार, वहां अन्य प्रत्यक्षदर्शी साक्षी थे जिनमें केदार एक मुख्य साक्षी था और छंगे लाल तथा खेमकरण स्वतंत्र साक्षी थे । चूंकि अभि. सा. 2 और अभि. सा. 3 का यह वृत्तांत था कि केदार, छंगे लाल और खेमकरण घटनास्थल पर मौजूद थे और उन्होंने, अन्य बातों के साथ-साथ, शिव लाल द्वारा एक 'कांटा' से नारायण की "पिटाई करने" और मुन्ना लाल द्वारा उस पर बंदूक से गोली चलाते हुए भी देखा था, इस प्रत्यक्ष साक्ष्य को इन तीनों (केदार, छंगे लाल और खेमकरण) में से किसी के द्वारा अभि. सा. 2 और अभि. सा. 3 के वृत्तांत की संपुष्टि करते हुए प्रत्यक्ष साक्ष्य दिया जा सकता था । इन तीनों व्यक्तियों, जिनको अभि. सा. 2 और अभि. सा. 3 दोनों द्वारा अन्य प्रत्यक्षदर्शी साक्षियों के रूप में नामित किया गया था, की परीक्षा नहीं कराई गई थी जिसके कारणों की सर्वोत्तम जानकारी अभियोजन पक्ष को है और इस न्यायालय को इस आधार पर यह निष्कर्ष निकालना होगा कि यदि उनकी परीक्षा कराई गई होती तो उनके द्वारा अभियोजन पक्ष के वृत्तांत का समर्थन नहीं किया जाता । न केवल केदार, छंगे लाल और खेमकरण की परीक्षा नहीं कराई गई थी, अपितु अभियोजन पक्ष ने डा. हनीफ की भी परीक्षा नहीं कराई थी जिसके पास अभि. सा. 2 गया था और अभिकथित रूप से हत्या की घटना का एक रिपोर्ट में लिखने के लिए वर्णन किया था । क्या डा. हनीफ ने अभि. सा. 2 के

वृत्तांत को असल में लेखबद्ध किया था, इस बारे में उसके द्वारा अभिसाक्ष्य दिया जा सकता था किंतु उसके अभाव में एक संदेह पैदा होता है जिसके आधार पर यह न्यायालय पुन: यह निष्कर्ष निकालने के लिए बाध्य है कि डा. हनीफ कतई इस घटनाक्रम में शामिल नहीं रहा होगा । तथापि, यह न्यायालय अभि. सा. 2 के अभिसाक्ष्य में कि इस स्पष्ट असंगति को ज्यादा महत्व नहीं देता है कि उसने रिपोर्ट पर निश्चित रूप से कहां पर अपने अंगूठे की छाप लगाई थी अर्थात् डा. हनीफ की दुकान में या पुलिस थाने में । यह एक छुट-पुट विसंगति है जिसे त्यक्त किया जा सकता है । पूर्वोक्त परिस्थितियों का मूल्यांकन तीन अन्य परिस्थितियों को ध्यान में रखकर किया जाना चाहिए, जिन्हें परिशमनकारी परिस्थितियां कहा जा सकता है । पहली, अभि. सा. 3 का दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 161 के अधीन कथन घटना के लगभग 24 दिनों के पश्चात् अभिलिखित किया गया था । चूंकि अन्वेषण अधिकारी साक्षी कठघरे में नहीं आया था इसलिए अपीलार्थियों को उसकी प्रतिपरीक्षा करने और तद्द्वारा ऐसे विलंब के लिए कारण जानने का अवसर नहीं मिला था । परिणामत:, अन्वेषण के अनुक्रम में अभि. सा. 3 के कथन को अभिलिखित करने में विलंब का उल्लेख नहीं किया गया है और इसलिए यह अन्यायोचित रह जाता है । अभि. सा. 3 को बाद में अन्वेषण की प्रक्रिया के दौरान एक प्रत्यक्षदर्शी साक्षी के रूप में गढ़ने की संभाव्यता से पूर्णत: इनकार नहीं किया जा सकता है । दूसरी, यद्यपि अभि. सा. 4 कथित रूप से घटनास्थल पर तारीख 5 सितंबर, 1985 को 1.30 बजे अपराह्न में पहुंचा था और शव के कूल्हे पर पहुंची क्षति से बह रहे रक्त में से एक गोली बरामद की थी, तो भी उन आयुधों का अभिग्रहण किए जाने का कोई समुचित प्रयास किया गया प्रतीत नहीं होता है जिनके द्वारा हिंसक आक्रमण किया गया था । यह सही है कि आयुध (आयुधों) का अभिग्रहण करने में मात्र असफलता/उपेक्षा अभियोजन के पक्षकथन को त्यक्त करने के लिए एकमात्र कारण नहीं हो सकता है किंतु तथाकथित प्रत्यक्षदर्शी साक्षियों अर्थात् अभि. सा. 2 और अभि. सा. 3 के मौखिक परिसाक्ष्य, जिसे इस न्यायालय द्वारा पूर्णत: विश्वसनीय नहीं पाया गया है, को देखने-भर से इसका महत्व हो जाता है । गायब कड़ियों को अन्वेषण अधिकारी द्वारा प्रस्तुत किया जा सकता था जो, पुन:, साक्षी कठघरे में नहीं आया था । क्या किसी साक्षी की

परीक्षा न कराने से प्रतिरक्षा पक्ष पर प्रतिकूल प्रभाव पड़ा है या नहीं, आवश्यक रूप से यह एक तथ्य का प्रश्न है और इसका निष्कर्ष प्रत्येक मामले के तथ्यों और परिस्थितियों पर विचार करते हुए निकाला जाना चाहिए । अन्वेषण अधिकारी एक साक्षी के रूप में क्यों अभिसाक्ष्य नहीं दे सका था, इसका कारण, जैसा कि अभि. सा. 4 द्वारा बताया गया था, यह है कि उसे प्रशिक्षण के लिए भेज दिया गया था । यह दर्शित नहीं किया गया था कि अन्वेषण अधिकारी विचारण न्यायालय में अपना अभिसाक्ष्य अभिलिखित कराने के लिए किसी भी परिस्थिति में अपने प्रशिक्षण पाठ्यक्रम (कोर्स) को नहीं छोड़ सकता था । यह उल्लेखनीय है कि न तो विचारण न्यायालय ने और न ही उच्च न्यायालय ने अन्वेषण अधिकारी की परीक्षा न कराने के मुद्दे पर विचार नहीं किया था । वर्तमान मामले के तथ्यों में, विशिष्ट रूप से अभियोजन के पक्षकथन में स्पष्ट दरार होने और अभि. सा. 2 तथा अभि. सा. 3 का साक्ष्य पूर्णत: विश्वसनीय न होने के कारण यह न्यायालय प्रस्तुत मामले को ऐसा मामला अभिनिर्धारित करता है जहां अन्वेषण अधिकारी की परीक्षा कराना महत्वपूर्ण था चूंकि वह प्रत्याशित साक्ष्य प्रस्तुत कर सकता था । उसकी परीक्षा न कराने से अपीलार्थियों को दोषसिद्ध कराने के लिए अभियोजन पक्ष के प्रयास में एक तात्विक खामी पैदा होती है और तद्द्वारा अभियोजन के पक्षकथन में युक्तियुक्त संदेह उत्पन्न होता है । जहां तक प्राक्षेपिकी रिपोर्ट अभिप्राप्त न करने का संबंध है, निस्संदेह यह सही है कि इसकी अनिवार्यता प्रत्येक मामले की परिस्थितियों पर निर्भर करेगी । इस मामले में, चूंकि कोई आक्रामक आयुध बरामद नहीं किया गया था इसलिए कोई प्राक्षेपिकी रिपोर्ट मांगी और अभिप्राप्त नहीं की गई थी । यद्यपि श्री गिरि ने दलील दी कि मुन्ना लाल के पास एक लाइसेंसशुदा बंदूक थी, तो भी इस न्यायालय को इसके संबंध में अभिलेख पर किसी साक्ष्य का पता नहीं चल सका । तथापि, इसका कोई महत्व नहीं है । वर्तमान मामले के तथ्यों और परिस्थितियों के आधार पर, आक्रामक आयुधों को अभिगृहीत करने में असफलता/उपेक्षा के साथ-साथ तात्विक साक्षियों की परीक्षा न कराया जाना अभियोजन के वृत्तांत पर इतना प्रतिकूल प्रभाव डालने वाला है कि इससे अपीलार्थियों को संदेह का फायदा प्रदान करने के लिए अन्य परिस्थितियों के साथ-साथ एक महत्वपूर्ण परिस्थिति का गठन होता है । तीसरी, अभि. सा. 1 द्वारा

दिया गया चिकित्सीय साक्ष्य, यदि इस पर पूर्णत: विश्वास किया जाए तो, इस न्यायालय को यह राय बनाने के लिए प्रेरित करता है कि अभि. सा. 4 का यह साक्ष्य कि उसने घटनास्थल से एक गोली बरामद करके उसे अभिगृहीत किया था, उतना ही संदेहास्पद है । अभि. सा. 1 के अनुसार, क्षति सं. 5 और 7 विपदग्रस्त पर चलाई गई गोलियों के प्रविष्टि स्थल थे जबकि क्षति सं. 6 और 8 ऐसी गोलियों के निकासी स्थल थे । गोलियां विपदग्रस्त के उदर और दाईं जांघ से पार हो गई थीं और तत्स्थानी निकासी स्थल थे, सोचने वाली बात यह है कि फिर भी कैसे अभि. सा. 4 को "शव के कूल्हे पर पहुंची क्षति से बह रहे रक्त में" एक गोली पाई जा सकती थी । सुभिन्न निकासी स्थल होने के बावजूद यह पूर्णत: अनधिसंभाव्य है कि क्रम सं. 6 पर पहुंची क्षति के पश्चात् फिर भी अभि. सा. 4 द्वारा पहुंची क्षति से बह रहे रक्त में गोली पाई जा सकती थी, जो कि दो निकासी स्थलों में से एक था । किसी भी स्थिति में, ऐसी गोली को, यद्यपि इसे एक अभिग्रहण ज्ञापन के अधीन अभिगृहीत किया गया था, विचारण में प्रदर्शित किया गया प्रतीत नहीं होता है जिससे अभि. सा. 4 का वृत्तांत अस्वीकार्य हो जाता है । (पैरा 29, 30, 31, 32, 33, 34, 35, 36, 37, 38, 39, 40 और 41)

यद्यपि अन्वेषण प्रक्रिया में त्रुटियां होने मात्र से स्वत: दोषमुक्ति के लिए आधार का गठन नहीं हो सकता, तो भी न्यायालय की यह विधिक बाध्यता है कि वह प्रत्येक मामले में अन्वेषण अधिकारी द्वारा की गई चूक से असंबद्ध अभियोजन साक्ष्य की यह पता लगाने के लिए सावधानीपूर्वक परीक्षा करे कि क्या अभिलेख पर लाया गया साक्ष्य विश्वसनीय है और क्या ऐसी चूक से सत्यता का पता लगाने का उद्देश्य प्रभावित होता है । विधि की उपरोक्त स्थिति का भान होने और दांडिक न्याय प्रशासन में लोगों के आशा और विश्वास को टूटने से बचाने के लिए इस न्यायालय ने अभियोजन पक्ष द्वारा प्रस्तुत किए गए जीर्ण-शीर्ण साक्ष्य की परीक्षा की है और अन्वेषण अधिकारी की लापरवाही तथा उसके द्वारा किए गए सरसरी अन्वेषण के परिणामस्वरूप लोप या चूक को प्राथमिकता देने से प्रविरत रहा है । इस न्यायालय का प्रयास अभिलेख पर के साक्ष्य का विश्लेषण और अवधारण करके मामले की तह में पहुंचने और यह अभिनिश्चित करने का रहा है कि क्या अपीलार्थियों

को सम्यक् रूप से दोषी पाया गया है तथा यह सुनिश्चित करना भी रहा है कि दोषी कानून के शिकंजे से बच न जाएं । अन्वेषण की प्रक्रिया में परेशान करने वाली बातों ने, जो अब तक ध्यान में आई हैं, अपीलार्थियों को संदेह का फायदा देने के लिए इस न्यायालय के मस्तिष्क को प्रभावित नहीं किया है अपितु विभिन्न तथ्यों और परिस्थितियों का उचित रूप से मूल्यांकन करने पर यह प्रकट हुआ है कि ऐसे कारण थे जिनके आधार पर अभि. सा. 2 अपीलार्थियों को मिथ्या रूप से फंसा सकता था और यह भी कि अभि. सा. 3 एक पूर्णत: विश्वसनीय साक्षी नहीं था । अभियोजन के वृत्तांत में पर्याप्त अनिश्चितता है और यह प्रतीत होता है कि निचले न्यायालय अन्य विद्यमान परिस्थितियों के प्रभाव को विचार में लाए बिना कहीं न कहीं अभि. सा. 2 और अभि. सा. 3 के मौखिक परिसाक्ष्य से प्रभावित हुए हैं और तद्द्वारा हस्तक्षेप किया जाना आवश्यक है । पूर्वोक्त कारणों से, इस न्यायालय की यह राय है कि इस आरोप को कि अपीलार्थियों ने नारायण की हत्या की थी, युक्तियुक्त संदेह के परे साबित किया गया नहीं कहा जा सकता, इसलिए संदेह के फायदे के हकदार थे और हैं । विचारण न्यायालय का उसके तारीख 29 जनवरी, 1986 के विनिश्चय में अंतर्विष्ट दोषसिद्धि और दंडादेश का निर्णय और आदेश असंधार्य होने के कारण अपास्त किया जाता है । परिणामत:, उच्च न्यायालय द्वारा दोषसिद्धि और दंडादेश को कायम रखते हुए तारीख 9 जुलाई, 2014 को पारित आक्षेपित निर्णय और आदेश को भी अपास्त किया जाता है । अपीलार्थियों को, जिन्हें अपीली निर्णय और आदेश किए जाने से लेकर सुधार गृह में रखा गया है, यदि वे किसी अन्य मामले में वांछित न हों तो तुरंत रिहा किया जाएगा । (पैरा 42 और 43)

निर्दिष्ट निर्णय

		पैरा
[2009]	(2009) 9 एस. सी. सी. 719	
	जरनैल सिंह बनाम **पंजाब राज्य** ।	23

अपीली (दांडिक) अधिकारिता : 2017 की दांडिक अपील सं. 490 (इसके साथ 2017 की दांडिक अपील सं. 491).

1986 की दांडिक अपील सं. 439 में इलाहाबाद उच्च न्यायालय द्वारा तारीख 9 जुलाई, 2014 को पारित निर्णय और आदेश के विरुद्ध अपील ।

अपीलार्थियों की ओर से श्री मुकेश कुमार गिरि

प्रत्यर्थियों की ओर से सर्वश्री अंकुर प्रकाश, संजय कुमार त्यागी, विकास बंसल, प्रभात कुमार राय, संजय कुमार, पवन और मीमांसक भारद्वाज

न्यायालय का निर्णय न्यायमूर्ति दिपांकर दत्ता ने दिया ।

न्या. दत्ता – इन दोनों दांडिक अपीलों में, जो एक ही घटना से उद्भूत हुई हैं, इलाहाबाद उच्च न्यायालय के 1986 की इस दांडिक अपील सं. 539 (दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 374(2) के अधीन अपील) को खारिज करते हुए तारीख 9 जुलाई, 2014 के निर्णय और आदेश को प्रश्नगत किया गया है जो अपीलार्थियों द्वारा 1985 के सेशन मामला सं. 499 में द्वितीय अपर सेशन न्यायाधीश, शाहजहांपुर, उत्तर प्रदेश के न्यायालय के तारीख 29 जनवरी, 1986 के निर्णय और आदेश के विरुद्ध की गई थी ।

प्रथम इत्तिला रिपोर्ट

2. राम विलास के पिता, नारायण की तारीख 5 सितंबर, 1985 को सवेरे लगभग 10.00 बजे हत्या कर दी गई थी । इसके ठीक पश्चात् राम विलास द्वारा लगभग 12.10 बजे अपराह्न में एक लिखित शिकायत दर्ज की गई थी जिसके आधार पर भारतीय दंड संहिता की धारा 302 के अधीन एक प्रथम इत्तिला रिपोर्ट रजिस्ट्रीकृत की गई थी । उक्त प्रथम इत्तिला रिपोर्ट डा. मोहम्मद हनीफ खान द्वारा लिखी गई थी । मुन्ना लाल, शिव लाल, बाबू राम और कलिका इस हत्या को कारित करने के अभियुक्त थे ।

मृत्यु-समीक्षा

3. प्रथम इत्तिला रिपोर्ट के रजिस्ट्रीकरण के परिणामस्वरूप पुलिस

थाना तिलहर के थाना पुलिस अधिकारी शैलेन्द्र बहादुर चंद्र (जो अन्वेषण अधिकारी भी थे) उप निरीक्षक राम पाल सागर और कांस्टेबल ऊधम सिंह के साथ घटनास्थल पर गए । मृत्यु-समीक्षा राम पाल सागर द्वारा की गई, जिसके अनुक्रम में घटनास्थल से नारायण को कारित क्षतियों में से एक क्षति से बह रहे रक्त से एक गोली बरामद की गई ।

आरोप

4. अन्वेषण पूर्ण होने के उपरांत, चारों अभियुक्तों के विरुद्ध संबंधित न्यायालय के समक्ष धारा 302 के अधीन आरोप पत्र फाइल किया गया । इसी बीच कलिका का देहांत हो गया । मामले को सुपुर्द करने के उपरांत विचारण न्यायालय ने निम्नलिखित आरोप विरचित किए :–

"आरोप

मैं सांवल सिंह, द्वितीय अपर सेशन न्यायाधीश, शाहजहांपुर तद्द्वारा आप –

1. शिव लाल

2. मुन्ना लाल

3. बाबू राम

को निम्नलिखित प्रकार से आरोपित करता हूं –

यह कि आपने कलिका के साथ तारीख 5 सितंबर, 1985 को लगभग 10.00 बजे पूर्वाह्न में गांव फतेहपुर बुजुर्ग **उर्फ** मोहद्दीपुर, पुलिस थाना तिलहर, जिला शाहजहांपुर में गांव आबादी के पश्चिम में स्थित बुधु खान के खेत में साशय और जान बूझकर नारायण की मृत्यु कारित करके उसकी हत्या की जिसमें आप मुन्ना ने बंदूक की गोली से क्षतियां कारित कीं, आप बाबू राम ने तमंचे से क्षतियां कारित कीं और आप शिव लाल ने कांटा से क्षतियां कारित कीं और आपके साथी कलिका, मृत ने लाठी से क्षतियां कारित कीं और आप सभी ने साशय उक्त अपराध करने में सहयोग किया और यह कि आपने तद्द्वारा भारतीय दंड संहिता की धारा 302 के अधीन दंडनीय

अपराध किया और यह इस सेशन न्यायालय के संज्ञान में है ।

और मैं तद्द्वारा निदेश देता हूं कि आपका उक्त आरोप के लिए इस सेशन न्यायालय द्वारा विचारण किया जाए ।"

विचारण

5. अभियोजन पक्ष ने अपने पक्षकथन के समर्थन में 5 (पांच) साक्षियों की परीक्षा की और एक दर्जन से अधिक दस्तावेजी साक्ष्य प्रस्तुत किए । प्रतिरक्षा पक्ष की ओर से किसी की परीक्षा नहीं कराई गई ।

6. अभि. सा. 1 डा. रमेश था, जिसने मरणोत्तर परीक्षा की थी । नारायण के शव पर निम्नलिखित मृत्यु-पूर्व की क्षतियां पाई गई थीं –

"(1) माथे पर बाईं भौंह के 3 सें. मी. ऊपर 2 सें. मी. x 1 सें. मी. का विदीर्ण घाव । किटाणु मौजूद ।

(2) निचले होंठ से 1 सें. मी. नीचे ठुड्डी पर 4 सें. मी. x 1 सें. मी. का विदीर्ण घाव । लार्वा मौजूद ।

(3) बाईं तरफ के चेहरे पर मुंह के बाईं तरफ से 2 सें. मी. बाईं पार्श्व तरफ 3 सें. मी. x 1 सें. मी. का विदीर्ण घाव ।

(4) नाभि से 5 सें. मी. ऊपर उदर गुहिका के सामने 5 सें. मी. गहरा 17 सें. मी. X 8 सें. मी. का चिरा हुआ घाव । अंतड़ियां बाहर निकल रही थीं ।

(5) उदर के सामने के भाग पर नाभि से 3 सें. मी. दाईं तरफ 2 सें. मी. x 1 सें. मी. का बंदूक की गोली का प्रविष्टि घाव । गोदन मौजूद । दिशा नीचे की तरफ पश्चगामी ।

(6) कूल्हे के बाईं तरफ कूल्हे की हड्डी से 5 सें. मी. नीचे 6 सें. मी. x 5 सें. मी. का बंदूक की गोली का निकासी घाव ।

(7) दाईं जांघ के सामने पर श्रोणि कंटक (अग्र) से 15 सें. मी. नीचे 2 सें. मी. x 1 सें. मी. का बंदूक की गोली का प्रविष्टि घाव जिसकी दिशा पीछे की तरफ थी ।

(8) दाईं जांघ के पिछली तरफ कूल्हे की हड्डी से 12 सें. मी. नीचे 3 सें. मी. x 2 सें. मी. बंदूक की गोली का निकासी घाव ।"

7. अभि. सा. 1 के अनुसार, "नारायण की मृत्यु सदमे और रक्तस्राव तथा अत्यधिक रक्त बहने" के कारण हुई थी; ऊपर उल्लिखित क्रमश: क्षति सं. 5 और 6 और इसी प्रकार क्षति सं. 7 और 8 प्रविष्टि और निकासी घाव थे, जो परस्पर तत्स्थानी थे, जो बंदूक और तमंचे की गोलियों से कारित किए जा सकते थे, जबकि क्षति सं. 1, 2 और 3 को लाठी से कारित किया जाना संभव था और क्षति सं. 4 "कांटा" से कारित की जा सकती थी ।

8. मृतक के पुत्र, राम विलास ने अभि. सा. 2 के रूप में अभिसाक्ष्य देते हुए यह कथन किया कि 10 (दस) वर्ष पहले नारायण और जसवंत (शिव लाल के पिता) और शिव लाल के बीच एक झगड़ा हुआ था और उस झगड़े में जसवंत की मृत्यु हो गई थी । शिव लाल के पक्ष की ओर से 'आजुधी' नामक व्यक्ति की हत्या कर दी गई थी । तथापि, नारायण को दोषमुक्त कर दिया गया था । अभि. सा. 2 ने, अन्य के साथ-साथ, मुन्ना लाल और शिव लाल की शनाख्त की थी, जो न्यायालय में मौजूद थे । अभि. सा. 2 के अनुसार, दुर्भाग्यपूर्ण घटना की तारीख को जब वह अपने पिता नारायण के साथ अपने खेत की जुताई करने के पश्चात् बुधु खान के खेत में पहुंचा तब अचानक अभियुक्त व्यक्ति शिव लाल के खेत से बाहर आए । उक्त अभियुक्त अर्थात् मुन्ना लाल, शिव लाल, बाबू राम और कलिका क्रमश: 'बंदूक', 'कांटा' (धारदार आयुध), 'तमंचा' (स्थानीय रूप से बनाई गई बंदूक), और 'लाठी' से लैस थे । वे गालियां दे रहे थे और नारायण की हत्या करने के लिए ललकार रहे थे । नारायण को क्रमश: मुन्ना लाल और बाबू राम से बंदूक की गोलियों की क्षतियां पहुंचीं, जबकि शिव लाल और कलिका ने उस पर कांटा और लाठी से प्रहार किए । इस घटना को केदार, हेमराज, खेमकरण और छंगे लाल द्वारा भी देखा गया था । केदार और हेमराज ने नारायण को न मारने का अनुरोध किया था । यह दोहराया गया था कि हेमराज घटना के समय आया था और घटना देखी थी । अभियुक्त

व्यक्तियों के भाग जाने के पश्चात् अन्य व्यक्ति वहां पहुंचे थे । अभि. सा. 2 यह देखकर कि नारायण की मृत्यु हो गई है, डा. हनीफ की दुकान पर पहुंचा और उसे घटना का वर्णन किया जिस पर डा. हनीफ ने शिकायत लिखी और अभि. सा. 2 को इसे पढ़कर सुनाया । अभि. सा. 2 ने डा. हनीफ द्वारा लिखी गई रिपोर्ट पर न तो हस्ताक्षर किए और न ही अंगूठे की छाप लगाई किंतु जब अभि. सा. 2 रिपोर्ट को पुलिस थाने लेकर गया, तो उसने उस रिपोर्ट पर अपने अंगूठे की छाप लगाई थी जो पुलिस थाने में 'मुंशी' द्वारा लिखी गई थी ।

9. अभि. सा. 2 ने प्रतिपरीक्षा के दौरान यह प्रकटित किया कि नारायण ने जसवंत की बंदूक के लाइसेंस को रद्द करने के लिए एक आवेदन दिया था और 'पैरवी' की थी । नारायण का पूर्व में भारतीय दंड संहिता की धारा 302 के अधीन एक मामले में विचारण किया गया था और उसने एक प्रति मामला भी फाइल किया था; इसके अतिरिक्त, नारायण के विरुद्ध दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 107/116 के अधीन एक मामला लंबित था; और दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 145 के अधीन भी एक मामला लंबित था जिसमें अभि. सा. 2 और उसका पिता नारायण अभियुक्त थे । पश्चात्वर्ती मामले में, मुन्ना लाल उसके विरुद्ध साक्षी था । 'आजुधी' की हत्या को लेकर शिव लाल के साथ लगातार दुश्मनी चली आ रही थी । तथापि, नारायण की हत्या होने तक, अभि. सा. 2 या उसके पिता के साथ कोई 'मारपीट' या 'पैरोकारी' नहीं हुई थी । अभि. सा. 2 ने "पुलिस थाने में रिपोर्ट पर अंगूठे की छाप नहीं लगाई थी" अपितु उसने उस पर अपने अंगूठे की छाप हनीफ की 'दुकान' में लगाई थी और इसे मुंशी को सौंपा था ।

10. हेमराज, प्रत्यक्षदर्शी साक्षी ने अभि. सा. 3 के रूप में अभिसाक्ष्य दिया था । अभि. सा. 3 की बहिन गोपालपुर धाधीपुरा रहती है और इस साक्षी का आना-जाना है । मोहद्दीपुर और गोपालपुर के बीच दूरी 1 – 2 मील है । जब कभी अभि. सा. 3 अपने गांव से गोपालपुर जाता है, तो वह गांव मोहद्दीपुर की बाह्य सड़क से जाता है । जब वह बुधु खान के खेत के निकट पहुंचा, तो अभियुक्त व्यक्ति बंदूक, कांटा, तमंचा और लाठी से लैस होकर नारायण को मार रहे थे । अभि. सा. 2

घटनास्थल पर मौजूद था । दो राहगीर अर्थात् छंगे लाल और खेमकरण वहां पहुंचे । अभि. सा. 3 के अतिरिक्त, केदार जो दो भैसों को चरा रहा था, ने भी घटना देखी थी । नारायण पर प्रहार करने के पश्चात् अभियुक्त व्यक्ति दक्षिणी दिशा में भाग गए थे । नारायण की मृत्यु हो गई थी ।

11. अभि. सा. 3 ने प्रतिपरीक्षा के दौरान इस सुझाव से इनकार किया कि उसकी नारायण के परिवार से नातेदारी है । अभि. सा. 3 ने यह दोहराया कि केदार घटनास्थल के निकट पशुओं को चरा रहा था और खेमकरण तथा छंगे लाल उसकी (अभि. सा. 3) मौजूदगी में वहां आए थे । अभि. स. 3 के घटनास्थल से जाने तक 20 (बीस) से 25 (पच्चीस) व्यक्ति वहां इकट्ठा हो गए थे जिनमें से नारायण के परिवार से एक वृद्ध महिला और एक लड़की रो रही थी । अभि. सा. 3 न तो राम विलास की पत्नी की शनाख्त कर सका था और न ही वह उन ग्रामवासियों के नाम जानता था जो बाद में वहां आए थे ।

12. राम पाल सागर, जिसने मृत्युसमीक्षा की थी, अभि. सा. 4 था । अभि. सा. 4 ने यह अभिसाक्ष्य दिया था कि मृत्युसमीक्षा के दौरान उसे मृतक के कुल्हे पर क्षति से बह रहे रक्त में एक गोली पाई थी । उसने आरोप पत्र और जो गोली बरामद की गई थी, उससे संबंधित अभिग्रहण ज्ञापन को साबित किया । अभि. सा. 4 ने यह भी अभिसाक्ष्य दिया था कि अन्य व्यक्तियों के साथ-साथ उसने घटनास्थल पर पहुंचने पर केदार को वहां पाया था ।

13. कांस्टेबल ऊधम सिंह ने अभि. सा. 5 के रूप मे अभिसाक्ष्य दिया था । अभि. सा. 5 वहां घटनास्थल पर अन्वेषण अधिकारी के साथ गया था, जहां अभि. सा. 4 ने मृत्युसमीक्षा की थी ।

14. महत्वपूर्ण रूप से, अभियोजन पक्ष द्वारा डा. हनीफ, केदार, छंगे लाल, खेमकरण और अन्वेषण अधिकारी की परीक्षा नहीं कराई गई थी । इसके अतिरिक्त, न तो बंदूक और तमंचा और न ही कांटा और लाठी अभिगृहीत किए गए थे । कोई न्यायालयिक प्रयोगशाला या प्राक्षेपिकी रिपोर्ट भी नहीं थीं ।

15. अंततोगत्वा, विद्वान् सेशन न्यायाधीश ने अभिलेख पर के साक्ष्य पर विचार करने के उपरांत यह अभिनिर्धारित किया कि संगत और अकाट्य प्रत्यक्ष साक्ष्य से मामला साबित होता है जिसका समर्थन विश्वसनीय अधिसंभाव्यताओं, हेतुक की विद्यमानता, चिकित्सीय साक्ष्य और सभी अन्य परिस्थितियों से होता है । मुन्ना लाल, शिव लाल और बाबू राम को उन अपराधों का दोषी अभिनिर्धारित करते हुए जिनसे उन्हें आरोपित किया गया था, विचारण न्यायालय अभि. सा. 2 और अभि. सा. 3 के प्रत्यक्ष साक्ष्य से प्रभावित हुआ था । यह भी अभिनिर्धारित किया गया था कि तुरंत प्रथम इत्तिला रिपोर्ट दर्ज कराना मामले की सत्यता के बारे में एक गारंटी प्रस्तुत करता है । परिणामतः, न्यायाधीश ने अपने तारीख 29 जनवरी, 1986 के निर्णय द्वारा जीवित अभियुक्तों अर्थात् मुन्ना लाल, शिव लाल और बाबू राम को दोषसिद्ध किया और उन पर आजीवन कारावास का दंडादेश अधिरोपित किया ।

अपील

16. जैसा कि ऊपर उल्लेख किया गया है, सेशन न्यायाधीश के पूर्वोक्त निर्णय और आदेश को मुन्ना लाल, शिव लाल और बाबू राम द्वारा इलाहाबाद उच्च न्यायालय के समक्ष अपील में ले जाया गया ।

17. अपील के लंबित रहने के दौरान बाबू राम का देहांत हो गया इसलिए उसकी प्रेरणा पर अपील का उपशमन हो गया ।

18. उच्च न्यायालय ने मुन्ना लाल और शिव लाल तथा उत्तर प्रदेश राज्य की ओर से दी गई दलीलों को सुनने के पश्चात् और अभिलेख पर की सामग्री पर विचार करने के पश्चात् सेशन न्यायाधीश द्वारा निकाले गए निष्कर्षों से सहमति व्यक्त की और यह मत व्यक्त किया कि हस्तक्षेप करने के लिए कोई पर्याप्त आधार नहीं है । उच्च न्यायालय ने उक्त अपील को खारिज करते हुए मुन्ना लाल और शिव लाल को, जो जमानत पर थे, को अपने-अपने दंडादेश की शेष अवधि को भुगतने के लिए 30 दिन के भीतर विचारण न्यायालय के समक्ष अभ्यर्पण करने का निदेश दिया, जिसमें असफल रहने पर विचारण न्यायालय को निदेश दिया गया कि उनकी गिरफ्तारी को सुनिश्चित किया जाए और विधि के अनुसार दंडादेश भुगतने के लिए उन्हें जेल

भेजा जाए ।

इस न्यायालय के समक्ष कार्यवाहियां

19. उच्च न्यायालय द्वारा 1986 की अपील सं. 539 की खारिजी से व्यथित होकर मुन्ना लाल और शिव लाल ने विशेष इजाजत लेकर अपील के लिए आवेदन किया जिस पर इस न्यायालय द्वारा तारीख 6 मार्च, 2017 के आदेश द्वारा इजाजत दी गई ।

20. इसी बीच, उच्च न्यायालय द्वारा उनकी अपील की खारिजी के पश्चात् मुन्ना लाल और शिव लाल को अभिरक्षा में लिया गया । दोनों अपीलार्थियों ने 11 वर्ष 11 महीने से अधिक अपने-अपने दंडादेश भुगतने के पश्चात् उन्होंने जमानत के लिए आवेदन किया । जमानत के लिए आवेदन (आवेदनों) पर तारीख 10 जनवरी, 2023 को विचार करते हुए इस न्यायालय ने पक्षकारों को अपीलों के गुणागुण पर सुनवाई करने के लिए अगले दिन बेहतर तरीके से तैयार होकर आने का निदेश दिया ।

21. अपीलार्थियों अर्थात् मुन्ना लाल और शिव लाल की ओर से हाजिर होने वाले विद्वान् काउंसेल श्री मुकेश के. गिरि और प्रत्यर्थी की ओर से विद्वान् काउंसेल श्री संजय कुमार त्यागी को पर्याप्त विस्तार से सुना गया ।

अपीलार्थियों की दलीलें

22. श्री गिरि ने विचारण न्यायालय और उच्च न्यायालय द्वारा निकाले गए निष्कर्षों पर गंभीर आपत्ति की । उनके अनुसार, अभिलेख पर के साक्ष्य से पूर्णत: यह स्पष्ट है कि नारायण और जसवंत (मुन्ना लाल के पिता) के बीच लंबे समय से चली आ रही दुश्मनी थी और निचले न्यायालय इस बात पर विचार करने में असफल रहे कि यह एक मिथ्या फंसाने का स्पष्ट मामला था । इसके अतिरिक्त, उन्होंने दलील दी कि हेमराज, अभि. सा. 3 का दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 161 के अधीन कथन 29 सितंबर, 1985 अर्थात् अपीलार्थियों द्वारा अभिकथित रूप से नारायण की हत्या करने के 24 (चौबीस) दिनों के पश्चात् अभिलिखित किया गया था । अन्वेषण अधिकारी का साक्षी कटघरे में प्रवेश न करने के अभाव में ऐसा कथन अभिलिखित करने में इस विलंब

के लिए कोई न्याय-सम्मत स्पष्टीकरण नहीं दिया गया था और इससे अपीलार्थियों पर अत्यधिक प्रतिकूल प्रभाव पड़ा था । इसके अतिरिक्त, डा. हनीफ, केदार, छंगे लाल और खेमकरण को अभियोजन साक्षियों के रूप में पेश न करने की बात को निर्दिष्ट करते हुए उनके द्वारा यह दलील दी गई कि इस बात को अभियोजन के पक्षकथन के लिए घातक अभिनिर्धारित किया जाना चाहिए था ।

23. श्री गिरि ने आगे यह दलील दी कि अभि. सा. 3 केवल एक संयोगी साक्षी था और उस गांव, जहां अपीलार्थी और नारायण अपने परिवार के सदस्यों के साथ रहते थे, से भिन्न गांव का निवासी होने के कारण उसके पास सवेरे-सवेरे 10.00 बजे वहां घटनास्थल पर होने का कोई कारण नहीं था और उसके द्वारा इसके लिए कोई विश्वसनीय स्पष्टीकरण नहीं दिया गया था । श्री गिरि द्वारा अपनी इस दलील का समर्थन करते हुए कि किसी संयोगी साक्षी के साक्ष्य की सावधानी और बारीकी से संवीक्षा करने की आवश्यकता होती है, यह कि घटनास्थल पर उसकी मौजूदगी को अवश्य पर्याप्त रूप से सिद्ध किया जाना चाहिए, जिसकी घटनास्थल पर मौजूदगी संदेहास्पद हो जाती है उसे त्यक्त कर दिया जाना चाहिए, **जरनैल सिंह** बनाम **पंजाब राज्य**[1] वाले मामले में इस न्यायालय के विनिश्चय का अवलंब लिया ।

24. श्री गिरि ने आगे यह दलील दी कि मुन्ना लाल की दोनाली बंदूक एक लाइसेंसशुदा बंदूक थी और इस बंदूक को अभिगृहीत करने का कभी कोई प्रयास नहीं किया गया था । रोचक बात यह है कि जिस स्थान पर नारायण का शव पड़ा हुआ था वहां से एक गोली अभिगृहीत की गई थी किंतु यह अभिनिश्चित करने के लिए प्राक्षेपिकी विशेषज्ञ की कोई राय अभिप्राप्त करने का प्रयत्न भी नहीं किया गया था कि गोली मुन्ना लाल की बंदूक से चलाई गई थी या नहीं ।

25. श्री गिरि ने यह भी दलील दी कि अन्वेषण अधिकारी के परिसाक्ष्य को अभिलिखित करने में अभियोजन पक्ष की असफलता को एक गंभीर खामी के रूप में समझा जाना चाहिए जिससे प्रतिरक्षा पक्ष के

---

[1] (2009) 9 एस. सी. सी. 719.

इस वृत्तांत पर विश्वास पैदा होता है कि नारायण की हत्या किसी अन्य व्यक्ति द्वारा की गई होगी किंतु पुरानी दुश्मनी के कारण मुन्ना लाल और शिव लाल को मिथ्या रूप से अभियुक्तों के रूप में आरोपित किया गया था ।

राज्य की दलीलें

26. इसके विपरीत, सामान्य प्रत्यर्थियों की ओर से विद्वान् काउंसेल श्री त्यागी ने यह दलील दी कि विचारण न्यायालय तथा उच्च न्यायालय ने सावधानीपूर्वक अभिलेख पर के साक्ष्य की समीक्षा की थी और यह निष्कर्ष निकाला था कि मुन्ना लाल और शिव लाल बाबू राम के साथ-साथ हत्या के अपराध के दोषी थे । विद्वान् काउंसेल के अनुसार, मात्र अन्वेषण की प्रक्रिया में खामी इस प्रकार निकाले गए निष्कर्षों को अस्वीकार करने के लिए पर्याप्त नहीं होगी । प्रत्यक्षदर्शी साक्षियों अभि. सा. 2 और अभि. सा. 3 के वृत्तांत निचले न्यायालयों द्वारा विश्वसनीय और भरोसेमंद पाए गए थे और ऐसे वृत्तांतों को अधिक्षिप्त करने के लिए अभिलेख पर कुछ नहीं होने के कारण किसी हस्तक्षेप की आवश्यकता नहीं है । उन्होंने यह भी दलील दी कि अपराध के आयुधों को अभिग्रहण करने में लोप और/या प्राक्षेपिकी रिपोर्ट को मात्र प्रस्तुत न करना स्वयंमेव वहां अभियोजन पक्ष के लिए घातक नहीं हो सकता है जहां अभिलेख पर अभियुक्तों की दोषिता को स्पष्ट रूप से इंगित करते हुए विश्वसनीय प्रत्यक्षदर्शी साक्ष्य उपलब्ध हो । उन्होंने यह निवेदन करते हुए अपनी दलीलों का समापन किया कि ये अपीलें कोई गुणागुण न होने के कारण खारिज किए जाने योग्य हैं ।

प्रश्न

27. प्रश्न यह है कि इस न्यायालय को इन दांडिक अपीलों में यह विनिश्चय करना है कि क्या विचारण न्यायालय ने अपने समक्ष उपलब्ध सामग्री के आधार पर दोषसिद्धि अभिलिखित करने और अपीलार्थियों को अपना शेष जीवन कारागार में बिताने का दंडादेश देते हुए न्यायोचित किया था या नहीं । चूंकि उच्च न्यायालय ने विचारण न्यायालय के निर्णय और आदेश को कायम रखा था इसलिए इस प्रश्न का उत्तर इस

न्यायालय का इन अपीलों का किसी न किसी प्रकार से विनिश्चय करने के लिए मार्ग-दर्शन करेगा ।

विनिश्चय

28. इन अपीलार्थियों के भाग्य का विनिश्चय करने की कवायद को आरंभ करने से पूर्व इन दो अपीलों का विनिश्चय करने के लिए सुसंगत कतिपय सिद्धांतों का उल्लेख करना उपयुक्त होगा । यह कहने की आवश्यकता नहीं है कि ये सिद्धांत पिछले कुछ वर्षों में प्रतिपादित किए गए हैं और 'विधि के स्थिर सिद्धांतों' के रूप में निश्चित हैं । ये हैं :–

(क) भारतीय साक्ष्य अधिनियम, 1872 की धारा 134 में यह सुविख्यात सूत्र सन्निविष्ट है कि साक्ष्य का विवेचन किया जाना चाहिए न कि गणना । दूसरे शब्दों में, यह साक्ष्य की गुणवत्ता है जो मायने रखती है न कि मात्रा । निष्कर्षत:, यहां तक कि हत्या के मामले में भी साक्षियों की बाहुलता पर जोर देना आवश्यक नहीं है और केवल एक साक्षी के मौखिक साक्ष्य के आधार पर दोषसिद्धि की जा सकती है यदि वह विश्वसनीय और भरोसेमंद पाया जाता है ।

(ख) साधारणतया, मौखिक परिसाक्ष्य को तीन प्रवर्गों में वर्गीकृत किया जा सकता है, अर्थात् –

(i) पूर्णत: विश्वसनीय;

(ii) पूर्णत: अविश्वसनीय;

(iii) न तो पूर्णत: विश्वसनीय और न ही पूर्णत: अविश्वसनीय ।

प्रथम दो प्रवर्ग के मामलों में न्यायालय के लिए हो सकता है अपना निष्कर्ष निकालने में गंभीर कठिनाई न हो । तथापि, तीसरे प्रवर्ग के मामलों में न्यायालय को सतर्क रहना चाहिए और प्रज्ञा के नियम की अपेक्षा के रूप में प्रत्यक्ष या पारिस्थितिक विश्वसनीय परिसाक्ष्य द्वारा किन्हीं तात्विक विशिष्टियों की संपुष्टि की तलाश करनी चाहिए ।

(ग) त्रुटिपूर्ण अन्वेषण सदैव वहां अभियोजन पक्ष के लिए

घातक नहीं होता है जहां प्रत्यक्षदर्शी परिसाक्ष्य विश्वसनीय और तर्कपूर्ण पाया जाता है । जबकि ऐसे मामले में न्यायालय को साक्ष्य का मूल्यांकन करने में सतर्क रहना चाहिए, किंतु दोषपूर्ण अन्वेषण सभी मामलों में एक विश्वसनीय अभियोजन वृत्तांत को त्यक्त करने के लिए एक निश्चायक कारक नहीं हो सकता है ।

(घ) अन्वेषण अधिकारी की परीक्षा न कराने से अभियुक्त पर अवश्य प्रतिकूल प्रभाव पड़ेगा; यदि कोई प्रतिकूल प्रभाव नहीं पड़ा है, तो परीक्षा न कराने मात्र से यह अभियोजन के पक्षकथन के लिए घातक नहीं होगा ।

(ङ) जब कोई साक्षी कुछ समय व्यतीत होने के पश्चात् स्वाभाविक रीति में अभिसाक्ष्य देता है, तो उसमें विसंगतियां हो सकती हैं और यदि ऐसी विसंगतियां तुलनात्मक रूप से तुच्छ प्रकृति की हैं और अभियोजन के वृत्तांत की तह में नहीं जाती हैं, तब उन्हें असम्यक् महत्व नहीं दिया जा सकता ।

29. अभियोजन साक्षी 2 और 3 द्वारा दिए गए मौखिक साक्ष्य का मूल्यांकन करने पर इस न्यायालय का यह मत है कि इसका निष्कर्ष आक्षेपित निर्णयों में निकाले गए निष्कर्षों से भिन्न नहीं होगा किंतु कतिपय महत्वपूर्ण बातों के लिए, जिन पर दुर्भाग्यवश निचले न्यायालयों ने ध्यान नहीं दिया है, थोड़ी देर में चर्चा की जाएगी । साथ ही, यदि खामी तुच्छ प्रकृति की रही होती, तो इस न्यायालय के लिए अभि. सा. 1 द्वारा दिए गए चिकित्सीय साक्ष्य को ध्यान में रखते हुए अभि. सा. 2 और अभि. सा. 3 द्वारा दिए गए अभिसाक्ष्य को स्वीकार करना और इस निष्कर्ष को कायम रखना कतई मुश्किल नहीं होता कि नारायण की मृत्यु बंदूक की गोली से और अपीलार्थियों द्वारा उसे कारित अन्य क्षतियों के कारण हुई थी । निश्चित रूप से, यह हत्या का एक स्पष्ट मामला रहा होता जिसमें नारायण विपदग्रस्त था और अपीलार्थी अपराध के कर्ता थे ।

30. तथापि, नारायण की हत्या से लगभग 10 (दस) वर्षों से उसके (नारायण) और अपीलार्थियों के बीच चली आ रही दुश्मनी के पूर्ववर्ती

इतिहास को ध्यान में रखते हुए अभियोजन पक्ष के लिए स्थिति अधिक गंभीर हो जाती है । अपीलार्थियों ने दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 313 के अधीन परीक्षा के दौरान न केवल यह साक्ष्य दिया था कि मुन्ना लाल शिव लाल के हित-पूर्वाधिकारियों और राम विलास (अभि. सा. 2) के बीच एक संपत्ति विवाद के संबंध में दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 145 के अधीन कार्यवाहियों में शिव लाल की ओर से एक साक्षी था, यह बात स्वयं अभि. सा. 2 के अभिसाक्ष्य से स्पष्ट होती है कि एक ओर नारायण और दूसरी ओर जसवंत (शिव लाल का पिता) और शिव लाल के बीच पिछले 10 (दस) वर्षों से झगड़ा चला आ रहा था; यह भी कि जसवंत और एक अन्य व्यक्ति की उस झगड़े में मृत्यु हो गई थी; और यह दुश्मनी जारी थी चूंकि शिव लाल नारायण की मृत्यु से पूर्व आवासीय भूमि का बलपूर्वक कब्जा लेना चाह रहा था जिसके लिए दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 145 के अधीन एक मामला रजिस्ट्रीकृत किया गया था और जिसमें मुन्ना लाल अभि. सा. 2 के विरुद्ध एक साक्षी था । अपीलार्थियों की ओर से इस न्यायालय के समक्ष यह प्रदर्शित करने का प्रयास किया गया कि मुन्ना लाल और शिव लाल को मिथ्या रूप से फंसाया गया था चूंकि अभि. सा. 2 का आशय यह सुनिश्चित करना था कि उन्हें सलाखों के पीछे रखा जाए और इस संपत्ति विवाद का अंत ऐसी रीति में किया जाए जो विधि द्वारा मान्य न हो ।

31. अपीलार्थियों की दलील के इस भाग को पूर्णत: अस्वीकार नहीं किया जा सकता । नारायण की अभिकथित हत्या से पूर्व दोनों समूहों के बीच 10 (दस) वर्षों से चली आ रही दुश्मनी के अविवादग्रस्त साक्ष्य के कारण यह सिद्ध किया जा सकता है कि अभि. सा. 2 की अपीलार्थियों के प्रति व्यक्तिगत दुर्भावना थी और अपीलार्थियों को विधिक कार्यवाहियों तथा सांपत्तिक अधिकारों में हस्तक्षेप करने से दूर रखने के आशय से अभि. सा. 2 द्वारा कार्रवाई करने की संभाव्यता से इनकार नहीं किया जा सकता, इसलिए अभि. सा. 2 की अपीलार्थियों से दुश्मनी होने के कारण उसके परिसाक्ष्य पर थोड़ा विचार किया जाना चाहिए और अभिलेख पर के अन्य साक्ष्य की अधिक गहराई से संवीक्षा किया जाना भी वास्तव में ऊपर निर्दिष्ट किए गए स्थिर सिद्धांतों को ध्यान में रखते हुए आवश्यक है ।

32. अभि. सा. 2 के मौखिक साक्ष्य से यह पाए जाने पर कि घटना के दिन सवेरे क्या हुआ था, उस बारे में अभि. सा. 3 के मौखिक परिसाक्ष्य पर विचार करना आवश्यक है । वास्तव में अपीलार्थियों की ओर से यह सिद्ध करने का प्रयत्न किया गया है कि अभि. सा. 3, अभि. सा. 2 का नातेदार था और एक 'संयोगी साक्षी' होने के अलावा एक हितबद्ध साक्षी भी था इसलिए उसका परिसाक्ष्य पूर्णत: विश्वनीय नहीं है । अभि. सा. 3 के परिसाक्ष्य से यह स्पष्ट नहीं है कि इतने सवेरे-सवेरे वह घटनास्थल से होकर क्यों गुजर रहा था । यह पाया गया है कि अभि. सा. 3 नेवदिया, पुलिस थाना खुड्डागंज, जिला शाहजहांपुर का निवासी है जबकि अभि. सा. 2 फतेहपुर बुर्जुग, पुलिस थाना तिलहर, जिला शाहजहांपुर का निवासी है । दोनों स्थानों के बीच 1-2 मील की दूरी है । हत्या की घटना पुलिस थाना तिलहर की अधिकारिता संबंधी सीमा के भीतर घटी थी । अभि. सा. 3 के साक्ष्य से पूरी तरह स्पष्ट रूप से यह प्रकटित नहीं हुआ था कि वह कहां से चला था और उसे कहां जाना था । गोपालपुर धादीपुरा वह गांव हो सकता है जहां अभि. सा. 3 की बहिन की ससुराल है, किंतु किस प्रयोजन के लिए वह गया था यह पूर्णत: स्पष्ट नहीं है । अभि. सा. 3 द्वारा यह नहीं कहा गया था कि वह अपनी बहिन के निवास स्थान की ओर जा रहा था । प्रतिपरीक्षा में अभि. सा. 3 ने "फतेहपुर बुजुर्ग **उर्फ** मोहद्दीपुर" में निवास करने की बात से इनकार किया था ।

33. अपीलार्थियों की दोषिता को युक्तियुक्त संदेह के परे साबित करने के लिए कुछ और विशिष्टियों को इस परिस्थिति पर विचार करने के लिए दिया जाना अपेक्षित है कि अभि. सा. 3 अधिक से अधिक एक 'संयोगी साक्षी' था । संयोगवश, अभि. सा. 2 ने अभि. सा. 3 का नातेदार होने की बात से इनकार किया था और इस तथ्य को देखते हुए कि अभि. सा. 3 एक भिन्न गांव का निवासी था, अभियोजन पक्ष द्वारा अभि. सा. 2 से यह बात नहीं प्रकट कराई जा सकी थी कि उसे कैसे अभि. सा. 3 के नाम का पता था । इसी प्रकार, अभि. सा. 3 ने भी यह नहीं कहा था कि वह पहले से अभि. सा. 2 या उसके पिता को जानता था । अभि. सा. 2 और अभि. सा. 3 के बीच जो जान-पहचान थी,

उसकी प्रकृति को अभियोजन पक्ष द्वारा स्पष्ट किया जाना चाहिए था । इसके अतिरिक्त, यद्यपि यह सत्य है कि अभि. सा. 3 ने इस बारे में स्पष्ट विवरण दिया था कि कैसे नारायण को मुन्ना लाल द्वारा गोली मारी गई थी, किंतु जहां तक शिव लाल का संबंध है उसकी किसी विनिर्दिष्ट भूमिका का उल्लेख नहीं किया गया है, सिवाय इसके कि सभी चारों अभियुक्त "मारपीट" कर रहे थे (जैसा कि हिंदी में अभिलिखित किए गए साक्ष्य से प्रकट होता है) और न कि "जान से मार रहे थे" (जैसा कि कागजात पुस्तिका में अनूदित वृत्तांत उपलब्ध है) । पुनः, अभि. सा. 3 ने प्रतिपरीक्षा के दौरान यह अभिसाक्ष्य दिया था कि मुन्ना लाल ने नारायण को गोली मारी थी और इस बात को विस्तारपूर्वक नहीं बताया था कि क्या शिव लाल ने भी नारायण को कोई क्षति कारित की थी । जहां तक अभि. सा. 2 द्वारा शिव लाल पर आरोपित भूमिका का संबंध है, अभि. सा. 2 और अभि. सा. 3 के वृत्तांतों के बीच स्पष्ट विसंगति है जिससे मुश्किल ही अनदेखा किया जा सकता है ।

34. तथापि, सर्वाधिक महत्वपूर्ण बात यह है कि अभिलेख से प्रकट होने वाली परिस्थितियों से घटनास्थल पर अभि. सा. 3 की मौजूदगी औचित्यपूर्ण नहीं लगती है । अतः इस न्यायालय का यह दृढ़ मत है कि अभि. सा. 2 और अभि. सा. 3 के परिसाक्ष्य संदेह से मुक्त नहीं हैं और उनके साक्ष्य अनधिक्षेपणीय गुणवत्ता के न होने के कारण प्रज्ञा का नियम उनके वृत्तांतों की उन अन्य साक्षियों से संपुष्टि की मांग करेगा जो अभि. सा. 2 और अभि. सा. 3 के अनुसार घटनास्थल पर मौजूद थे और नारायण की हत्या करते हुए देखा था ।

35. अभि. सा. 2 और अभि. सा. 3 के साक्ष्य के अनुसार, वहां अन्य प्रत्यक्षदर्शी साक्षी थे जिनमें केदार एक मुख्य साक्षी था और छंगे लाल तथा खेमकरण स्वतंत्र साक्षी थे । चूंकि अभि. सा. 2 और अभि. सा. 3 का यह वृत्तांत था कि केदार, छंगे लाल और खेमकरण घटनास्थल पर मौजूद थे और उन्होंने, अन्य बातों के साथ-साथ, शिव लाल द्वारा एक 'कांटा' से नारायण की "पिटाई करने" और मुन्ना लाल द्वारा उस पर बंदूक से गोली चलाते हुए भी देखा था, इस प्रत्यक्ष साक्ष्य

को इन तीनों (केदार, छंगे लाल और खेमकरण) में से किसी के द्वारा अभि. सा. 2 और अभि. सा. 3 के वृत्तांत की संपुष्टि करते हुए प्रत्यक्ष साक्ष्य दिया जा सकता था । इन तीनों व्यक्तियों, जिनको अभि. सा. 2 और अभि. सा. 3 दोनों द्वारा अन्य प्रत्यक्षदर्शी साक्षियों के रूप में नामित किया गया था, की परीक्षा नहीं कराई गई थी जिसके कारणों की सर्वोत्तम जानकारी अभियोजन पक्ष को है और इस न्यायालय को इस आधार पर यह निष्कर्ष निकालना होगा कि यदि उनकी परीक्षा कराई गई होती तो उनके द्वारा अभियोजन पक्ष के वृत्तांत का समर्थन नहीं किया जाता ।

36. न केवल केदार, छंगे लाल और खेमकरण की परीक्षा नहीं कराई गई थी, अपितु अभियोजन पक्ष ने डा. हनीफ की भी परीक्षा नहीं कराई थी जिसके पास अभि. सा. 2 गया था और अभिकथित रूप से हत्या की घटना का एक रिपोर्ट में लिखने के लिए वर्णन किया था । क्या डा. हनीफ ने अभि. सा. 2 के वृत्तांत को असल में लेखबद्ध किया था, इस बारे में उसके द्वारा अभिसाक्ष्य दिया जा सकता था किंतु उसके अभाव में एक संदेह पैदा होता है जिसके आधार पर यह न्यायालय पुन: यह निष्कर्ष निकालने के लिए बाध्य है कि डा. हनीफ कतई इस घटनाक्रम में शामिल नहीं रहा होगा । तथापि, यह न्यायालय अभि. सा. 2 के अभिसाक्ष्य में कि इस स्पष्ट असंगति को ज्यादा महत्व नहीं देता है कि उसने रिपोर्ट पर निश्चित रूप से कहां पर अपने अंगूठे की छाप लगाई थी अर्थात् डा. हनीफ की दुकान में या पुलिस थाने में । यह एक छुटपुट विसंगति है जिसे त्यक्त किया जा सकता है ।

37. पूर्वोक्त परिस्थितियों का मूल्यांकन तीन अन्य परिस्थितियों को ध्यान में रखकर किया जाना चाहिए, जिन्हें परिशमनकारी परिस्थितियां कहा जा सकता है ।

38. पहली, अभि. सा. 3 का दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 161 के अधीन कथन घटना के लगभग 24 दिनों के पश्चात् अभिलिखित किया गया था । चूंकि अन्वेषण अधिकारी साक्षी कठघरे में नहीं आया था इसलिए अपीलार्थियों को उसकी प्रतिपरीक्षा करने और तद्द्वारा ऐसे विलंब

के लिए कारण जानने का अवसर नहीं मिला था । परिणामत:, अन्वेषण के अनुक्रम में अभि. सा. 3 के कथन को अभिलिखित करने में विलंब का उल्लेख नहीं किया गया है और इसलिए यह अन्यायोचित रह जाता है । अभि. सा. 3 को बाद में अन्वेषण की प्रक्रिया के दौरान एक प्रत्यक्षदर्शी साक्षी के रूप में गढ़ने की संभाव्यता से पूर्णत: इनकार नहीं किया जा सकता है ।

39. दूसरी, यद्यपि अभि. सा. 4 कथित रूप से घटनास्थल पर तारीख 5 सितंबर, 1985 को 1.30 बजे अपराह्न में पहुंचा था और शव के कूल्हे पर पहुंची क्षति से बह रहे रक्त में से एक गोली बरामद की थी, तो भी उन आयुधों का अभिग्रहण किए जाने का कोई समुचित प्रयास किया गया प्रतीत नहीं होता है जिनके द्वारा हिंसक आक्रमण किया गया था । यह सही है कि आयुध (आयुधों) का अभिग्रहण करने में मात्र असफलता/उपेक्षा अभियोजन के पक्षकथन को त्यक्त करने के लिए एकमात्र कारण नहीं हो सकता है किंतु तथाकथित प्रत्यक्षदर्शी साक्षियों अर्थात् अभि. सा. 2 और अभि. सा. 3 के मौखिक परिसाक्ष्य, जिसे इस न्यायालय द्वारा पूर्णत: विश्वसनीय नहीं पाया गया है, को देखने-भर से इसका महत्व हो जाता है । गायब कड़ियों को अन्वेषण अधिकारी द्वारा प्रस्तुत किया जा सकता था जो, पुन:, साक्षी कठघरे में नहीं आया था । क्या किसी साक्षी की परीक्षा न कराने से प्रतिरक्षा पक्ष पर प्रतिकूल प्रभाव पड़ा है या नहीं, आवश्यक रूप से यह एक तथ्य का प्रश्न है और इसका निष्कर्ष प्रत्येक मामले के तथ्यों और परिस्थितियों पर विचार करते हुए निकाला जाना चाहिए । अन्वेषण अधिकारी एक साक्षी के रूप में क्यों अभिसाक्ष्य नहीं दे सका था, इसका कारण, जैसा कि अभि. सा. 4 द्वारा बताया गया था, यह है कि उसे प्रशिक्षण के लिए भेज दिया गया था । यह दर्शित नहीं किया गया था कि अन्वेषण अधिकारी विचारण न्यायालय में अपना अभिसाक्ष्य अभिलिखित कराने के लिए किसी भी परिस्थिति में अपने प्रशिक्षण पाठ्यक्रम (कोर्स) को नहीं छोड़ सकता था । यह उल्लेखनीय है कि न तो विचारण न्यायालय ने और न ही उच्च न्यायालय ने अन्वेषण अधिकारी की परीक्षा न कराने के मुद्दे पर विचार नहीं किया था । वर्तमान मामले के तथ्यों में, विशिष्ट रूप से

अभियोजन के पक्षकथन में स्पष्ट दरार होने और अभि. सा. 2 तथा अभि. सा. 3 का साक्ष्य पूर्णत: विश्वसनीय न होने के कारण यह न्यायालय प्रस्तुत मामले को ऐसा मामला अभिनिर्धारित करता है जहां अन्वेषण अधिकारी की परीक्षा कराना महत्वपूर्ण था चूंकि वह प्रत्याशित साक्ष्य प्रस्तुत कर सकता था । उसकी परीक्षा न कराने से अपीलार्थियों को दोषसिद्ध कराने के लिए अभियोजन पक्ष के प्रयास में एक तात्विक खामी पैदा होती है और तद्द्वारा अभियोजन के पक्षकथन में युक्तियुक्त संदेह उत्पन्न होता है ।

40. जहां तक प्राक्षेपिकी रिपोर्ट अभिप्राप्त न करने का संबंध है, निस्संदेह यह सही है कि इसकी अनिवार्यता प्रत्येक मामले की परिस्थितियों पर निर्भर करेगी । इस मामले में, चूंकि कोई आक्रामक आयुध बरामद नहीं किया गया था इसलिए कोई प्राक्षेपिकी रिपोर्ट मांगी और अभिप्राप्त नहीं की गई थी । यद्यपि श्री गिरि ने दलील दी कि मुन्ना लाल के पास एक लाइसेंसशुदा बंदूक थी, तो भी इस न्यायालय को इसके संबंध में अभिलेख पर किसी साक्ष्य का पता नहीं चल सका । तथापि, इसका कोई महत्व नहीं है । वर्तमान मामले के तथ्यों और परिस्थितियों के आधार पर, आक्रामक आयुधों को अभिगृहीत करने में असफलता/उपेक्षा के साथ-साथ तात्विक साक्षियों की परीक्षा न कराया जाना अभियोजन के वृत्तांत पर इतना प्रतिकूल प्रभाव डालने वाला है कि इससे अपीलार्थियों को संदेह का फायदा प्रदान करने के लिए अन्य परिस्थितियों के साथ-साथ एक महत्वपूर्ण परिस्थिति का गठन होता है ।

41. तीसरी, अभि. सा. 1 द्वारा दिया गया चिकित्सीय साक्ष्य, यदि इस पर पूर्णत: विश्वास किया जाए तो, इस न्यायालय को यह राय बनाने के लिए प्रेरित करता है कि अभि. सा. 4 का यह साक्ष्य कि उसने घटनास्थल से एक गोली बरामद करके उसे अभिगृहीत किया था, उतना ही संदेहास्पद है । अभि. सा. 1 के अनुसार, क्षति सं. 5 और 7 विपदग्रस्त पर चलाई गई गोलियों के प्रविष्टि स्थल थे जबकि क्षति सं. 6 और 8 ऐसी गोलियों के निकासी स्थल थे । गोलियां विपदग्रस्त के उदर और दाईं जांघ से पार हो गई थीं और तत्स्थानी निकासी स्थल थे,

सोचने वाली बात यह है कि फिर भी कैसे अभि. सा. 4 को "शव के कूल्हे पर पहुंची क्षति से बह रहे रक्त में" एक गोली पाई जा सकती थी । सुभिन्न निकासी स्थल होने के बावजूद यह पूर्णत: अनधिसंभाव्य है कि क्रम सं. 6 पर पहुंची क्षति के पश्चात् फिर भी अभि. सा. 4 द्वारा पहुंची क्षति से बह रहे रक्त में गोली पाई जा सकती थी, जो कि दो निकासी स्थलों में से एक था । किसी भी स्थिति में, ऐसी गोली को, यद्यपि इसे एक अभिग्रहण ज्ञापन के अधीन अभिगृहीत किया गया था, विचारण में प्रदर्शित किया गया प्रतीत नहीं होता है जिससे अभि. सा. 4 का वृत्तांत अस्वीकार्य हो जाता है ।

42. यद्यपि अन्वेषण प्रक्रिया में त्रुटियां होने मात्र से स्वत: दोषमुक्ति के लिए आधार का गठन नहीं हो सकता, तो भी न्यायालय की यह विधिक बाध्यता है कि वह प्रत्येक मामले में अन्वेषण अधिकारी द्वारा की गई चूक से असंबद्ध अभियोजन साक्ष्य की यह पता लगाने के लिए सावधानीपूर्वक परीक्षा करे कि क्या अभिलेख पर लाया गया साक्ष्य विश्वसनीय है और क्या ऐसी चूक से सत्यता का पता लगाने का उद्देश्य प्रभावित होता है । विधि की उपरोक्त स्थिति का भान होने और दांडिक न्याय प्रशासन में लोगों के आशा और विश्वास को टूटने से बचाने के लिए इस न्यायालय ने अभियोजन पक्ष द्वारा प्रस्तुत किए गए जीर्ण-शीर्ण साक्ष्य की परीक्षा की है और अन्वेषण अधिकारी की लापरवाही तथा उसके द्वारा किए गए सरसरी अन्वेषण के परिणामस्वरूप लोप या चूक को प्राथमिकता देने से प्रविरत रहा है । इस न्यायालय का प्रयास अभिलेख पर के साक्ष्य का विश्लेषण और अवधारण करके मामले की तह में पहुंचने और यह अभिनिश्चित करने का रहा है कि क्या अपीलार्थियों को सम्यक् रूप से दोषी पाया गया है तथा यह सुनिश्चित करना भी रहा है कि दोषी कानून के शिकंजे से बच न जाएं । अन्वेषण की प्रक्रिया में परेशान करने वाली बातों ने, जो अब तक ध्यान में आई हैं, अपीलार्थियों को संदेह का फायदा देने के लिए इस न्यायालय के मस्तिष्क को प्रभावित नहीं किया है अपितु विभिन्न तथ्यों और परिस्थितियों का उचित रूप से मूल्यांकन करने पर यह प्रकट हुआ है कि ऐसे कारण थे जिनके आधार पर अभि. सा. 2 अपीलार्थियों को मिथ्या रूप से फंसा

सकता था और यह भी कि अभि. सा. 3 एक पूर्णत: विश्वसनीय साक्षी नहीं था । अभियोजन के वृत्तांत में पर्याप्त अनिश्चितता है और यह प्रतीत होता है कि निचले न्यायालय अन्य विद्यमान परिस्थितियों के प्रभाव को विचार में लाए बिना कहीं न कहीं अभि. सा. 2 और अभि. सा. 3 के मौखिक परिसाक्ष्य से प्रभावित हुए हैं और तद्द्वारा हस्तक्षेप किया जाना आवश्यक है ।

निष्कर्ष

43. पूर्वोक्त कारणों से, इस न्यायालय की यह राय है कि इस आरोप को कि अपीलार्थियों ने नारायण की हत्या की थी, युक्तियुक्त संदेह के परे साबित किया गया नहीं कहा जा सकता, इसलिए संदेह के फायदे के हकदार थे और हैं । विचारण न्यायालय का उसके तारीख 29 जनवरी, 1986 के विनिश्चय में अंतर्विष्ट दोषसिद्धि और दंडादेश का निर्णय और आदेश असंधार्य होने के कारण अपास्त किया जाता है । परिणामत:, उच्च न्यायालय द्वारा दोषसिद्धि और दंडादेश को कायम रखते हुए तारीख 9 जुलाई, 2014 को पारित आक्षेपित निर्णय और आदेश को भी अपास्त किया जाता है । अपीलार्थियों को, जिन्हें अपीली निर्णय और आदेश किए जाने से लेकर सुधार गृह में रखा गया है, यदि वे किसी अन्य मामले में वांछित न हों तो तुरंत रिहा किया जाएगा ।

44. इस प्रकार, ये अपीलें खर्चे के किसी आदेश के बिना मंजूर की जाती हैं ।

अपीलें मंजूर की गईं ।

जस.

[2023] 1 उम. नि. प. 305

इंद्रजीत दास

बनाम

त्रिपुरा राज्य

[2015 की दांडिक अपील सं. 609]

28 फरवरी, 2023

न्यायमूर्ति बी. आर. गवई और न्यायमूर्ति विक्रम नाथ

दंड संहिता, 1860 (1860 का 45) – धारा 302/34 और 201 – हत्या – पारिस्थितिक साक्ष्य – दोषसिद्धि – मृतक का अपनी मोटरसाइकिल पर अपने दो मित्रों के साथ घर से जाना और फिर वापस न लौटना – दोनों मित्रों द्वारा पुलिस के समक्ष अभिकथित रूप से मृतक की हत्या करने के अपने अपराध की न्यायिकेतर संस्वीकृति किया जाना – अभियुक्तों में से एक किशोर अभियुक्त का किशोर न्याय अधिनियम के अधीन विचारण किया जाना और दूसरे अभियुक्त को विचारण न्यायालय द्वारा दोषसिद्ध किया जाना – उच्च न्यायालय द्वारा दोषसिद्धि की पुष्टि किया जाना – अपील – अभियुक्तों को किसी व्यक्ति द्वारा अपराध कारित करते हुए नहीं देखे जाने के कारण मामला पारिस्थितिक साक्ष्य पर आधारित होने, अभियोजन पक्ष द्वारा अपराध का कोई हेतु सिद्ध न करने, अभियुक्तों को अंतिम बार मृतक के साथ देखे जाने का वृत्तांत संदेहास्पद होने, शव की बरामदगी न होने और केवल एक अंग बरामद होने तथा वह अंग मृतक का होने की बात को सिद्ध करने के लिए कोई डीएनए परीक्षण न कराए जाने, अभियुक्तों की न्यायिकेतर संस्वीकृति का समर्थन करने के लिए कोई संपुष्टिकारी साक्ष्य न होने बल्कि अभियोजन पक्ष द्वारा प्रस्तुत किया साक्ष्य असंगत पाए जाने के कारण परिस्थितियों की श्रृंखला की मुख्य कड़िया साबित नहीं होने पर अभियुक्त-अपीलार्थी की दोषसिद्धि को कायम रखना अन्यायसंगत होगा और उसे संदेह के फायदे का हकदार होने के कारण दोषमुक्त करना न्यायोचित होगा ।

इस अपील के तथ्यों के अनुसार अभियोजन पक्ष की कहानी मंतु दास (अभि. सा. 40) नामक व्यक्ति द्वारा पुलिस को दूरभाष पर संदेश से दी गई इस सूचना से आरंभ हुई कि शांतिपुर के निकट कैलाशहर-कुमारघाट में बड़ी मात्रा में रक्त देखा गया है । पुलिस उक्त स्थान पर गई । घटनास्थल पर न केवल सड़क के किनारे रक्त देखा गया अपितु रक्त-रंजित वोजाली (बड़ा चाकू), एक तागा (धागा) और शीशे के कुछ टूटे हुए टुकड़े भी पाए जिन्हें मोटरसाइकिल के पीछे देखने वाले दर्पण के होना कहा जा सकता था । इन सभी वस्तुओं को अभिरक्षा में लिया गया, मुहरबंद किया गया और बरामदगी ज्ञापन तैयार किया गया । आगे अन्वेषण किया गया जिसके परिणामस्वरूप सड़क की तरफ जंगल में कुछ भारी वस्तु खींचे जाने के चिह्न दिखाई दिए । ये चिह्न नदी तक जा रहे थे और उसके पश्चात् लुप्त हो गए थे । अभी जब अन्वेषण चल ही रहा था, पुलिस थाने में अभियोजन साक्षी, अर्जुन दास से सूचना प्राप्त हुई कि उसका भतीजा कौशिक सरकार पूर्ववर्ती सायंकाल अर्थात् तारीख 19 जून, 2007 से गुम है । उक्त सूचना इस आशय की थी कि कौशिक सरकार पूर्ववर्ती सायंकाल में अपनी मोटरसाइकिल पर गया था किंतु वापस नहीं आया । अन्वेषण अधिकारी कौशिक सरकार के निवास पर आया जहां उसने उसकी माता का कथन अभिलिखित किया । उसने सूचित किया कि कौशिक सरकार दो मित्रों अर्थात् इंद्रजीत दास (अपीलार्थी) और एक 'के' नामक किशोर के साथ गया था । इन दोनों व्यक्तियों को पुलिस थाने बुलाया गया किंतु उन्होंने रिपोर्ट नहीं की । उसके पश्चात् अन्वेषण अधिकारी अपीलार्थी के मकान पर गया । अन्वेषण अधिकारी के अनुसार, दोनों अभियुक्तों ने उसके समक्ष संस्वीकृति की कि वे मृतक कौशिक सरकार की मोटरसाइकिल पर गए थे । रास्ते में उन्होंने शराब की एक बोतल खरीदी और शराब पी । उसके पश्चात्, वे कैलाशहर की ओर जाने लगे । वे शांतिपुर में शौच करने के लिए उतरे । कौशिक मोटरसाइकिल पर बैठा रहा । उस प्रक्रम पर, दोनों अभियुक्तों ने वोजालिस से कौशिक सरकार पर हमला किया । उन्होंने हेलमेट, बटुए और दो वोजालिस को निकटवर्ती जंगल में फेंक दिया और शव तथा मोटरसाइकिल को निकटवर्ती नदी के पास घसीटकर लाए और उन्हें नदी में फेंक दिया । फिर वे तैर कर नदी पार करके

अपीलार्थी के मकान पर गए और अपने रक्त-रंजित वस्त्रों को जला दिया । 'के' नामक किशोर अभियुक्त का किशोर न्याय (बालकों की देख-रेख और संरक्षण) अधिनियम, 2000 के उपबंधों के अधीन विचारण किया गया । वर्तमान अपीलार्थी का नियमित सेशन न्यायालय द्वारा विचारण किया गया । विचारण न्यायालय ने अपने निर्णय द्वारा यह निष्कर्ष अभिलिखित किया कि अभियोजन पक्ष ने युक्तियुक्त संदेह के परे अपीलार्थी की दोषिता को पूरी तरह से सिद्ध किया है और तद्नुसार विचारण न्यायालय द्वारा उसे दोषसिद्ध और दंडादिष्ट किया गया । अभियुक्त-अपीलार्थी द्वारा व्यथित होकर उच्च न्यायालय के समक्ष अपील फाइल की गई जिसे खारिज कर दिया गया । अभियुक्त द्वारा उच्च न्यायालय के निर्णय से व्यथित होकर उच्चतम न्यायालय में अपील फाइल की गई । उच्चतम न्यायालय द्वारा अपील मंजूर करते हुए,

अभिनिर्धारित – यह मामला पारिस्थितिक साक्ष्य का है क्योंकि किसी ने भी अपराध कारित करते हुए नहीं देखा था । पारिस्थितिक साक्ष्य के मामले में विधि सुस्थिर है । इसके अनुसार, परिस्थितियां निश्चायक प्रवृत्ति की होनी चाहिएं जो अचूक अभियुक्त की दोषिता को इंगित करती हों; परिस्थितियों पर संचयी रूप से विचार करने पर इतनी पूर्ण श्रृंखला बननी चाहिए कि केवल यह निष्कर्ष निकले कि सभी मानवीय अधिसंभाव्यता में अपराध अभियुक्त द्वारा किया गया था और उनसे अभियुक्त की दोषिता के सिवाय और उसकी निर्दोषिता के असंगत निष्कर्ष निकालने के लिए किसी कल्पना का स्पष्टीकरण न दिया जा सके । परिस्थितियों की श्रृंखला में मूलभूत कड़ियों की शुरुआत हेतु के साथ होती है, फिर अंतिम बार देखे जाने की कहानी, बरामदगी, चिकित्सीय साक्ष्य, विशेषज्ञों की राय, यदि कोई हो, और कोई अन्य अतिरिक्त कड़ी जो परिस्थितियों की श्रृंखला का भाग बन सके, के साथ आगे बढ़ती है । सर्वप्रथम, यह न्यायालय यह अभिलिखित कर सकता है कि अभियोजन पक्ष किसी प्रकार के ऐसे किसी हेतु के साथ आगे नहीं आया है कि क्यों अपीलार्थी 'के' नामक किशोर सह-अभियुक्त के साथ उक्त अपराध कारित करेगा । यहां तक कि विचारण न्यायालय और

उच्च न्यायालय भी किसी साक्ष्य के अभाव में अपराध कारित करने के हेतु पर कोई निष्कर्ष अभिलिखित करने में समर्थ नहीं रहे थे । उच्च न्यायालय ने हेतु के पहलू पर केवल पैरा सं. 20 में विचार किया है, जिसके परिशीलन से यह प्रतिबिम्बित नहीं होता है कि कोई हेतु दिखाई दिया था किंतु 'के' नामक किशोर अपराध का साजिशकर्ता था और उसने हमला करने वाला आयुध खरीदा था । इससे कहीं भी किसी हेतु का गठन नहीं होता है । अगली बात, वर्तमान मामले में शव बरामद नहीं किया गया था । केवल एक अंग बरामद किया गया था किंतु यह सिद्ध करने के लिए कोई डीएनए जांच नहीं की गई थी कि वह अंग मृतक कौशिक सरकार का था । इसलिए अभियोजन का संपूर्ण पक्षकथन इस उपधारणा पर अग्रसर हुआ है कि कौशिक सरकार की मृत्यु हुई है । अपराध-सार के सिद्धांत पर दोनों प्रकार के निर्णय हैं जिनमें कहा गया है कि शव की बरामदगी के अभाव में दोषसिद्धि अभिलिखित की जा सकती है और दूसरा मत है कि शव की बरामदगी के अभाव में कोई दोषसिद्धि अभिलिखित नहीं की जा सकती । पश्चात्वर्ती दृष्टिकोण का कारण यह है कि यदि बाद में शव जीवित प्रकट हो जाए, तो किसी व्यक्ति को उसके द्वारा कोई अपराध कारित किए बिना दोषसिद्धि और दंडादेश दिया जा सकता है और कैद में रहना पड़ सकता है । यह न्यायालय इस बिंदु पर विधि के संबंध में विचार नहीं कर रहा है । तथापि, इस न्यायालय ने केवल इस तथ्य को अभिलिखित किया है और परिस्थितियों की श्रृंखला की अन्य कड़ियों पर विचार करते समय इसकी कुछ सुसंगतता या सरोकार हो सकता है । न्यायालय अब अंतिम बार देखे जाने की कहानी पर विचार करेगा । अर्जुन दास (अभि. सा. 7) द्वारा सवेरे पुलिस थाने में दी गई प्रथम इत्तिला में कोई उल्लेख नहीं है कि कौशिक अपने मकान से अपीलार्थी और 'के' नामक किशोर के साथ गया था । अर्जुन दास (अभि. सा. 7) ने केवल यह कहा था कि उसका भतीजा कौशिक सायंकाल में मोटरसाइकिल पर गया था और वापस नहीं आया । यद्यपि विचारण न्यायालय के समक्ष अपने कथन में उसने कहा था कि कौशिक अपीलार्थी और 'के' नामक किशोर के साथ गया था किंतु जब दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 161 के अधीन उसके कथन और पुलिस अभिलेख में की गई प्रविष्टि के बारे में भी उसका सामना कराया गया, तो उसने

इसका कोई स्पष्टीकरण नहीं दिया । अभि. सा. 25 अंतिम बार देखे जाने की मुख्य साक्षी है । वह कौशिक की माता है । उसने कथन किया था कि जब वह तारीख 19 जून, 2007 को लगभग 5.00 बजे अपराह्न में कार्यालय से वापस आई, तो उसने कौशिक को अपने पिता की मोटरसाइकिल पर बाहर जाते हुए देखा । जब उसने उससे पूछताछ की, तो उसने कहा कि वह अपीलार्थी और 'के' नामक किशोर के साथ फटिकराय जा रहा है । उसने यह भी कथन किया था कि वह दरवाजे तक अपने पुत्र के पीछे-पीछे गई और अपीलार्थी और 'के' नामक किशोर को दरवाजे पर खड़े देखा । इस साक्षी ने अपनी प्रतिपरीक्षा में, जब उसका दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 161 के अधीन उसके कथन से सामना कराया गया, यह कहा कि इसमें ऐसा कोई कथन नहीं है, यद्यपि उसके अनुसार, उसने अन्वेषण अधिकारी को यह बताया था कि उसने अपीलार्थी और 'के' नामक किशोर को अपने दरवाजे पर देखा था । दोषसिद्धि अभियोजन साक्षियों के साक्ष्य के अतिरिक्त अपीलार्थी तथा 'के' नामक किशोर की न्यायिकेतर संस्वीकृति पर आधारित है । दोनों संस्वीकृतियों के अनुसार, अपीलार्थी तथा 'के' नामक किशोर फटिकराय बाजार के निकट एक पुलिया पर प्रतीक्षा कर रहे थे जहां कौशिक सरकार लगभग 5.30 बजे अपनी मोटरसाइकिल पर आया । वहां से वे सभी तीनों मोटरसाइकिल पर गए । तथापि, सर्किट हाउस के निकट उसने मोटरसाइकिल रोकी और यह पड़ताल करनी चाही कि क्या उसकी माता ऑफिस से घर आ गई है या नहीं । उन दोनों ने सर्किट हाउस के निकट प्रतीक्षा की और कौशिक सरकार घर पर पड़ताल करने के पश्चात् पुन: वापस सर्किट हाउस आया जहां से वे कुमारघाट गए । यदि न्यायिकेतर संस्वीकृति को स्वीकार किया जाए, तो माता (अभि. सा. 25) द्वारा दी गई अंतिम बार देखे जाने की कहानी पर कोई विश्वास करना कठिन हो जाता है । तथापि, यदि हम न्यायिकेतर संस्वीकृति की अनदेखी भी करें, तो भी अभि. सा. 25 का कथन केवल अंतिम बार देखे जाने की कहानी विकसित करने के लिए एक सुधार किया गया प्रतीत होता है क्योंकि न तो अर्जुन दास (अभि. सा. 7) की पुलिस थाने में अभिलिखित की गई टेलीफोन कॉल में सायंकाल में कौशिक के अपीलार्थी और 'के' नामक किशोर के साथ जाने की बात का उल्लेख किया गया है और न ही दंड

प्रक्रिया संहिता की धारा 161 के अधीन अभि. सा. 7 और अभि. सा. 25 के कथनों में कौशिक का अपने निवास से अपीलार्थी और 'के' नामक किशोर के साथ जाते हुए देखने का वर्णन है । अंतिम बार देखे जाने की कहानी के समर्थन में दो अन्य साक्षियों की भी परीक्षा की गई थी किंतु उनसे भी कोई विश्वास प्रेरित नहीं होता है । न्यायिकेतर संस्वीकृति एक कमजोर साक्ष्य होता है और विशेष रूप से जब विचारण के दौरान इससे मुकरा जाए । इसकी संपुष्टि के लिए प्रबल साक्ष्य की आवश्यकता होती है और यह भी साबित किया जाना चाहिए कि यह पूर्णत: स्वैच्छिक और सत्य थी । ऊपर की गई चर्चा को ध्यान में रखते हुए, यह न्यायालय न्यायिकेतर संस्वीकृति का समर्थन करने के लिए कोई संपुष्टिकारी साक्ष्य नहीं पाता है, बल्कि अभियोजन पक्ष द्वारा प्रस्तुत किया गया साक्ष्य इससे असंगत है । ऊपर की गई चर्चा को ध्यान में रखते हुए, इस न्यायालय का यह निष्कर्ष है कि परिस्थितियों की श्रृंखला की मुख्य कड़ियों को अभियोजन साक्ष्य द्वारा साबित नहीं किया गया है और इसलिए अपीलार्थी की दोषसिद्धि को कायम रखना अन्यायसंगत होगा । अपीलार्थी संदेह के फायदे का हकदार है । (पैरा 10, 12, 13 14, 16, 17, 18, 19, 20 और 21)

निर्दिष्ट निर्णय

		पैरा
[2020]	ए. आई. आर. 2020 एस. सी. 180 : **शैलेन्द्र राजदेव पासवान और अन्य** बनाम **गुजरात राज्य आदि** ;	10
[2018]	(2018) 1 एस. सी. सी. 296 : **कूना** उर्फ **संजय बेहरा** बनाम **ओडिसा राज्य** ;	15
[2004]	(2004) 12 एस; सी. सी. 521 : **रंगानायकी** बनाम **राज्य मार्फत पुलिस निरीक्षक** ;	15
[1985]	[1985] 1 उम. नि. प. 995 = (1984) 4 एस. सी. सी. 116 : **शरद बिरधीचंद सारदा** बनाम **महाराष्ट्र राज्य** ।	10

अपीली (दांडिक) अधिकारिता : 2015 की दांडिक अपील सं. 609.

2011 की दांडिक अपील सं. 22 में त्रिपुरा उच्च न्यायालय, अगरतला द्वारा तारीख 9 अक्तूबर, 2013 को पारित निर्णय और आदेश के विरुद्ध अपील ।

अपीलार्थी की ओर से सुश्री मधुमिता भट्टाचार्जी, उर्मिला कर पुरकायस्थ, श्रीजा चौधरी, पियाली पाल और आरुषि मिश्रा

प्रत्यर्थी की ओर से सर्वश्री शुवोदीप राय, कबीर शंकर बोस, दीपयान दत्ता और साई शशांक

न्यायालय का निर्णय न्यायमूर्ति विक्रम नाथ ने दिया ।

न्या. नाथ – अपीलार्थी ने त्रिपुरा उच्च न्यायालय के तारीख 9 अक्तूबर, 2013 के उस निर्णय और आदेश की शुद्धता को चुनौती दी है, जिसके द्वारा अपीलार्थी की अपील को खारिज करते हुए विचारण न्यायालय द्वारा अभिलिखित भारतीय दंड संहिता की धारा 302/34 और 201 के अधीन उसकी दोषसिद्धि की पुष्टि की गई थी, जिसके द्वारा उसे आजीवन कारावास और सहबद्ध दंडादेश दिए गए थे और जिन्हें समवर्ती रूप से चलने का आदेश दिया गया था ।

2. अभियोजन पक्ष की कहानी मंतु दास (अभि. सा. 40) नामक व्यक्ति द्वारा पुलिस थाना, कैलाशहर को दूरभाष पर संदेश से दी गई इस सूचना से आरंभ होती है कि शांतिपुर के निकट कैलाशहर-कुमारघाट में बड़ी मात्रा में रक्त देखा गया है । उक्त दूरभाष पर दिया गया संदेश बिंधु भूषण दास (अभि. सा. 1) को प्राप्त हुआ जिसके पश्चात् वह साधारण डायरी रजिस्टर में सम्यक् प्रविष्टि करने के पश्चात् उप निरीक्षक काजल रुद्रपाल के साथ उक्त स्थान के लिए रवाना हुआ ।

3. अभि. सा. 1 ने घटनास्थल पर न केवल सड़क के किनारे रक्त देखा अपितु रक्त-रंजित वोजाली (बड़ा चाकू), एक तागा (धागा) और शीशे के कुछ टूटे हुए टुकड़े भी पाए जिन्हें मोटरसाइकिल के पीछे देखने वाले दर्पण के होना कहा जा सकता था । इन सभी वस्तुओं को अभिरक्षा

में लिया गया, मुहरबंद किया गया और बरामदगी ज्ञापन तैयार किया गया । आगे अन्वेषण किया गया जिसके परिणामस्वरूप सड़क की तरफ जंगल में कुछ भारी वस्तु खींचे जाने के चिह्न दिखाई दिए । ये चिह्न मनु नदी तक जा रहे थे और उसके पश्चात् लुप्त हो गए थे ।

4. अभी जब अन्वेषण चल ही रहा था, पुलिस थाने में अर्जुन दास (अभि. सा. 7) से सूचना प्राप्त हुई कि उसका भतीजा कौशिक सरकार पूर्ववर्ती सायंकाल अर्थात् तारीख 19 जून, 2007 से गुम है । उक्त सूचना इस आशय की थी कि कौशिक सरकार पूर्ववर्ती सायंकाल में अपनी मोटरसाइकिल पर गया था किंतु वापस नहीं आया । अन्वेषण अधिकारी मोहनपुर गांव में कौशिक सरकार के निवास पर आया जहां उसने उसकी माता (अभि. सा. 25) का कथन अभिलिखित किया । उसने सूचित किया कि कौशिक सरकार दो मित्रों अर्थात् इंद्रजीत दास (अपीलार्थी) और एक 'के' नामक किशोर के साथ गया था । इन दोनों व्यक्तियों को पुलिस थाने बुलाया गया किंतु उन्होंने रिपोर्ट नहीं की । उसके पश्चात् अन्वेषण अधिकारी अपीलार्थी के मकान पर गया ।

5. अन्वेषण अधिकारी के अनुसार, दोनों अभियुक्तों ने उसके समक्ष संस्वीकृति की कि वे मृतक कौशिक सरकार की मोटरसाइकिल पर फटिकराय और कंचनबाड़ी क्षेत्र में गए थे । रास्ते में उन्होंने शराब की एक बोतल खरीदी और बाबुल दास के साथ शराब पी । उसके पश्चात्, वे कैलाशहर की ओर जाने लगे । वे शांतिपुर में शौच करने के लिए उतरे । कौशिक मोटरसाइकिल पर बैठा रहा । उस प्रक्रम पर, दोनों अभियुक्तों ने वोजालिस से कौशिक सरकार पर हमला किया । उन्होंने हेलमेट, बटुए और दो वोजालिस को निकटवर्ती जंगल में फेंक दिया और शव तथा मोटरसाइकिल को निकटवर्ती नदी के पास घसीटकर लाए और उन्हें नदी में फेंक दिया । फिर वे तैर कर नदी पार करके अपीलार्थी के मकान पर गए और अपने रक्त-रंजित वस्त्रों को जला दिया ।

6. 'के' नामक किशोर अभियुक्त का किशोर न्याय (बालकों की देख-रेख और संरक्षण) अधिनियम, 2000 के उपबंधों के अधीन विचारण किया गया । वर्तमान अपीलार्थी का नियमित सेशन न्यायालय द्वारा विचारण किया गया । आरोप विरचित करने और उसे पढ़कर सुनाने के

उपरांत उसने दोषी न होने का अभिवाक् किया और विचारण किए जाने का दावा किया ।

7. अभियोजन पक्ष ने कुल मिलाकर 40 साक्षियों की परीक्षा की और दस्तावेजी साक्ष्य भी प्रस्तुत किया जिसे सम्यक् रूप से साबित और प्रदर्शित किया गया । विचारण न्यायालय ने तारीख 19 अप्रैल, 2011 के निर्णय द्वारा यह निष्कर्ष अभिलिखित किया कि अभियोजन पक्ष ने युक्तियुक्त संदेह के परे अपीलार्थी की दोषिता को पूरी तरह से सिद्ध किया है और तद्नुसार विचारण न्यायालय ने उसे अपराधों के लिए दोषसिद्ध किया और उसे पहले उल्लिखित अनुसार दंडादिष्ट किया ।

8. अपीलार्थी ने उच्च न्यायालय के समक्ष अपील फाइल की जिसे आक्षेपित निर्णय द्वारा खारिज कर दिया गया क्योंकि उच्च न्यायालय का भी यह मत था कि अभियोजन पक्ष आरोपों को युक्तियुक्त संदेह के परे साबित करने में सफल रहा है ।

9. हमने पक्षकारों की ओर से विद्वान् काउंसेलों को सुना और अभिलेख पर के तात्विक साक्ष्य का परिशीलन किया ।

10. वर्तमान मामला पारिस्थितिक साक्ष्य का है क्योंकि किसी ने भी अपराध कारित करते हुए नहीं देखा था । पारिस्थितिक साक्ष्य के मामले में विधि सुस्थिर है । **शरद बिरधीचंद सारदा** बनाम **महाराष्ट्र राज्य**[1] वाला मुख्य मामला है । इसके अनुसार, परिस्थितियां निश्चायक प्रवृत्ति की होनी चाहिएं जो अचूक अभियुक्त की दोषिता को इंगित करती हों; परिस्थितियों पर संचयी रूप से विचार करने पर इतनी पूर्ण श्रृंखला बननी चाहिए कि केवल यह निष्कर्ष निकले कि सभी मानवीय अधिसंभाव्यता में अपराध अभियुक्त द्वारा किया गया था और उनसे अभियुक्त की दोषिता के सिवाय और उसकी निर्दोषिता के असंगत निष्कर्ष निकालने के लिए किसी कल्पना का स्पष्टीकरण न दिया जा सके । **शरद बिरधीचंद सारदा** (उपर्युक्त) वाले मामले में उपवर्णित उक्त सिद्धांत का इस न्यायालय द्वारा सतत रूप से अनुसरण किया गया है ।

---

[1] [1985] 1 उम. नि. प. 995 = (1984) 4 एस. सी. सी. 116.

शैलेन्द्र राजदेव पासवान और अन्य बनाम **गुजरात राज्य आदि**[1] वाले हाल ही के मामले में इस न्यायालय ने यह मत व्यक्त किया कि पारिस्थितिक साक्ष्य के मामले में विधि में दोहरी अपेक्षा की अभिधारणा की गई है । पहली, अभियुक्त की दोषिता को सिद्ध करने के लिए आवश्यक परिस्थितियों की श्रृंखला में प्रत्येक कड़ी को अभियोजन पक्ष द्वारा युक्तियुक्त संदेह के परे साबित करना होगा और दूसरी, सभी परिस्थितियां केवल अभियुक्त की दोषिता के संगत होनी चाहिएं जो केवल उसकी दोषिता को इंगित करती हों । हमें अन्य निर्णयों को निर्दिष्ट करके इस निर्णय को बोझिल बनाने की आवश्यकता नहीं है क्योंकि उपरोक्त सिद्धांतों का सतत रूप से अनुसरण किया गया है और इस न्यायालय द्वारा बारंबार अनुमोदन किया गया है ।

11. उपरोक्त स्थिर विधिक प्रतिपादनाओं की पृष्ठभूमि में हम वर्तमान मामले के तथ्यों, परिस्थितियों और साक्ष्य पर विचार करने तथा यह पता लगाने के लिए अग्रसर होंगे कि क्या अभियोजन पक्ष द्वारा परिस्थितियों की श्रृंखला की प्रत्येक कड़ी को पूरी तरह से सिद्ध किया गया है या नहीं ।

12. परिस्थितियों की श्रृंखला में मूलभूत कड़ियों की शुरुआत हेतु के साथ होती है, फिर अंतिम बार देखे जाने की कहानी, बरामदगी, चिकित्सीय साक्ष्य, विशेषज्ञों की राय, यदि कोई हो, और कोई अन्य अतिरिक्त कड़ी जो परिस्थितियों की श्रृंखला का भाग बन सके, के साथ आगे बढ़ती है ।

13. सर्वप्रथम, हम यह अभिलिखित कर सकते हैं कि अभियोजन पक्ष किसी प्रकार के ऐसे किसी हेतु के साथ आगे नहीं आया है कि क्यों अपीलार्थी 'के' नामक किशोर सह-अभियुक्त के साथ उक्त अपराध कारित करेगा । यहां तक कि विचारण न्यायालय और उच्च न्यायालय भी किसी साक्ष्य के अभाव में अपराध कारित करने के हेतु पर कोई निष्कर्ष अभिलिखित करने में समर्थ नहीं रहे थे ।

---

[1] ए. आई. आर. 2020 एस. सी. 180.

14. उच्च न्यायालय ने हेतु के पहलू पर केवल पैरा सं. 20 में विचार किया है, जिसके परिशीलन से यह प्रतिबिम्बित नहीं होता है कि कोई हेतु दिखाई दिया था किंतु 'के' नामक किशोर अपराध का साजिशकर्ता था और उसने हमला करने वाला आयुध खरीदा था । इससे कहीं भी किसी हेतु का गठन नहीं होता है ।

15. पारिस्थितिक साक्ष्य के मामले में हेतु की महत्वपूर्ण भूमिका होती है । प्रत्यक्ष साक्ष्य के मामले में भी हेतु की महत्वपूर्ण भूमिका हो सकती है किंतु पारिस्थितिक साक्ष्य के मामले में प्रत्यक्ष साक्ष्य के मामले की अपेक्षा अधिक महत्व होता है । यह परिस्थितियों की श्रृंखला में एक महत्वपूर्ण कड़ी होती है । पारिस्थितिक साक्ष्य के मामले में हेतु के महत्व पर निम्नलिखित दो निर्णयों के प्रति निर्देश किया जा सकता है –

1. **कूना** उर्फ **संजय बेहरा** बनाम **उड़ीसा राज्य**[1] ; और

2 **रंगानायकी** बनाम **राज्य मार्फत पुलिस निरीक्षक**[2] ।

16. अगली बात, वर्तमान मामले में शव बरामद नहीं किया गया था । केवल एक अंग बरामद किया गया था किंतु यह सिद्ध करने के लिए कोई डीएनए जांच नहीं की गई थी कि वह अंग मृतक कौशिक सरकार का था । इसलिए अभियोजन का संपूर्ण पक्षकथन इस उपधारणा पर अग्रसर हुआ है कि कौशिक सरकार की मृत्यु हुई है । अपराध-सार के सिद्धांत पर दोनों प्रकार के निर्णय हैं जिनमें कहा गया है कि शव की बरामदगी के अभाव में दोषसिद्धि अभिलिखित की जा सकती है और दूसरा मत है कि शव की बरामदगी के अभाव में कोई दोषसिद्धि अभिलिखित नहीं की जा सकती । पश्चात्वर्ती दृष्टिकोण का कारण यह है कि यदि बाद में शव जीवित प्रकट हो जाए, तो किसी व्यक्ति को उसके द्वारा कोई अपराध कारित किए बिना दोषसिद्धि और दंडादेश दिया जा सकता है और कैद में रहना पड़ सकता है । हम इस बिंदु पर विधि के संबंध में विचार नहीं कर रहे हैं । तथापि, हमने केवल इस तथ्य को

---

[1] (2018) 1 एस. सी. सी. 296.

[2] (2004) 12 एस. सी. सी. 521.

अभिलिखित किया है और परिस्थितियों की श्रृंखला की अन्य कड़ियों पर विचार करते समय इसकी कुछ सुसंगतता या सरोकार हो सकता है ।

17. हम अब अंतिम बार देखे जाने की कहानी पर विचार करेंगे । अर्जुन दास (अभि. सा. 7) द्वारा सवेरे पुलिस थाने में दी गई प्रथम इत्तिला में कोई उल्लेख नहीं है कि कौशिक अपने मकान से अपीलार्थी और 'के' नामक किशोर के साथ गया था । अर्जुन दास (अभि. सा. 7) ने केवल यह कहा था कि उसका भतीजा कौशिक सायंकाल में मोटरसाइकिल पर गया था और वापस नहीं आया । यद्यपि विचारण न्यायालय के समक्ष अपने कथन में उसने कहा था कि कौशिक अपीलार्थी और 'के' नामक किशोर के साथ गया था किंतु जब दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 161 के अधीन उसके कथन और पुलिस अभिलेख में की गई प्रविष्टि के बारे में भी उसका सामना कराया गया, तो उसने इसका कोई स्पष्टीकरण नहीं दिया ।

18. अभि. सा. 25 अंतिम बार देखे जाने की मुख्य साक्षी है । वह कौशिक की माता है । उसने कथन किया था कि जब वह तारीख 19 जून, 2007 को लगभग 5.00 बजे अपराह्न में कार्यालय से वापस आई, तो उसने कौशिक को अपने पिता की मोटरसाइकिल पर बाहर जाते हुए देखा । जब उसने उससे पूछताछ की, तो उसने कहा कि वह अपीलार्थी और 'के' नामक किशोर के साथ फटिकराय जा रहा है । उसने यह भी कथन किया था कि वह दरवाजे तक अपने पुत्र के पीछे-पीछे गई और अपीलार्थी और 'के' नामक किशोर को दरवाजे पर खड़े देखा । इस साक्षी ने अपनी प्रतिपरीक्षा में, जब उसका दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 161 के अधीन उसके कथन से सामना कराया गया, यह कहा कि इसमें ऐसा कोई कथन नहीं है, यद्यपि उसके अनुसार, उसने अन्वेषण अधिकारी को यह बताया था कि उसने अपीलार्थी और 'के' नामक किशोर को अपने दरवाजे पर देखा था ।

19. दोषसिद्धि अभियोजन साक्षियों के साक्ष्य के अतिरिक्त अपीलार्थी तथा 'के' नामक किशोर की न्यायिकेतर संस्वीकृति पर आधारित है । दोनों संस्वीकृतियों के अनुसार, अपीलार्थी तथा 'के' नामक किशोर फटिकराय बाजार के निकट एक पुलिया पर प्रतीक्षा कर रहे थे

जहां कौशिक सरकार लगभग 5.30 बजे अपनी मोटरसाइकिल पर आया । वहां से वे सभी तीनों मोटरसाइकिल पर गए । तथापि, सर्किट हाउस के निकट उसने मोटरसाइकिल रोकी और यह पड़ताल करनी चाही कि क्या उसकी माता ऑफिस से घर आ गई है या नहीं । उन दोनों ने सर्किट हाउस के निकट प्रतीक्षा की और कौशिक सरकार घर पर पड़ताल करने के पश्चात् पुन: वापस सर्किट हाउस आया जहां से वे कुमारघाट गए । यदि न्यायिकेतर संस्वीकृति को स्वीकार किया जाए, तो माता (अभि. सा. 25) द्वारा दी गई अंतिम बार देखे जाने की कहानी पर कोई विश्वास करना कठिन हो जाता है । तथापि, यदि हम न्यायिकेतर संस्वीकृति की अनदेखी भी करें, तो भी अभि. सा. 25 का कथन केवल अंतिम बार देखे जाने की कहानी विकसित करने के लिए एक सुधार किया गया प्रतीत होता है । क्योंकि न तो अर्जुन दास (अभि. सा. 7) की पुलिस थाने में अभिलिखित की गई टेलीफोन कॉल में सायंकाल में कौशिक के अपीलार्थी और 'के' नामक किशोर के साथ जाने की बात का उल्लेख किया गया है और न ही दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 161 के अधीन अभि. सा. 7 और अभि. सा. 25 के कथनों में कौशिक का अपने निवास से अपीलार्थी और 'के' नामक किशोर के साथ जाते हुए देखने का वर्णन है । अंतिम बार देखे जाने की कहानी के समर्थन में दो अन्य साक्षियों की भी परीक्षा की गई थी किंतु उनसे भी कोई विश्वास प्रेरित नहीं होता है ।

20. जहां तक बरामदगियों का संबंध है और वे भी परिस्थितियों की श्रृंखला में एक महत्वपूर्ण कड़ी है और ये बरामदगियां एक खुले स्थान से की गई थीं । जहां रक्त के धब्बे देखे गए थे और 'वोजाली' बरामद की गई थी उस स्थान से नदी के किनारे तक कुछ भारी वस्तु को घसीटे जाने और फिर जहां घसीटे जाने के चिह्न समाप्त हो गए थे, वहां से ठीक नीचे नदी की सतह से मोटरसाइकिल का बरामद होना एक पूर्णत: प्रसामान्य और प्रत्याशित बात है । यह ऐसा स्थान नहीं था जो अपीलार्थी की अनन्य जानकारी में हो सकता था ।

21. न्यायिकेतर संस्वीकृति एक कमजोर साक्ष्य होता है और विशेष रूप से जब विचारण के दौरान इससे मुकरा जाए । इसकी संपुष्टि के

लिए प्रबल साक्ष्य की आवश्यकता होती है और यह भी साबित किया जाना चाहिए कि यह पूर्णत: स्वैच्छिक और सत्य थी । ऊपर की गई चर्चा को ध्यान में रखते हुए, हम न्यायिकेतर संस्वीकृति का समर्थन करने के लिए कोई संपुष्टिकारी साक्ष्य नहीं पाते हैं, बल्कि अभियोजन पक्ष द्वारा प्रस्तुत किया गया साक्ष्य इससे असंगत है ।

22. ऊपर की गई चर्चा को ध्यान में रखते हुए, हमारा यह निष्कर्ष है कि परिस्थितियों की श्रृंखला की मुख्य कड़ियों को अभियोजन साक्ष्य द्वारा साबित नहीं किया गया है और इसलिए अपीलार्थी की दोषसिद्धि को कायम रखना अन्यायसंगत होगा । अपीलार्थी संदेह के फायदे का हकदार है । तद्नुसार, यह अपील मंजूर की जाती है और अपीलार्थी को सभी आरोपों से दोषमुक्त किया जाता है । अपीलार्थी न्यायिक अभिरक्षा में है । तथापि, उसे राज्य द्वारा पैरोल प्रदान किया गया था । उसे तुरंत छोड़ दिया जाएगा ।

23. लंबित आवेदनों, यदि कोई हैं, का निपटारा हो जाता है ।

अपील मंजूर की गई ।

जस.

संसद् के अधिनियम

नि:शक्त व्यक्ति (समान अवसर, अधिकार संरक्षण और पूर्ण भागीदारी) अधिनियम, 1995

(1996 का अधिनियम संख्यांक 1)

[1 जनवरी, 1996]

एशियाई और प्रशांत क्षेत्र में नि:शक्त व्यक्तियों की पूर्ण भागीदारी और समानता संबंधी उद्घोषणा को प्रभावी बनाने के लिए अधिनियम

एशियाई और प्रशांत क्षेत्र संबंधी आर्थिक और सामाजिक आयोग द्वारा नि:शक्त व्यक्तियों की एशियाई और प्रशांत क्षेत्र दशाब्दी 1993-2002 को आरंभ करने के लिए 1 दिसंबर से 5 दिसंबर, 1992 को पेईचिंग में बुलाए गए अधिवेशन में एशियाई और प्रशांत क्षेत्र में नि:शक्त व्यक्तियों की पूर्ण भागीदारी और समानता संबंधी उद्घोषणा को अंगीकार किया गया ;

और भारत उक्त उद्घोषणा का एक हस्ताक्षरकर्ता है ;

और पूर्वोक्त उद्घोषणा को कार्यान्वित करना आवश्यक समझा जाता है ;

भारत गणराज्य के छियालीसवें वर्ष में संसद् द्वारा निम्नलिखित रूप में यह अधिनियमित हो :–

अध्याय 1

प्रारम्भिक

1. **संक्षिप्त नाम, विस्तार और प्रारंभ** – (1) इस अधिनियम का संक्षिप्त नाम नि:शक्त व्यक्ति (समान अवसर, अधिकार संरक्षण और पूर्ण भागीदारी) अधिनियम, 1995 है ।

(2) इसका विस्तार जम्मू-कश्मीर राज्य के सिवाय संपूर्ण भारत पर है ।

(3) यह उस तारीख को प्रवृत्त होगा जो केन्द्रीय सरकार, अधिसूचना द्वारा, नियत करे ।

2. **परिभाषाएं** – इस अधिनियम में, जब तक कि संदर्भ से अन्यथा अपेक्षित न हो, –

(क) "समुचित सरकार" से अभिप्रेत है, –

(i) केन्द्रीय सरकार या उस सरकार द्वारा पूर्णतः या पर्याप्त रूप से वित्तपोषित किसी स्थापन या छावनी अधिनियम, 1924 (1924 का 2) के अधीन गठित किसी छावनी बोर्ड के संबंध में, केन्द्रीय सरकार ;

(ii) किसी राज्य सरकार या उस सरकार द्वारा पूर्णतः या पर्याप्त रूप से वित्तपोषित किसी स्थापन, या छावनी बोर्ड से भिन्न किसी स्थानीय प्राधिकारी के संबंध में, राज्य सरकार ;

(iii) केन्द्रीय समन्वय समिति और केन्द्रीय कार्यपालिका समिति की बाबत, केन्द्रीय सरकार ; और

(iv) राज्य समन्वय समिति और राज्य कार्यपालिका समिति की बाबत, राज्य सरकार ;

(ख) "अंधता" उस अवस्था को निर्दिष्ट करती है जहां कोई व्यक्ति निम्नलिखित अवस्था में से किसी से ग्रसित है, अर्थात् :–

(i) दृष्टि का पूर्ण अभाव ; या

(ii) सुधारक लेंसों के साथ बेहतर नेत्र में दृष्टि की तीक्ष्णता जो 6/60 या 20/200 (स्नेलन) से अधिक न हो ; या

(iii) दृष्टि क्षेत्र की सीमा जो 20 डिग्री कोण वाली या उससे बदतर है ;

(ग) "केन्द्रीय समन्वय समिति" से धारा 3 की उपधारा (1) के अधीन गठित केन्द्रीय समन्वय समिति अभिप्रेत है ;

(घ) "केन्द्रीय कार्यपालिका समिति" से धारा 9 की उपधारा (1) के अधीन गठित केन्द्रीय कार्यपालिका समिति अभिप्रेत है ;

(ङ) "प्रमस्तिष्क घात" से किसी व्यक्ति की अविकासशील अवस्थाओं का समूह अभिप्रेत है, जो विकास की प्रसवपूर्व, प्रसवकालीन या बाल अवधि में होने वाला दिमागी आघात या क्षति से पारिणामिक अप्रसामान्य प्रेरक नियंत्रण स्थिति द्वारा अभिलक्षित होता है ;

(च) "मुख्य आयुक्त" से धारा 57 की उपधारा (1) के अधीन नियुक्त मुख्य आयुक्त अभिप्रेत है ;

(छ) "आयुक्त" से धारा 60 की उपधारा (1) के अधीन नियुक्त आयुक्त अभिप्रेत है ;

(ज) "सक्षम प्राधिकारी" से धारा 50 के अधीन नियुक्त प्राधिकारी अभिप्रेत है ;

(झ) "नि:शक्तता" से अभिप्रेत है, –

(i) अन्धता ;
(ii) कम दृष्टि ;
(iii) कुष्ठ रोग मुक्त ;
(iv) श्रवण शक्ति का ह्रास ;
(v) चलन नि:शक्तता ;
(vi) मानसिक मंदता ;
(vii) मानसिक रुग्णता ;

(ञ) "नियोजक" से अभिप्रेत है, –

(i) किसी सरकार के संबंध में, इस निमित्त विभागाध्यक्ष द्वारा अधिसूचित प्राधिकारी या जहां ऐसा कोई प्राधिकारी अधिसूचित नहीं किया गया है वहां विभागाध्यक्ष ; और

(ii) किसी स्थापन के संबंध में, उस स्थापन का मुख्य कार्यपालक अधिकारी ;

(ट) "स्थापन" से केन्द्रीय, प्रांतीय या राज्य अधिनियम द्वारा या उसके अधीन स्थापित कोई निगम अथवा सरकार अथवा किसी

स्थानीय प्राधिकारी अथवा कंपनी अधिनियम, 1956 (1956 का 1) की धारा 617 में परिभाषित किसी सरकारी कंपनी के स्वामित्वाधीन या नियंत्रणाधीन या सहायता प्राप्त कोई प्राधिकारी या निकाय अभिप्रेत है और उसके अन्तर्गत किसी सरकार के विभाग हैं ;

(ठ) "श्रवण शक्ति का ह्रास" से संवाद संबंधी रेंज की आवृत्ति में बेहतर कर्ण में साठ डेसीबेल या अधिक की हानि अभिप्रेत है ;

(ड) "नि:शक्त व्यक्तियों के लिए संस्था" से नि:शक्त व्यक्तियों के प्रवेश, देखरेख, संरक्षण, शिक्षा, प्रशिक्षण, पुनर्वास या किसी अन्य सेवा के लिए कोई संस्था अभिप्रेत है ;

(ढ) "कुष्ठ रोग मुक्त व्यक्ति" से कोई ऐसा व्यक्ति अभिप्रेत है, जो कुष्ठ रोग से रोग मुक्त हो गया है किन्तु, –

(i) हाथों या पैरों में संवेदना की कमी और नेत्र और पलक में संवेदना की कमी और आंशिक घात से ग्रस्त है किन्तु प्रकट विरूपता से ग्रस्त नहीं है ;

(ii) प्रकट विरूपता और आंशिक घात से ग्रस्त है, किन्तु उसके हाथों और पैरों में पर्याप्त गतिशीलता है, जिससे वह सामान्य आर्थिक क्रियाकलाप कर सकता है ;

(iii) अत्यन्त शारीरिक विरूपता और अधिक वृद्धावस्था से ग्रस्त है जो उसे कोई भी लाभपूर्ण उपजीविका चलाने से रोकती है,

और "कुष्ठ रोग मुक्त" पद का अर्थ तद्नुसार लगाया जाएगा ;

(ण) "चलन नि:शक्तता" से हड्डियों, जोड़ों या मांसपेशियों की कोई ऐसी नि:शक्तता अभिप्रेत है, जिससे अंगों की गति में पर्याप्त निबंधन या किसी प्रकार का प्रमस्तिष्क घात हो ;

(त) "चिकित्सा प्राधिकारी" से कोई ऐसा अस्पताल या संस्था अभिप्रेत है जो समुचित सरकार द्वारा, अधिसूचना द्वारा, इस अधिनियम के प्रयोजनों के लिए विनिर्दिष्ट की जाए ;

(थ) "मानसिक रुग्णता" से मानसिक मंदता से भिन्न कोई

मानसिक विकार अभिप्रेत है ;

(द) "मानसिक मंदता" से अभिप्रेत है, किसी व्यक्ति के चित्त की अवरुद्ध या अपूर्ण विकास की अवस्था जो विशेष रूप से वृद्धि की अवसामान्यता द्वारा अभिलक्षित होती है ;

(ध) "अधिसूचना" से राजपत्र में प्रकाशित कोई अधिसूचना अभिप्रेत है ;

(न) "नि:शक्त व्यक्ति" से ऐसा कोई व्यक्ति अभिप्रेत है जो किसी चिकित्सा प्राधिकारी द्वारा प्रमाणित किसी नि:शक्तता के कम से कम चालीस प्रतिशत से ग्रस्त है ;

(प) "कम दृष्टि वाला व्यक्ति" से ऐसा कोई व्यक्ति अभिप्रेत है जिसकी उपचार या मानक अप्रवर्तनीय संशोधन के पश्चात् भी दृष्टि क्षमता का ह्रास हो गया है किन्तु जो समुचित सहायक युक्ति से किसी कार्य की योजना या निष्पादन के लिए दृष्टि का उपयोग करता है या उपयोग करने में संभाव्य रूप से समर्थ है ;

(फ) "विहित" से इस अधिनियम के अधीन बनाए गए नियमों द्वारा विहित अभिप्रेत है ;

(ब) "पुनर्वास" ऐसी प्रक्रिया के प्रति निर्देश करता है जिसका उद्देश्य नि:शक्त व्यक्तियों को, उनका सर्वोत्तम शारीरिक, संवेदी, बौद्धिक, मानसिक या सामाजिक कृत्यकारी स्तर प्राप्त करने में और उसे बनाए रखने में समर्थ बनाना है ;

(भ) "विशेष रोजगार कार्यालय" से कोई ऐसा कार्यालय या स्थान अभिप्रेत है जो सरकार द्वारा रजिस्टर रखकर या अन्यथा निम्नलिखित की बाबत जानकारी का संग्रहण करने और देने के लिए स्थापित और अनुरक्षित किया गया है, अर्थात्, –

(i) ऐसे व्यक्ति, जो नि:शक्तता से ग्रस्त व्यक्तियों में से कर्मचारियों को काम में लगाना चाहते हैं ;

(ii) ऐसे नि:शक्त व्यक्ति, जो नियोजन चाहते हैं ; और

(iii) ऐसे रिक्त स्थान, जिनके लिए नियोजन चाहने वाले

नि:शक्त व्यक्तियों की नियुक्ति की जा सकती है ;

(म) "राज्य समन्वय समिति" से धारा 13 की उपधारा (1) के अधीन गठित राज्य समन्वय समिति अभिप्रेत है ;

(य) "राज्य कार्यपालिका समिति" से धारा 19 की उपधारा (1) के अधीन गठित राज्य कार्यपालिका समिति अभिप्रेत है ।

अध्याय 2

केन्द्रीय समन्वय समिति

3. **केन्द्रीय समन्वय समिति** – (1) केन्द्रीय सरकार, अधिसूचना द्वारा, केन्द्रीय समन्वय समिति नामक एक निकाय का गठन करेगी जो इस अधिनियम के अधीन उसको प्रदत्त शक्तियों का प्रयोग और उसे सौंपे गए कृत्यों का पालन करेगी ।

(2) केन्द्रीय समन्वय समिति निम्नलिखित से मिलकर बनेगी, अर्थात् :–

(क) केन्द्रीय सरकार के कल्याण विभाग का भारसाधक मंत्री,	पदेन, अध्यक्ष ;
(ख) केन्द्रीय सरकार के कल्याण विभाग का भारसाधक राज्यमंत्री,	पदेन, उपाध्यक्ष ;
(ग) भारत सरकार के कल्याण, शिक्षा, महिला और बाल विकास, व्यय, कार्मिक, प्रशिक्षण और लोक शिकायत, स्वास्थ्य, ग्रामीण विकास, औद्योगिक विकास, शहरी कार्य और नियोजन, विज्ञान और प्रौद्योगिकी, विधि कार्य, लोक उद्यम विभागों के भारसाधक सचिव,	पदेन, सदस्य ;
(घ) मुख्य आयुक्त,	पदेन, सदस्य ;
(ङ) अध्यक्ष, रेल बोर्ड,	पदेन, सदस्य ;
(च) महानिदेशक, श्रम, रोजगार और प्रशिक्षण,	पदेन, सदस्य ;

(छ) निदेशक, राष्ट्रीय शैक्षिक अनुसंधान और प्रशिक्षण परिषद्, — पदेन, सदस्य ;

(ज) संसद् के तीन सदस्य, जिनमें से दो सदस्य लोक सभा द्वारा और एक सदस्य राज्य सभा द्वारा निर्वाचित किया जाएगा, — सदस्य ;

(झ) तीन व्यक्तियों को केन्द्रीय सरकार द्वारा, ऐसे हितों का प्रतिनिधित्व करने के लिए, जिनको उक्त सरकार की राय में प्रतिनिधित्व किया जाना चाहिए, नामनिर्देशित किया जाएगा, — सदस्य ;

(ञ) निम्नलिखित के निदेशक –

(i) राष्ट्रीय दृष्टि विकलांग संस्थान, देहरादून ;

(ii) राष्ट्रीय मानसिक विकलांग संस्थान, सिकन्दराबाद ;

(iii) राष्ट्रीय अस्थि विकलांग संस्थान, कलकत्ता ;

(iv) अली यावर जंग राष्ट्रीय श्रवण विकलांग संस्थान, मुंबई, — पदेन, सदस्य ;

(ट) चार सदस्य, जो केन्द्रीय सरकार द्वारा राज्यों और संघ राज्यक्षेत्रों का प्रतिनिधित्व करने के लिए चक्रानुक्रम से ऐसी रीति से नामनिर्देशित किए जाएंगे जो केन्द्रीय सरकार द्वारा विहित की जाए :

परंतु इस खंड के अधीन कोई नियुक्ति, यथास्थिति, राज्य सरकार या संघ राज्यक्षेत्र की सिफारिश पर ही की जाएगी, अन्यथा नहीं ;

(ठ) ऐसे गैर-सरकारी संगठनों या संगमों का, जो नि:शक्तता से संबंधित है, प्रतिनिधित्व करने के लिए केन्द्रीय सरकार द्वारा नामनिर्देशित किए जाने वाले पांच व्यक्ति, जो यथासाध्य, नि:शक्त व्यक्ति होंगे, जिनमें से एक नि:शक्तता के प्रत्येक क्षेत्र से होगा : सदस्य ;

परंतु इस खंड के अधीन व्यक्तियों का नामनिर्देशन करते समय केन्द्रीय सरकार, कम से कम एक महिला का और अनुसूचित जाति या अनुसूचित जनजाति के एक व्यक्ति का नामनिर्देशन करेगी ;

(ड) भारत सरकार के कल्याण मंत्रालय का संयुक्त सचिव, जो विकलांगों के कल्याण से संबंधित है, पदेन, सदस्य-सचिव ।

(3) केन्द्रीय समन्वय समिति के सदस्य का पद धारण करने से उसका धारक संसद् के किसी सदन का सदस्य चुने जाने के लिए या सदस्य होने के लिए निरर्हित नहीं होगा ।

4. **सदस्यों की पदावधि** – (1) इस अधिनियम द्वारा या इसके अधीन जैसा अन्यथा उपबंधित है, उसके सिवाय, धारा 3 की उपधारा (2) के खंड (झ) या खंड (ठ) के अधीन नामनिर्देशित केन्द्रीय समन्वय समिति का कोई सदस्य अपने नामनिर्देशन की तारीख से तीन वर्ष की अवधि के लिए पद धारण करेगा :

परन्तु ऐसा कोई सदस्य अपनी पदावधि की समाप्ति के होते हुए भी, तब तक पद पर बना रहेगा जब तक उसका उत्तरवर्ती अपने पद पर नहीं आ जाता है ।

(2) किसी पदेन सदस्य की पदावधि उसी समय समाप्त हो जाएगी जब वह उस पद पर नहीं रह जाता है जिसके आधार पर उसको इस प्रकार नामनिर्देशित किया गया था ।

(3) केन्द्रीय सरकार, धारा 3 की उपधारा (2) के खंड (झ) या खंड (ठ) के अधीन नामनिर्देशित किसी सदस्य को यदि वह उचित समझती है तो, उसकी पदावधि की समाप्ति से पूर्व उसे उसके विरुद्ध कारण दर्शित करने का उचित अवसर देने के पश्चात्, हटा सकेगी ।

(4) धारा 3 की उपधारा (2) के खंड (झ) या खंड (ठ) के अधीन नामनिर्देशित कोई सदस्य, केन्द्रीय सरकार को संबोधित अपने हस्ताक्षर सहित लेख द्वारा किसी भी समय अपना पद त्याग सकेगा और तब उक्त सदस्य का स्थान रिक्त हो जाएगा ।

(5) केन्द्रीय समन्वय समिति में आकस्मिक रिक्ति नए नामनिर्देशन द्वारा भरी जाएगी और उस रिक्ति को भरने के लिए नामनिर्देशन व्यक्ति, उस शेष भाग के लिए ही पद धारण करेगा जिसके लिए वह सदस्य, जिसके स्थान पर वह इस प्रकार नामनिर्देशित किया गया है, पद धारण करता ।

(6) धारा 3 की उपधारा (2) के खंड (झ) और खंड (ठ) के अधीन नामनिर्देशित कोई सदस्य, पुनः नामनिर्देशन का पात्र होगा ।

(7) धारा 3 की उपधारा (2) के खंड (झ) और खंड (ठ) के अधीन नामनिर्देशित सदस्य, ऐसे भत्ते प्राप्त करेंगे जो केन्द्रीय सरकार विहित करे ।

5. **निरर्हताएं** – (1) कोई ऐसा व्यक्ति, केन्द्रीय समन्वय समिति का सदस्य नहीं होगा, –

(क) जो दिवालिया है या किसी समय दिवालिया न्यायनिर्णीत किया गया है या जिसने अपने ऋणों का संदाय निलंबित कर दिया है या अपने लेनदारों के साथ समझौता कर लिया है ; या

(ख) जो विकृतचित्त का है और सक्षम न्यायालय द्वारा ऐसा घोषित कर दिया गया है ; या

(ग) जो ऐसे किसी अपराध के लिए सिद्धदोष ठहराया जाता है या ठहराया गया है जिसमें केन्द्रीय सरकार की राय में नैतिक अधमता अंतर्ग्रस्त है ; या

(घ) जो इस अधिनियम के अधीन किसी अपराध के लिए सिद्धदोष ठहराया जाता है या किसी समय सिद्धदोष ठहराया गया है, या

(ङ) जिसने केन्द्रीय सरकार की राय में सदस्य के रूप में अपने पद का इस प्रकार दुरुपयोग किया है कि उसका केन्द्रीय समन्वय समिति में बने रहना जनसाधारण के हितों के प्रतिकूल है ।

(2) इस धारा के अधीन केन्द्रीय सरकार द्वारा हटाए जाने का कोई आदेश तब तक नहीं किया जाएगा जब तक संबंधित सदस्य को उसके विरुद्ध कारण दर्शित करने का उचित अवसर नहीं दे दिया जाता है ।

(3) धारा 4 की उपधारा (1) या उपधारा (6) में किसी बात के होते हुए भी, कोई सदस्य, जो इस धारा के अधीन हटाया गया है, सदस्य के रूप में पुनः नामनिर्देशन का पात्र नहीं होगा ।

6. **सदस्यों द्वारा स्थानों का रिक्त किया जाना** – यदि केन्द्रीय समन्वय समिति का कोई सदस्य धारा 5 में विनिर्दिष्ट निरर्हताओं में से किसी से ग्रस्त हो जाता है तो उसका स्थान रिक्त हो जाएगा ।

7. **केन्द्रीय समन्वय समिति के अधिवेशन** – केन्द्रीय समन्वय समिति का अधिवेशन प्रत्येक छह मास में कम से कम एक बार होगा और वह अपने अधिवेशनों में कारबार के संव्यवहार के संबंध में प्रक्रिया के ऐसे नियमों का पालन करेगी, जो केन्द्रीय सरकार विहित करे ।

8. **केन्द्रीय समन्वय समिति के कृत्य** – (1) इस अधिनियम के उपबंधों के अधीन रहते हुए, केन्द्रीय समन्वय समिति का कृत्य नि:शक्तता के विषयों के संबंध में राष्ट्रीय केन्द्र बिन्दु के रूप में कार्य करना और नि:शक्त व्यक्तियों के सामने आने वाली समस्याओं का समाधान करने के लिए व्यापक नीति के निरंतर विकसित किए जाने को सुकर बनाना होगा ।

(2) विशिष्टतया और पूर्वगामी उपबंधों की व्यापकता पर प्रतिकूल प्रभाव डाले बिना, केन्द्रीय समन्वय समिति, निम्नलिखित कृत्यों में से सभी या किन्हीं का अनुपालन कर सकेगी, अर्थात् –

(क) सरकार के ऐसे सभी विभागों और अन्य सरकारी तथा

गैर-सरकारी संगठनों के, जो नि:शक्त व्यक्तियों से संबंधित हैं, क्रियाकलापों का पुनर्विलोकन और समन्वय करना ;

(ख) नि:शक्त व्यक्तियों के सामने आने वाली समस्याओं का हल ढूंढने के लिए राष्ट्रीय नीति विकसित करना ;

(ग) नि:शक्तता की बाबत नीतियां, कार्यक्रम, विधान और परियोजनाएं तैयार करने के बारे में केन्द्रीय सरकार को, सलाह देना ;

(घ) नि:शक्त व्यक्तियों के मामलों पर संबंधित प्राधिकारियों और अंतरराष्ट्रीय संगठनों के साथ इस दृष्टि से चर्चा करना कि राष्ट्रीय योजनाओं और अन्य कार्यक्रमों में तथा अंतरराष्ट्रीय अभिकरणों द्वारा विकसित की गई नीतियों में नि:शक्त व्यक्तियों के लिए स्कीमें और परियोजनाओं का उपबंध किया जाएगा ;

(ङ) दाता अभिकरणों के साथ परामर्श करके उनकी निधि जुटाने की नीतियों का, नि:शक्त व्यक्तियों पर उनके प्रभाव के परिप्रेक्ष्य में, पुनर्विलोकन करना ;

(च) सार्वजनिक स्थानों, कार्य स्थलों, जन-सुविधा स्थलों, विद्यालयों और अन्य संस्थाओं में बाधा-रहित वातावरण सुनिश्चित करने के लिए ऐसे अन्य उपाय करना ;

(छ) नि:शक्त व्यक्तियों की समानता और उनकी पूर्ण भागीदारी की उपलब्धि के लिए बनाई गई नीतियों और कार्यक्रमों के प्रभाव को मानीटर करना तथा उनका मूल्यांकन करना ;

(ज) ऐसे अन्य कृत्य करना जो केन्द्रीय सरकार विहित करे ।

9. **केन्द्रीय कार्यपालिका समिति** – (1) केन्द्रीय सरकार, केन्द्रीय कार्यपालिका समिति नामक एक समिति का गठन करेगी, जो इस अधिनियम के अधीन उसे सौंपे गए कृत्यों का पालन करेगी ।

(2) केन्द्रीय कार्यपालिका समिति निम्नलिखित से मिलकर बनेगी, अर्थात् :–

(क) भारत सरकार के समाज कल्याण मंत्रालय का सचिव — पदेन, अध्यक्ष ;

(ख) मुख्य आयुक्त, — पदेन, सदस्य ;

(ग) स्वास्थ्य सेवाओं का महानिदेशक, — पदेन, सदस्य ;

(घ) रोजगार और प्रशिक्षण महानिदेशक, — पदेन, सदस्य ;

(ङ) ग्रामीण विकास, शिक्षा, कल्याण, कार्मिक, लोक शिकायत और पेंशन तथा शहरी कार्य और रोजगार, विज्ञान और प्रौद्योगिकी के मंत्रालयों या विभागों का प्रतिनिधित्व करने के लिए छह व्यक्ति, जो भारत सरकार के संयुक्त सचिव की पंक्ति से नीचे के न हों, — पदेन, सदस्य ;

(च) केन्द्रीय सरकार के कल्याण मंत्रालय में वित्त सलाहकार, — पदेन, सदस्य ;

(छ) सलाहकार (टैरिफ) रेल बोर्ड, — पदेन, सदस्य ;

(ज) चार सदस्य, जो केन्द्रीय सरकार द्वारा राज्य सरकारों और संघ राज्यक्षेत्रों का प्रतिनिधित्व करने के लिए चक्रानुक्रम द्वारा ऐसी रीति से नामनिर्देशित किए जाएंगे जो केन्द्रीय सरकार द्वारा विहित की जाए ;

(झ) एक व्यक्ति, जो केन्द्रीय सरकार द्वारा, ऐसे हितों का प्रतिनिधित्व करने के लिए जिनका केन्द्रीय सरकार की राय में प्रतिनिधित्व किया जाना चाहिए, नामनिर्देशित किया जाएगा, — सदस्य ;

(ञ) ऐसे गैर सरकारी संगठनों या संगमों का, जो नि:शक्तता से संबंधित हैं, प्रतिनिधित्व करने के लिए केन्द्रीय सरकार द्वारा नामनिर्देशित किए जाने

वाले पांच व्यक्ति जो, यथासाध्य, नि:शक्त व्यक्ति होंगे, जिनमें नि:शक्तता के प्रत्येक क्षेत्र से एक होगा :

परन्तु इस खंड के अधीन व्यक्तियों का नामनिर्देशन करते समय केन्द्रीय सरकार, कम से कम एक महिला का और अनुसूचित जाति या अनुसूचित जनजाति के एक व्यक्ति का नामनिर्देशन करेगी, सदस्य ;

(ट) कल्याण मंत्रालय में भारत सरकार का संयुक्त सचिव जो विकलांगों के कल्याण से संबंधित है, पदेन, सदस्य-सचिव ।

(3) उपधारा (2) के खंड (झ) और खंड (ञ) के अधीन नामनिर्देशित सदस्य ऐसे भत्ते प्राप्त करेंगे, जो केन्द्रीय सरकार द्वारा विहित किए जाएं ।

(4) उपधारा (2) के खंड (झ) या खंड (ञ) के अधीन नामनिर्देशित कोई सदस्य, केन्द्रीय सरकार को संबोधित अपने हस्ताक्षर सहित लेख द्वारा किसी भी समय, अपना पद त्याग सकेगा और तब उक्त सदस्य का स्थान रिक्त हो जाएगा ।

10. **केन्द्रीय कार्यपालिका समिति के कृत्य** – (1) केन्द्रीय कार्यपालिका समिति, केन्द्रीय समन्वय समिति की कार्यकारी निकाय होगी और केन्द्रीय समन्वय समिति के विनिश्चयों को कार्यान्वित करने के लिए उत्तरदायी होगी ।

(2) उपधारा (1) के उपबंधों पर प्रतिकूल प्रभाव डाले बिना, केन्द्रीय कार्यपालिका समिति ऐसे अन्य कृत्यों का भी पालन करेगी, जो केन्द्रीय समन्वय समिति द्वारा उसे प्रत्यायोजित किए जाएं ।

11. **केन्द्रीय कार्यपालिका समिति के अधिवेशन** – केन्द्रीय कार्यपालिका समिति का अधिवेशन तीन मास में कम से कम एक बार

होगा और वह अपने अधिवेशनों में कारबार के संव्यवहार के संबंध में प्रक्रिया के ऐसे नियमों का पालन करेगी, जो केन्द्रीय सरकार विहित करे ।

12. **विशिष्ट प्रयोजनों के लिए केन्द्रीय कार्यपालिका समिति के साथ व्यक्तियों का अस्थायी सहयोजन** – (1) केन्द्रीय कार्यपालिका समिति, ऐसी रीति से और ऐसे प्रयोजनों के लिए जो केन्द्रीय सरकार द्वारा विहित किए जाएं, किसी ऐसे व्यक्ति को जिसकी सहायता या सलाह की वह, इस अधिनियम के अधीन अपने किसी कृत्य का पालन करने में प्राप्त करने की वांछा करे, अपने साथ सहयुक्त कर सकेगी ।

(2) उपधारा (1) के अधीन किसी प्रयोजन के लिए केन्द्रीय कार्यपालिका समिति के साथ सहयुक्त किसी व्यक्ति को, उस प्रयोजन से सुसंगत केन्द्रीय कार्यपालिका समिति के विचार-विमर्श में भाग लेने का अधिकार होगा किन्तु उसे उक्त समिति के अधिवेशन में मत देने का अधिकार नहीं होगा और वह किसी अन्य प्रयोजन के लिए सदस्य नहीं होगा ।

(3) उपधारा (1) के अधीन किसी प्रयोजन के लिए उक्त समिति के साथ सहयुक्त किसी व्यक्ति को, उसके अधिवेशनों में उपस्थित होने के लिए और उक्त समिति का कोई अन्य कार्य करने के लिए, ऐसी फीस और भत्तों का संदाय किया जाएगा, जो केन्द्रीय सरकार विहित करे ।

अध्याय 3

राज्य समन्वय समिति

13. **राज्य समन्वय समिति** – (1) प्रत्येक राज्य सरकार, अधिसूचना द्वारा, राज्य समन्वय समिति नामक एक निकाय का गठन करेगी जो इस अधिनियम के अधीन उसको प्रदत्त शक्तियों का प्रयोग और सौंपे गए कृत्यों का पालन करेगी ।

(2) राज्य समन्वय समिति निम्नलिखित से मिलकर बनेगी, अर्थात् :–

(क) राज्य सरकार के समाज कल्याण विभाग का भारसाधक मंत्री, पदेन, अध्यक्ष ;

(ख) समाज कल्याण विभाग का भारसाधक राज्य मंत्री, यदि कोई हो, — पदेन, उपाध्यक्ष ;

(ग) राज्य सरकार के कल्याण, शिक्षा, महिला और बाल विकास, व्यय, कार्मिक प्रशिक्षण और लोक शिकायत, स्वास्थ्य, ग्रामीण विकास, औद्योगिक विकास, शहरी कार्य और रोजगार, विज्ञान और प्रौद्योगिकी, लोक उद्यम, चाहे वे किसी भी नाम से ज्ञात हों, विभागों के भारसाधक सचिव, — पदेन, सदस्य ;

(घ) किसी अन्य विभाग का सचिव, जिसे राज्य सरकार आवश्यक समझे, — पदेन, सदस्य ;

(ङ) अध्यक्ष, लोक उद्यम ब्यूरो (चाहे किसी भी नाम से ज्ञात हो), — पदेन, सदस्य ;

(च) ऐसे गैर सरकारी संगठनों या संगमों का, जो नि:शक्तता से संबंधित हैं, प्रतिनिधित्व करने के लिए राज्य सरकार द्वारा नामनिर्देशित किए जाने वाले पांच व्यक्ति, जो यथासाध्य, नि:शक्त व्यक्ति होंगे, जिनमें नि:शक्तता के प्रत्येक क्षेत्र से एक होगा :

परंतु इस खंड के अधीन व्यक्तियों का नामनिर्देशन करते समय राज्य सरकार, कम से कम एक महिला का और अनुसूचित जाति या अनुसूचित जनजाति के एक व्यक्ति का नामनिर्देशन करेगी ; — सदस्य ;

(छ) राज्य विधान-मंडल के तीन सदस्य, जिनमें से दो विधान सभा द्वारा और एक विधान परिषद् द्वारा, यदि कोई

हों, निर्वाचित किए जाएंगे ;

(ज) तीन व्यक्ति उस राज्य सरकार द्वारा कृषि, उद्योग या व्यापार अथवा किसी ऐसे अन्य हित का प्रतिनिधित्व करने के लिए जिनका राज्य सरकार की राय में प्रतिनिधित्व किया जाना चाहिए, नामनिर्देशित किए जाएंगे ; — पदेन, सदस्य ;

(झ) आयुक्त, — पदेन, सदस्य ;

(ञ) विकलांग व्यक्तियों के कल्याण के संबंध में, कार्रवाई करने वाला राज्य सरकार का सचिव, — पदेन, सदस्य-सचिव ।

(3) इस धारा में किसी बात के होते हुए भी, किसी संघ राज्यक्षेत्र के लिए कोई भी राज्य समन्वय समिति गठित नहीं की जाएगी और किसी संघ राज्यक्षेत्र के संबंध में केन्द्रीय समन्वय समिति उस संघ राज्यक्षेत्र के लिए राज्य समन्वय समिति की शक्तियों का प्रयोग और कृत्यों का पालन करेगी :

परंतु किसी संघ राज्यक्षेत्र के संबंध में केन्द्रीय समन्वय समिति, इस उपधारा के अधीन अपनी शक्तियों और कृत्यों में से सभी को या किन्हीं को, ऐसे व्यक्ति या व्यक्ति-निकाय को, जिसे केन्द्रीय सरकार विनिर्दिष्ट करे, प्रत्यायोजित कर सकेगी ।

14. **सदस्यों की सेवा के निबंधन और शर्तें** – (1) इस अधिनियम द्वारा या उसके अधीन जैसा अन्यथा उपबंधित है उसके सिवाय, धारा 13 की उपधारा (2) के खंड (च) या खंड (ज) के अधीन नामनिर्देशित राज्य समन्वय समिति का कोई सदस्य, अपने नामनिर्देशन की तारीख से तीन वर्ष की अवधि के लिए पद धारण करेगा :

परंतु ऐसा कोई सदस्य, अपनी पदावधि के समाप्त हो जाने पर भी, तब तक पद धारण करता रहेगा, जब तक उसका पदोत्तरवर्ती अपना पद ग्रहण नहीं कर लेता है ।

(2) पदेन सदस्य की पदावधि उस समय समाप्त हो जाएगी जब वह उस पद को धारण करना समाप्त कर देगा, जिसके आधार पर उसका इस प्रकार नामनिर्देशन किया गया था ।

(3) राज्य सरकार, यदि वह ठीक समझती है तो धारा 13 की उपधारा (2) के खंड (च) या खंड (ज) के अधीन नामनिर्देशित किसी सदस्य को उसकी पदावधि की समाप्ति के पूर्व, उसे उसके विरुद्ध कारण दर्शित करने का उचित अवसर देने के पश्चात् हटा सकेगी ।

(4) धारा 13 की उपधारा (2) के खंड (च) या खंड (ज) के अधीन नामनिर्देशित कोई सदस्य, राज्य सरकार को संबोधित अपने हस्ताक्षर सहित लेख द्वारा किसी भी समय, अपना पद त्याग सकेगा और तब उक्त सदस्य का स्थान रिक्त हो जाएगा ।

(5) राज्य समन्वय समिति में कोई आकस्मिक रिक्ति, नए नामनिर्देशन द्वारा भरी जाएगी और रिक्ति को भरने के लिए नामनिर्देशित व्यक्ति, उस शेष अवधि के लिए ही पद धारण करेगा जिसके लिए वह सदस्य जिसके स्थान पर वह इस प्रकार नामनिर्देशित किया गया है, पद धारण करता ।

(6) धारा 13 की उपधारा (2) के खंड (च) और खंड (ज) के अधीन नामनिर्देशित कोई सदस्य पुनः नामनिर्देशन के लिए पात्र होगा ।

7. धारा 13 की उपधारा (2) के खंड (च) और खंड (ज) के अधीन नामनिर्दिष्ट सदस्य, ऐसे भत्ते प्राप्त करेंगे, जो राज्य सरकार द्वारा विहित किए जाएं ।

15. **निरर्हताएं** – (1) कोई ऐसा व्यक्ति, राज्य समन्वय समिति का सदस्य नहीं होगा, –

(क) जो दिवालिया है या किसी समय दिवालिया न्यायनिर्णीत किया गया है या जिसने अपने ऋणों का संदाय निलंबित कर दिया है या अपने लेनदारों के साथ समझौता कर लिया है ; या

(ख) जो विकृतचित्त का है और सक्षम न्यायालय द्वारा ऐसा घोषित कर दिया गया है ; या

(ग) जो ऐसे किसी अपराध के लिए सिद्धदोष ठहराया जाता है या ठहराया गया है जिसमें राज्य सरकार की राय में नैतिक अधमता अंतर्ग्रस्त है ; या

(घ) जो इस अधिनियम के अधीन किसी अपराध के लिए सिद्धदोष ठहराया जाता है या किसी समय सिद्धदोष ठहराया गया है ; या

(ङ) जिसने राज्य सरकार की राय में सदस्य के रूप में अपने पद का इस प्रकार दुरुपयोग किया है कि उसका राज्य समन्वयन समिति में बने रहना जनसाधारण के हितों के प्रतिकूल है ।

(2) इस धारा के अधीन राज्य सरकार द्वारा हटाए जाने का आदेश तब तक नहीं किया जाएगा जब तक संबंधित सदस्य को उसके विरुद्ध कारण दर्शित करने का उचित अवसर नहीं दे दिया जाता है ।

(3) धारा 14 की उपधारा (1) या उपधारा (6) में किसी बात के होते हुए भी, कोई सदस्य, जो इस धारा के अधीन हटाया गया है, सदस्य के रूप में पुनः नामनिर्देशन का पात्र नहीं होगा ।

16. **स्थानों का रिक्त होना** – यदि राज्य समन्वय समिति का कोई सदस्य धारा 15 में विनिर्दिष्ट निरर्हताओं में से किसी से ग्रस्त हो जाता है तो उसका स्थान रिक्त हो जाएगा ।

17. **राज्य समन्वय समिति के अधिवेशन** – राज्य समन्वय समिति का अधिवेशन प्रत्येक छह मास में कम से कम एक बार होगा और वह अपने अधिवेशनों में कारबार के संव्यवहार के संबंध में प्रक्रिया के ऐसे नियमों का पालन करेगी, जो विहित किए जाएं ।

18. **राज्य समन्वय समिति के कृत्य** – (1) इस अधिनियम के उपबंधों के अधीन रहते हुए, राज्य समन्वय समिति का कृत्य नि:शक्तता के विषयों के संबंध में राज्य के केन्द्र बिन्दु के रूप में कार्य करना और नि:शक्त व्यक्तियों के सामने आने वाली समस्याओं का समाधान करने के लिए व्यापक नीति के निरंतर विकसित किए जाने को सुकर बनाना होगा ।

(2) विशिष्टतया और पूर्वगामी कृत्यों की व्यापकता पर प्रतिकूल प्रभाव डाले बिना, राज्य समन्वय समिति, राज्य के भीतर निम्नलिखित कृत्यों में से सभी या किन्हीं का अनुपालन कर सकेगी, अर्थात् :–

(क) सरकार के ऐसे सभी विभागों और अन्य सरकारी तथा गैर सरकारी संगठनों के, जो नि:शक्त व्यक्तियों से संबंधित हैं, क्रियाकलापों का पुनर्विलोकन और समन्वय करना ;

(ख) नि:शक्त व्यक्तियों के सामने आने वाली समस्याओं का हल ढूंढने के लिए राज्य की नीति का विकास करना ;

(ग) नि:शक्तता की बाबत नीतियां, कार्यक्रम, विधान और परियोजनाएं तैयार करने के बारे में राज्य सरकार को सलाह देना ;

(घ) दाता अभिकरणों के साथ परामर्श करके उनकी निधि जुटाने की नीतियों का, नि:शक्त व्यक्तियों पर उनके प्रभाव के परिप्रेक्ष्य में, पुनर्विलोकन करना ;

(ङ) सार्वजनिक स्थानों, कार्य स्थलों, जन सुविधा स्थलों, विद्यालयों और अन्य संस्थाओं में बाधा-रहित वातावरण सुनिश्चित करने के लिए ऐसे अन्य उपाय करना ;

(च) नि:शक्त व्यक्तियों की समानता और उनकी पूर्ण भागीदारी की उपलब्धि के लिए बनाई गई नीतियों और कार्यक्रमों के प्रभाव को मानिटर करना तथा उनका मूल्यांकन करना ;

(छ) ऐसे अन्य कृत्य करना जो राज्य सरकार विहित करे ।

19. **राज्य कार्यपालिका समिति** – (1) राज्य सरकार, राज्य कार्यपालिका समिति नामक एक समिति का गठन करेगी, जो इस अधिनियम के अधीन उसे सौंपे गए कृत्यों का पालन करेगी ।

(2) राज्य कार्यपालिका समिति निम्नलिखित से मिलकर बनेगी, अर्थात् :–

(क) सचिव, समाज कल्याण विभाग, पदेन, अध्यक्ष ;

(ख) आयुक्त, पदेन, सदस्य ;

(ग) स्वास्थ्य, वित्त, ग्रामीण विकास, शिक्षा, कल्याण, कार्मिक, लोक शिकायत, शहरी कार्य, श्रम और रोजगार, विज्ञान और प्रौद्योगिकी विभागों का प्रतिनिधित्व करने के लिए नौ व्यक्ति, जो राज्य सरकार के संयुक्त सचिव की पंक्ति से नीचे के न हों, — पदेन, सदस्य ;

(घ) एक व्यक्ति, जो राज्य सरकार द्वारा, ऐसे हितों का प्रतिनिधित्व करने के लिए जिनका राज्य सरकार की राय में प्रतिनिधित्व किया जाना चाहिए, नामनिर्देशित किया जाएगा, — सदस्य ;

(ङ) ऐसे गैर सरकारी संगठनों या संगमों का, जो नि:शक्तता से संबंधित हैं प्रतिनिधित्व करने के लिए राज्य सरकार द्वारा नामनिर्देशित किए जाने वाले पांच व्यक्ति, जो यथासाध्य, नि:शक्त व्यक्ति होंगे, जिनमें नि:शक्तता के प्रत्येक क्षेत्र से एक होगा : — सदस्य ;

परन्तु इस खंड के अधीन व्यक्तियों का नामनिर्देशन करते समय राज्य सरकार, कम से कम एक महिला का और अनुसूचित जाति या अनुसूचित जनजाति के एक व्यक्ति का नामनिर्देशन करेगी ;

(च) संयुक्त सचिव, जो कल्याण विभाग के नि:शक्तता प्रभाग के संबंध में कार्यवाही कर रहा हो ; — पदेन, सदस्य-सचिव ।

(3) उपधारा (2) के खंड (घ) और खंड (ङ) के अधीन नामनिर्देशित सदस्य ऐसे भत्ते प्राप्त करेंगे, जो राज्य सरकार द्वारा विहित किए जाएं ।

(4) खंड (घ) या खंड (ग) के अधीन नामनिर्देशित कोई सदस्य, राज्य सरकार को संबोधित अपने हस्ताक्षर सहित लेख द्वारा किसी भी

समय, अपना पद त्याग सकेगा और तब उक्त सदस्य का स्थान रिक्त हो जाएगा ।

20. **राज्य कार्यपालिका समिति के कृत्य** – (1) राज्य कार्यपालिका समिति, राज्य समन्वय समिति की कार्यकारी निकाय होगी और राज्य समन्वय समिति के विनिश्चयों को कार्यान्वित करने के लिए उत्तरदायी होगी ।

(2) उपधारा (1) के उपबंधों पर प्रतिकूल प्रभाव डाले बिना, राज्य कार्यपालिका समिति ऐसे अन्य कृत्यों का भी पालन करेगी जो राज्य समन्वय समिति द्वारा उसे प्रत्यायोजित किए जाएं ।

21. **राज्य कार्यपालिका समिति के अधिवेशन** – राज्य कार्यपालिका समिति का अधिवेशन तीन मास में कम से कम एक बार होगा और वह अपने अधिवेशनों में कारबार के संव्यवहार के संबंध में प्रक्रिया के ऐसे नियमों का पालन करेगी, जो राज्य सरकार विहित करे ।

22. **विशिष्ट प्रयोजनों के लिए राज्य कार्यपालिका समिति के साथ व्यक्तियों का अस्थायी सहयोजन** – (1) राज्य कार्यपालिका समिति, ऐसी रीति से और ऐसे प्रयोजनों के लिए, जो राज्य सरकार द्वारा विहित किए जाएं, किसी ऐसे व्यक्ति को, जिसकी सहायता या सलाह की वह, इस अधिनियम के अधीन अपने किसी कृत्य का पालन करने में प्राप्त करने की वांछा करे, अपने साथ सहयुक्त कर सकेगी ।

(2) उपधारा (1) के अधीन किसी प्रयोजन के लिए राज्य कार्यपालिका समिति के साथ सहयुक्त किसी व्यक्ति को, उस प्रयोजन से सुसंगत राज्य कार्यपालिका समिति के विचार-विमर्श में भाग लेने का अधिकार होगा किन्तु उसे उक्त समिति के अधिवेशन में मत देने का अधिकार नहीं होगा और वह किसी अन्य प्रयोजन के लिए सदस्य नहीं होगा ।

(3) उपधारा (1) के अधीन किसी प्रयोजन के लिए उक्त समिति के साथ सहयुक्त किसी व्यक्ति को, उसके अधिवेशनों में उपस्थित होने के लिए और उक्त समिति का कोई अन्य कार्य करने के लिए, ऐसी फीस और भत्तों का संदाय किया जाएगा, जो राज्य सरकार विहित करे ।

23. **निदेश देने की शक्ति** – इस अधिनियम के अधीन अपने

कृत्यों के अनुपालन में, –

(क) केन्द्रीय समन्वय समिति, ऐसे लिखित निदेशों द्वारा आबद्ध होगी जो केन्द्रीय सरकार, उसे दे ; और

(ख) राज्य समन्वय समिति, ऐसे लिखित निदेशों द्वारा आबद्ध होगी, जो केन्द्रीय समन्वय समिति या राज्य सरकार, उसे दे :

परंतु जहां राज्य सरकार द्वारा दिया गया कोई निदेश, केन्द्रीय समन्वय समिति द्वारा दिए गए किसी निदेश से असंगत है वहां वह विषय केन्द्रीय सरकार को उसके विनिश्चय के लिए निर्देशित किया जाएगा ।

24. **रिक्तियों के कारण कार्यवाहियों का अविधिमान्य न होना** – केन्द्रीय समन्वय समिति, केन्द्रीय कार्यपालिका समिति, राज्य समन्वय समिति या राज्य कार्यपालिका समिति का कोई कार्य या कार्यवाही, केवल इस आधार पर प्रश्नगत नहीं की जाएगी कि ऐसी समितियों में कोई रिक्ति है या उसके गठन में कोई त्रुटि है ।

अध्याय 4

नि:शक्तता का निर्धारण और शीघ्र पता चलाया जाना

25. **समुचित सरकारों और स्थानीय प्राधिकारियों द्वारा नि:शक्तता की आवृत्ति के निवारण के लिए कतिपय उपायों का किया जाना** – अपनी आर्थिक सामर्थ्य और विकास की सीमाओं के भीतर समुचित सरकारें और स्थानीय प्राधिकारी, नि:शक्तता की आवृत्ति के निवारण की दृष्टि से, –

(क) नि:शक्तता की आवृत्ति के कारण से संबंधित सर्वेक्षण, अन्वेषण और अनुसंधान करेंगे या करवाएंगे ;

(ख) नि:शक्तता का निवारण करने की विभिन्न पद्धतियों का संवर्धन करेंगे ;

(ग) "जोखिम वाले मामलों" को पहचानने के प्रयोजन के लिए वर्ष में कम से कम एक बार सभी बालकों की जांच करेंगे ;

(घ) प्राथमिक स्वास्थ्य केन्द्रों में कर्मचारिवृन्द को प्रशिक्षण

देने की सुविधाओं की व्यवस्था करेंगे ;

(ङ) साधारण स्वच्छता, स्वास्थ्य और सफाई के प्रति जागरुकता अभियानों को प्रायोजित करेंगे या करवाएंगे और जानकारी प्रसारित करेंगे या करवाएंगे ;

(च) माता और संतान की प्रसव-पूर्व, प्रसवकालीन और प्रसव पश्चात् देखरेख के लिए उपाय करेंगे ;

(छ) विद्यालय पूर्व, विद्यालयों, प्राथमिक स्वास्थ्य केन्द्रों, ग्राम-स्तर के कार्यकर्ताओं और आंगनवाड़ी कार्यकर्ताओं के माध्यम से जनता को शिक्षित करेंगे ;

(ज) नि:शक्तता के कारणों और अपनाए जाने वाले निवारक उपायों पर, टेलीविजन, रेडियो और अन्य जन-संपर्क साधनों के माध्यम से जन साधारण के मध्य जागरुकता पैदा करेंगे ।

अध्याय 5

शिक्षा

26. **समुचित सरकारों और स्थानीय प्राधिकारियों द्वारा नि:शक्त बालकों के लिए नि:शुल्क शिक्षा आदि की व्यवस्था का किया जाना** - समुचित सरकारें और स्थानीय प्राधिकारी,–

(क) यह सुनिश्चित करेंगे कि प्रत्येक नि:शक्त बालक को अठारह वर्ष की आयु प्राप्त कर लेने तक, उचित वातावरण में नि:शुल्क शिक्षा प्राप्त हो सके ;

(ख) नि:शक्त विद्यार्थियों का सामान्य विद्यालयों में एकीकरण के संवर्धन का प्रयास करेंगे ;

(ग) उनके लिए जिन्हें विशेष शिक्षा की आवश्यकता है, सरकारी और प्राइवेट सेक्टर में विशेष विद्यालयों की स्थापना में ऐसी रीति से अभिवृद्धि करेंगे कि जिससे देश के किसी भी भाग में रह रहे नि:शक्त बालकों की ऐसी विद्यालयों तक पहुंच हो ;

(घ) नि:शक्त बालकों के लिए विशेष विद्यालयों को

व्यावसायिक प्रशिक्षण सुविधाओं से सुसज्जित करने का प्रयास करेंगे ।

27. **समुचित सरकारों और स्थानीय प्राधिकारियों द्वारा अनौपचारिक शिक्षा, आदि के लिए स्कीमों और कार्यक्रमों का बनाया जाना** – समुचित सरकारें और स्थानीय प्राधिकारी, अधिसूचना द्वारा, निम्नलिखित के लिए स्कीमें बनाएंगे, अर्थात् :-

(क) ऐसे नि:शक्त बालकों की बाबत, जिन्होंने पांचवीं कक्षा तक शिक्षा पूरी कर ली है, किन्तु पूर्णकालिक आधार पर अपना अध्ययन चालू नहीं रख सके हैं, अंशकालिक कक्षाओं का संचालन करना ;

(ख) सोलह वर्ष और उससे ऊपर की आयु समूह के बालकों के लिए क्रियात्मक साक्षरता की व्यवस्था के लिए विशेष अंशकालिक कक्षाओं का संचालन करना ;

(ग) ग्रामीण क्षेत्रों में उपलभ्य जनशक्ति का उपयोग करके उन्हें समुचित अभिविन्यास शिक्षा देने के पश्चात् अनौपचारिक शिक्षा प्रदान करना ;

(घ) खुले विद्यालयों या खुले विश्वविद्यालयों के माध्यम से शिक्षा प्रदान करना ;

(ङ) अन्योन्य क्रियात्मक इलैक्ट्रानिक या अन्य संचार साधनों के माध्यम से कक्षा और परिचर्चाओं का संचालन करना ;

(च) प्रत्येक नि:शक्त बालक के लिए उसकी शिक्षा के लिए आवश्यक विशेष पुस्तकों और उपस्करों की नि:शुल्क व्यवस्था करना ।

28. **नई सहायक युक्तियों, शिक्षण सहाय यंत्रों, आदि को डिजाइन और उनका विकास करने के लिए अनुसंधान** – समुचित सरकारें, ऐसी नई सहायक युक्तियों, शिक्षा सहाय यंत्रों और नई विशेष शिक्षण सामग्री या ऐसी अन्य वस्तुओं को, जो किसी नि:शक्त बालक को शिक्षा में समान अवसर प्रदान करने के लिए आवश्यक हों, डिजाइन और उनका विकास करने के लिए अनुसंधान करेंगी या सरकारी और गैर सरकारी

अभिकरणों द्वारा अनुसंधान कराएगी ।

29. **समुचित सरकारों द्वारा नि:शक्त बालकों के विद्यालयों के लिए प्रशिक्षित जनशक्ति विकसित करने के लिए शिक्षक प्रशिक्षण संस्थाओं का स्थापित किया जाना** – समुचित सरकारें पर्याप्त संख्या में, शिक्षक प्रशिक्षण संस्थाएं स्थापित करेंगी और नि:शक्तता में विशेषज्ञता वाले शिक्षक प्रशिक्षण कार्यक्रमों का विकास करने के लिए, राष्ट्रीय संस्थाओं और अन्य स्वैच्छिक संगठनों को सहायता प्रदान करेंगी जिससे कि नि:शक्त बालकों के विशेष विद्यालयों और एकीकृत विद्यालयों के लिए अपेक्षित प्रशिक्षित जनशक्ति उपलब्ध हो सके ।

30. **समुचित सरकारों द्वारा परिवहन सुविधाओं, पुस्तकों के प्रदाय, आदि के लिए व्यापक शिक्षा स्कीम का तैयार किया जाना** – पूर्वगामी उपबंधों पर प्रतिकूल प्रभाव डाले बिना, समुचित सरकारें, अधिसूचना द्वारा, एक व्यापक शिक्षा स्कीम तैयार करेंगी, जिसमें निम्नलिखित के लिए उपबंध होगा, अर्थात् :–

(क) नि:शक्त बालकों के लिए परिवहन सुविधाएं या उनके माता-पिता या अभिभावकों को वैकल्पिक वित्तीय प्रोत्साहन, जिससे कि उनके नि:शक्त बालक विद्यालयों में जा सकें ;

(ख) व्यावसायिक और वृत्तिक प्रशिक्षण देने वाले विद्यालयों, महाविद्यालयों या अन्य संस्थानों से वास्तु-विद्या-संबंधी बाधाओं को हटाना ;

(ग) विद्यालय जाने वाले नि:शक्त बालकों के लिए पुस्तकों, वर्दियों और अन्य सामग्री का प्रदाय करना ;

(घ) नि:शक्त विद्यार्थियों को छात्रवृत्ति देना ;

(ङ) नि:शक्त बालकों के पुनर्वास की बाबत उनके माता-पिता की शिकायतों को दूर करने के लिए समुचित मंच स्थापित करना ;

(च) दृष्टिहीन विद्यार्थियों और कमदृष्टि वाले विद्यार्थियों के फायदे के लिए पूर्णतया गणित संबंधी प्रश्नों को हटाने के लिए परीक्षा पद्धति में उपयुक्त परिवर्तन करना ;

(छ) नि:शक्त बालकों के फायदे के लिए पाठ्यक्रम की पुनःसंरचना करना ;

(ज) श्रवण शक्ति के ह्रास वाले विद्यार्थियों के फायदे के लिए उनके पाठ्यक्रम के भाग के रूप में केवल एक भाषा को लेने हेतु उन्हें सुकर बनाने के लिए पाठ्यक्रम की पुनःसंरचना करना ।

31. **शिक्षा संस्थाओं द्वारा दृष्टि से विकलांग विद्यार्थियों के लिए लेखकों की व्यवस्था का किया जाना** – सभी शिक्षा संस्थाएं, नेत्रहीन विद्यार्थियों या कमदृष्टि वाले विद्यार्थियों के लिए लेखकों की व्यवस्था करेंगी या करवाएंगी ।

अध्याय 6

नियोजन

32. **उन पदों का पता लगाया जाना जो नि:शक्त व्यक्तियों के लिए आरक्षित किए जा सकेंगे** – समुचित सरकारें –

(क) स्थापनों में, ऐसे पदों का पता लगाएंगी, जो नि:शक्त व्यक्तियों के लिए आरक्षित किए जा सकते हैं ;

(ख) तीन वर्ष से अनधिक नियतकालिक अन्तरालों पर पता लगाए गए पदों की सूची का पुनर्विलोकन करेंगी और प्रौद्योगिकी संबंधी विकासों को ध्यान में रखते हुए सूची को अद्यतन करेंगी ।

33. **पदों का आरक्षण** – प्रत्येक समुचित सरकार प्रत्येक स्थापन में नि:शक्त व्यक्तियों या व्यक्तियों के वर्ग के लिए, उतनी प्रतिशत रिक्तियां नियत करेंगी जो तीन प्रतिशत से कम न हों, जिसमें से प्रत्येक नि:शक्तता के लिए पता लगाए गए पदों में से एक प्रतिशत निम्नलिखित से ग्रस्त व्यक्तियों के लिए आरक्षित होगा, अर्थात् :-

(i) अंधता या कमदृष्टि ;

(ii) श्रवण शक्ति का ह्रास ; और

(iii) चलन नि:शक्तता या प्रमस्तिष्क घात :

परन्तु समुचित सरकार, किसी विभाग या स्थापन में किए जा रहे

कार्य की किस्म को ध्यान में रखते हुए, अधिसूचना द्वारा, ऐसी शर्तों के अधीन, यदि कोई हों, जो उक्त अधिसूचना में विनिर्दिष्ट की जाए, किसी स्थापन को इस धारा के उपबंधों से छूट दे सकेगी ।

34. **विशेष रोजगार कार्यालय** – (1) समुचित सरकार, अधिसूचना द्वारा, यह अपेक्षा कर सकेगी कि ऐसी तारीख से जो अधिसूचना द्वारा विनिर्दिष्ट की जाए, प्रत्येक स्थापन का नियोजक, नि:शक्त व्यक्तियों के लिए नियत ऐसी रिक्तियों के संबंध में जो उस स्थापन में हुई हैं या होने वाली हैं, ऐसे विशेष रोजगार कार्यालय को जो विहित किया जाए, ऐसी जानकारी या विवरणी भेजेगा जो विहित की जाएं और तब स्थापन ऐसी अध्यपेक्षा का पालन करेगा ।

(2) वह प्ररूप जिसमें और समय के वे अन्तराल जिनके लिए सूचना या विवरणी भेजी जाएगी और वे विशिष्टियां जो उनमें होंगी, ऐसी होंगी, जो विहित की जाएं ।

35. **किसी स्थापन के कब्जे में के अभिलेख या दस्तावेज की जांच करने की शक्ति** – विशेष रोजगार कार्यालय द्वारा लिखित रूप में प्राधिकृत व्यक्ति की किसी स्थापन के कब्जे में के किसी सुसंगत अभिलेख या दस्तावेज तक पहुंच होगी और वह किसी उचित समय पर और उन परिसरों में प्रवेश कर सकेगा, जहां उसे विश्वास है कि ऐसा अभिलेख या दस्तावेज होना चाहिए और उनका निरीक्षण कर सकेगा अथवा सुसंगत अभिलेख या दस्तावेजों की प्रतियां प्राप्त कर सकेगा या कोई जानकारी प्राप्त करने के लिए आवश्यक कोई प्रश्न पूछ सकेगा ।

36. **न भरी गई रिक्तियों का अग्रनीत किया जाना** – जहां किसी भर्ती वर्ष में धारा 33 के अधीन किसी रिक्ति को किसी उपयुक्त नि:शक्त व्यक्ति की अनुपलब्धता के कारण या किसी अन्य पर्याप्त कारण से भरा नहीं जा सकता है, वहां ऐसी रिक्ति अगले भर्ती वर्ष में अग्रनीत की जाएगी और यदि अगले भर्ती वर्ष में भी उपयुक्त नि:शक्त व्यक्ति उपलब्ध नहीं हैं, तो इसे पहले तीनों प्रवर्गों के बीच परस्पर परिवर्तन द्वारा भरा जा सकेगा और केवल तभी जब उस वर्ष में पद के लिए कोई नि:शक्त व्यक्ति उपलब्ध नहीं है, नियोजक, नि:शक्त व्यक्ति से भिन्न किसी अन्य व्यक्ति की नियुक्ति करके रिक्ति को भरेगा :

परन्तु यदि किसी स्थापन में रिक्तियों की प्रकृति ऐसी है कि किसी निश्चित प्रवर्ग के व्यक्ति को नियोजित नहीं किया जा सकता है, तो रिक्तियां समुचित सरकार के पूर्वानुमोदन से तीनों प्रवर्गों के बीच परस्पर परिवर्तित की जा सकेंगी ।

37. **नियोजकों द्वारा अभिलेखों का रखा जाना** – (1) प्रत्येक नियोजक, अपने स्थापन में नियोजित नि:शक्त व्यक्तियों के संबंध में ऐसा अभिलेख ऐसे प्ररूप में और ऐसी रीति से रखेगा जो समुचित सरकार द्वारा विहित की जाए ।

(2) उपधारा (1) के अधीन रखे गए अभिलेख, सभी उचित समयों पर, ऐसे व्यक्तियों द्वारा जो समुचित सरकार द्वारा, साधारण या विशेष आदेश द्वारा, इस निमित्त प्राधिकृत किए जाएं, निरीक्षण के लिए खुले रहेंगे ।

38. **नि:शक्त व्यक्तियों का नियोजन सुनिश्चित करने के लिए स्कीम** – समुचित सरकारें और स्थानीय प्राधिकारी, अधिसूचना द्वारा, नि:शक्त व्यक्तियों का नियोजन सुनिश्चित करने के लिए स्कीमें तैयार करेंगे और ऐसी स्कीमों में निम्नलिखित के लिए उपबंध किया जा सकेगा, अर्थात् :-

(क) नि:शक्त व्यक्तियों का प्रशिक्षण और उनका कल्याण ;

(ख) उच्चतर आयु सीमा का शिथिलीकरण ;

(ग) नियोजन का विनियमन ;

(घ) स्वास्थ्य और सुरक्षा के उपाय तथा ऐसे स्थानों पर जहां नि:शक्त व्यक्ति नियोजित किए जाते हैं, विकलांगता स्तर वातावरण का सृजन ;

(ङ) ऐसी रीति जिससे तथा ऐसे व्यक्ति जिनके द्वारा स्कीमों के प्रचालन की लागत चुकाई जाएगी ; और

(च) स्कीम के प्रशासन के लिए उत्तरदायी प्राधिकारी का गठन ।

39. **सभी शिक्षा संस्थाओं द्वारा नि:शक्त व्यक्तियों के लिए स्थानों का आरक्षित किया जाना** – सभी सरकारी शिक्षा संस्थाएं और अन्य

शैक्षिक संस्थाएं, जो सरकार से सहायता प्राप्त कर रही हैं, नि:शक्त व्यक्तियों के लिए कम से कम तीन प्रतिशत स्थान आरक्षित करेंगी ।

40. **गरीबी उन्मूलन स्कीमों में रिक्तियों का आरक्षित किया जाना** – समुचित सरकारें और स्थानीय प्राधिकारी, नि:शक्त व्यक्तियों के फायदे के लिए सभी गरीबी उन्मूलन स्कीमों में कम से कम तीन प्रतिशत आरक्षण करेंगे ।

41. **यह सुनिश्चित करने के लिए नियोजकों को प्रोत्साहन कि श्रमिक दल में पांच प्रतिशत नि:शक्त व्यक्ति हों** – समुचित सरकारें और स्थानीय प्राधिकारी, अपनी आर्थिक सामर्थ्य और विकास की सीमाओं के भीतर सार्वजनिक और प्राइवेट सेक्टर, दोनों में, नियोजकों को प्रोत्साहन देने का उपबन्ध करेंगे जिससे कि यह सुनिश्चित किया जा सके कि उनके श्रमिक दल में कम से कम पांच प्रतिशत व्यक्ति नि:शक्त हों ।

अध्याय 7

सकारात्मक कार्रवाई

42. **नि:शक्त व्यक्तियों को सहाय यंत्र और साधित्र** – समुचित सरकारें, नि:शक्त व्यक्तियों को, सहाय यंत्र और साधित्र उपलब्ध कराने के लिए स्कीमें, अधिसूचना द्वारा, बनाएंगी ।

43. **कतिपय प्रयोजनों के लिए भूमि के अधिमानी आबंटन के लिए स्कीमें** – समुचित सरकारें और स्थानीय अधिकारी, अधिसूचना द्वारा, नि:शक्त व्यक्तियों को रियायती दरों पर भूमि का निम्नलिखित के लिए अधिमानी आबंटन करने की स्कीमें बनाएंगे, अर्थात् :–

(क) गृह ;

(ख) कारबार की स्थापना ;

(ग) विशेष आमोद-प्रमोद केन्द्रों की स्थापना ;

(घ) विशेष विद्यालयों की स्थापना ;

(ङ) अनुसंधान केन्द्रों की स्थापना ;

(च) नि:शक्त उद्यमकर्ताओं द्वारा कारखानों की स्थापना ।

अध्याय 8

विभेद का न किया जाना

44. **परिवहन में विभेद का न किया जाना** – परिवहन सेक्टर के स्थापन, अपनी आर्थिक सामर्थ्य और विकास सीमाओं के भीतर, नि:शक्त व्यक्तियों के फायदे के लिए निम्नलिखित विशेष उपाय करेंगे, अर्थात् :–

(क) रेल के डिब्बों, बसों, जलयानों और वायुयानों को इस प्रकार अनुकूल बनाना जिससे कि ऐसे व्यक्ति उनमें सहज रूप से पहुंच सकें ;

(ख) रेल के डिब्बों, जलयानों, वायुयानों और प्रतीक्षागृहों में शौचालयों को इस प्रकार अनुकूल बनाना जिससे कि व्हील चेयर का प्रयोग करने वाले व्यक्ति उनका प्रयोग सुगमता से कर सकें ।

45. **सड़क पर विभेद का न किया जाना** – समुचित सरकारें और स्थानीय प्राधिकारी, अपनी आर्थिक सामर्थ्य और विकास की सीमाओं के भीतर, निम्नलिखित का उपबंध करेंगे, अर्थात् :-

(क) दृष्टिक असुविधाग्रस्त व्यक्तियों के फायदे के लिए सार्वजनिक सड़क पर लाल बत्तियों पर श्रवण संकेतों का प्रतिष्ठापन ;

(ख) व्हील चेयर का उपयोग करने वाले व्यक्तियों की सहज पहुंच के लिए किनारे काटना और पटरियों में ढलानें बनाना ;

(ग) दृष्टिहीन या कमदृष्टि वाले व्यक्तियों के लिए जैबरा क्रासिंग की सतह को उत्कीर्ण करना ;

(घ) दृष्टिहीन या कम दृष्टि वाले व्यक्तियों के लिए रेलवे प्लेटफार्म के किनारों को उत्कीर्ण करना ;

(ङ) नि:शक्तता के समुचित प्रतीकों को विकसित करना ;

(च) समुचित स्थानों पर चेतावनी संकेतों को लगाना ।

46. **निर्मित परिवेक्ष में विभेद का न किया जाना** – समुचित सरकारें और स्थानीय प्राधिकारी, अपनी आर्थिक सामर्थ्य और विकास की सीमाओं के भीतर, निम्नलिखित का उपबंध करेंगे, अर्थात् :–

(क) सार्वजनिक भवनों में ढलुवां रास्तों का उपबंध करना ;

(ख) शौचालयों को, व्हील चेयर का उपयोग करने वाले व्यक्तियों के अनुकूल बनाना ;

(ग) उत्थापकों और लिफ्टों में ब्रेल प्रतीकों और श्रवण संकेतों का उपबंध करना ;

(घ) अस्पतालों, प्राथमिक स्वास्थ्य केन्द्रों और अन्य चिकित्सीय देखभाल और पुनर्वास संस्थाओं में ढलुवां रास्तों का उपबंध करना ।

47. **सरकारी नियोजन में विभेद का न किया जाना** – (1) कोई स्थापन, ऐसे कर्मचारी को, जो सेवा के दौरान नि:शक्त हो जाता है, सेवोन्मुक्त या पंक्तिच्युत नहीं करेगा :

परन्तु यदि कोई कर्मचारी नि:शक्त हो जाने के पश्चात् उस पद के लिए जिसको वह धारण करता है, उपयुक्त नहीं रह जाता है, तो उसे, उसी वेतनमान और सेवा संबंधी फायदों वाले किसी अन्य पद पर स्थानांतरित किया जा सकेगा :

परन्तु यह और कि यदि किसी कर्मचारी को किसी पद पर समायोजित करना संभव नहीं है तो उसे समुचित पद उपलब्ध होने तक या उसके द्वारा अधिवर्षिता की आयु प्राप्त कर लेने तक, इनमें से जो भी पूर्वतर हो, किसी अधिसंख्य पद पर रखा जा सकेगा ।

(2) किसी व्यक्ति को, केवल उसकी नि:शक्तता के आधार पर प्रोन्नति से वंचित नहीं किया जाएगा :

परन्तु यह कि समुचित सरकार, किसी स्थापन में किए जा रहे कार्य के प्रकार को ध्यान में रखते हुए, अधिसूचना द्वारा और ऐसी शर्तों के अधीन रहते हुए, यदि कोई हों, जो ऐसी अधिसूचना में विहित की जाए, किसी स्थापन को इस धारा के उपबंधों से छूट दे सकेगी ।

अध्याय 9

अनुसंधान और जनशक्ति विकास

48. **अनुसंधान** – समुचित सरकारें और स्थानीय प्राधिकारी, अन्य

बातों के साथ-साथ, निम्नलिखित क्षेत्रों में अनुसंधान को संवर्धित और प्रायोजित करेंगे, अर्थात् :–

(क) नि:शक्तता निवारण;

(ख) पुनर्वास, जिसके अंतर्गत समुदाय आधारित पुनर्वास है;

(ग) सहायक युक्तियों का विकास जिसमें उनके मनोवैज्ञानिक सामाजिक पहलू सम्मिलित हैं;

(घ) कार्य के बारे में पता लगाना;

(ङ) कार्यालयों और कारखानों में स्थलों पर उपांतरण ।

49. **विश्वविद्यालयों को अनुसंधान कार्य करने में समर्थ बनाने के लिए वित्तीय प्रोत्साहन** – समुचित सरकारें, ऐसे विश्वविद्यालयों, उच्चतर विद्या की अन्य संस्थाओं, वृत्तिक निकायों और गैर सरकारी अनुसंधान इकाइयों या संस्थाओं को, विशेष शिक्षा, पुनर्वास और जनशक्ति विकास में अनुसंधान करने के लिए, वित्तीय सहायता उपलब्ध कराएंगी ।

अध्याय 10

नि:शक्त व्यक्तियों के लिए संस्थाओं को मान्यता

50. **सक्षम प्राधिकारी** – राज्य सरकार, किसी प्राधिकारी को, जिसे वह इस अधिनियम के प्रयोजनों के लिए सक्षम प्राधिकारी होने के लिए ठीक समझे, नियुक्त करेगी ।

51. **किसी व्यक्ति द्वारा नि:शक्त व्यक्तियों के लिए किसी संस्था की स्थापना या उसका अनुरक्षण रजिस्ट्रीकरण प्रमाणपत्र के अनुसार ही, किया जाना अन्यथा नहीं** – इस अधिनियम के अधीन जैसा अन्यथा उपबंधित है उसके सिवाय, कोई भी व्यक्ति, नि:शक्त व्यक्तियों के लिए किसी संस्था की स्थापना या उसका अनुरक्षण इस निमित्त सक्षम प्राधिकारी द्वारा जारी किए गए रजिस्ट्रीकरण प्रमाणपत्र के अधीन और उसके अनुसार ही करेगा, अन्यथा नहीं :

परन्तु यह कि ऐसा व्यक्ति जो इस अधिनियम के प्रारंभ के ठीक पूर्व नि:शक्त व्यक्तियों के लिए किसी संस्था का अनुरक्षण कर रहा है, ऐसे प्रारंभ से छह मास की अवधि के लिए ऐसी संस्था का अनुरक्षण

चालू रख सकेगा और यदि उसने उक्त छह मास की अवधि के भीतर ऐसे प्रमाणपत्र के लिए आवेदन किया है तो ऐसे आवेदन के निपटाए जाने तक संस्था का अनुरक्षण चालू रख सकेगा ।

52. **रजिस्ट्रीकरण प्रमाणपत्र** - (1) रजिस्ट्रीकरण प्रमाणपत्र के लिए प्रत्येक आवेदन, सक्षम प्राधिकारी को ऐसे प्ररूप में और ऐसी रीति से किया जाएगा, जो राज्य सरकार द्वारा विहित की जाए ।

(2) उपधारा (1) के अधीन आवेदन की प्राप्ति पर, सक्षम प्राधिकारी, ऐसी जांच करेगा जो वह ठीक समझे और जहां उसका यह समाधान हो जाता है कि आवेदक ने इस अधिनियम और इसके अधीन बनाए गए नियमों की अपेक्षाओं का अनुपालन किया है वहां वह आवेदक को रजिस्ट्रीकरण प्रमाणपत्र देगा और जहां सक्षम प्राधिकारी का इस प्रकार समाधान नहीं होता है वहां वह, आदेश द्वारा, ऐसा प्रमाणपत्र देने से, जिसके लिए आवेदन किया जाता है, इनकार करेगा :

परन्तु प्रमाणपत्र देने से इनकार करने का कोई आदेश करने के पूर्व, सक्षम प्राधिकारी, आवेदक को सुनवाई का उचित अवसर देगा और प्रमाणपत्र देने से इंकार करने का प्रत्येक आदेश, आवेदक को ऐसी रीति से, जो राज्य सरकार द्वारा विहित की जाए, संसूचित किया जाएगा ।

(3) उपधारा (2) के अधीन रजिस्ट्रीकरण प्रमाणपत्र तब तक नहीं दिया जाएगा जब तक वह संस्था, जिसके बारे में आवेदन किया गया है, ऐसी सुविधाएं देने तथा ऐसे स्तरमान बनाए रखने की स्थिति में है जो राज्य सरकार द्वारा विहित किए जाएं ।

(4) इस धारा के अधीन दिया गया रजिस्ट्रीकरण प्रमाणपत्र, –

(क) जब तक धारा 53 के अधीन प्रतिसंहृत नहीं किया जाता है, उस अवधि के लिए प्रवृत्त बना रहेगा जो राज्य सरकार द्वारा विहित की जाए;

(ख) वैसी ही अवधि के लिए समय-समय पर नवीकृत किया जा सकेगा; और

(ग) ऐसे प्ररूप में होगा और ऐसी शर्तों के अधीन होगा, जो

राज्य सरकार द्वारा विहित की जाएं ।

(5) रजिस्ट्रीकरण प्रमाणपत्र के नवीकरण के लिए आवेदन, विधिमान्यता की अवधि के कम से कम साठ दिन पूर्व किया जाएगा ।

(6) रजिस्ट्रीकरण प्रमाणपत्र, संस्था द्वारा किसी सहजदृश्य स्थान पर प्रदर्शित किया जाएगा ।

53. **प्रमाणपत्र का प्रतिसंहरण** – (1) यदि सक्षम प्राधिकारी के पास यह विश्वास करने का युक्तियुक्त हेतुक है कि धारा 52 की उपधारा (2) के अधीन दिए रजिस्ट्रीकरण प्रमाणपत्र के धारक ने, –

(क) प्रमाणपत्र जारी करने या नवीकरण के किसी आवेदन के संबंध में ऐसा कथन किया है जो तात्विक विशिष्टियों में गलत या मिथ्या है; या

(ख) नियमों या किन्हीं ऐसी शर्तों को भंग किया है या भंग करवाया है, जिनके अधीन प्रमाणपत्र दिया गया था,

तो वह ऐसी जांच करने के पश्चात्, जो वह ठीक समझे, आदेश द्वारा, प्रमाणपत्र को प्रतिसंहृत कर सकेगा :

परन्तु ऐसा कोई आदेश तब तक नहीं किया जाएगा जब तक प्रमाणपत्र के धारक को हेतुक दर्शित करने का ऐसा अवसर नहीं दे दिया जाता है कि प्रमाणपत्र क्यों न प्रतिसंहृत किया जाए ।

(2) जहां किसी संस्था की बाबत, प्रमाणपत्र उपधारा (1) के अधीन प्रतिसंहृत किया गया है वहां ऐसी संस्था, ऐसे प्रतिसंहरण की तारीख से कृत्य करना बंद कर देगी :

परन्तु जहां कोई अपील, प्रतिसंहरण के आदेश के विरुद्ध धारा 54 के अधीन की जाती है वहां ऐसी संस्था, –

(क) जहां कोई अपील नहीं की गई है वहां, ऐसी अपील फाइल किए जाने के लिए विहित की गई अवधि की समाप्ति पर तुरन्त, या

(ख) जहां ऐसी अपील की गई है किन्तु प्रतिसंहरण के आदेश को मान्य ठहराया गया है वहां, अपील के आदेश की तारीख से,

कृत्य करना बन्द कर देगी ।

(3) किसी संस्था की बाबत किसी प्रमाणपत्र के प्रतिसंहरण पर, सक्षम प्राधिकारी, यह निदेश दे सकेगा कि कोई नि:शक्त व्यक्ति, जो ऐसे प्रतिसंहरण की तारीख को ऐसी संस्था का वासी है, –

(क) यथास्थिति, उसके माता-पिता, पति या पत्नी या विधिक संरक्षण की अभिरक्षा में दे दिया जाएगा, या

(ख) सक्षम प्राधिकारी द्वारा विनिर्दिष्ट किसी अन्य संस्था को अंतरित कर दिया जाएगा ।

(4) प्रत्येक संस्था, जो ऐसा रजिस्ट्रीकरण प्रमाणपत्र धारण करती है जो इस धारा के अधीन प्रतिसंहृत किया जाता है, ऐसे प्रतिसंहरण के तुरन्त पश्चात् ऐसा प्रमाणपत्र सक्षम प्राधिकारी को अभ्यर्पित करेगी ।

54. **अपील** – (1) सक्षम प्राधिकारी द्वारा प्रमाणपत्र देने से इंकार करने से या प्रमाणपत्र का प्रतिसंहरण किए जाने से व्यथित व्यक्ति, ऐसी अवधि के भीतर जो राज्य सरकार द्वारा विहित की जाए, ऐसे इंकार या प्रतिसंहरण के विरुद्ध उस सरकार को अपील कर सकेगा ।

(2) ऐसी अपील पर राज्य सरकार का आदेश अंतिम होगा ।

55. **केन्द्रीय या राज्य सरकार द्वारा स्थापित या अनुरक्षित संस्थाओं को अधिनियम का लागू न होना** – इस अध्याय की कोई बात, केन्द्रीय सरकार या किसी राज्य सरकार द्वारा स्थापित या अनुरक्षित नि:शक्त व्यक्तियों के लिए किसी संस्था को लागू नहीं होगी ।

अध्याय 11

गंभीर रूप से नि:शक्त व्यक्तियों के लिए संस्था

56. **गंभीर रूप से नि:शक्त व्यक्तियों के लिए संस्थाएं** – (1) समुचित सरकार, ऐसे स्थानों पर जो वह ठीक समझे, गंभीर रूप से नि:शक्त व्यक्तियों के लिए संस्थाओं की स्थापना और उनका अनुरक्षण कर सकेगी ।

(2) जहां समुचित सरकार की यह राय है कि उपधारा (1) के

अधीन स्थापित किसी संस्था से भिन्न कोई संस्था, गंभीर रूप से नि:शक्त व्यक्तियों के पुनर्वास के लिए ठीक है वहां सरकार, ऐसी संस्था को इस अधिनियम के प्रयोजनों के लिए गंभीर रूप से नि:शक्त व्यक्तियों के लिए संस्था के रूप में मान्यता दे सकेगी :

परन्तु इस धारा के अधीन किसी संस्था को तब तक मान्यता नहीं दी जाएगी जब तक ऐसी संस्था ने इस अधिनियम और इसके अधीन बनाए गए नियमों की अपेक्षाओं का अनुपालन न किया हो ।

(3) उपधारा (1) के अधीन स्थापित प्रत्येक संस्था, ऐसी रीति से अनुरक्षित की जाएगी और ऐसी शर्तों को पूरा करेगी जो समुचित सरकार द्वारा विहित की जाएं ।

(4) इस धारा के प्रयोजनों के लिए, "गंभीर रूप से नि:शक्त व्यक्ति" से ऐसा व्यक्ति अभिप्रेत है जो अस्सी प्रतिशत या अधिक की एक या अधिक नि:शक्तताओं से ग्रस्त है ।

अध्याय 12

नि:शक्त व्यक्तियों के लिए मुख्य आयुक्त और आयुक्त

57. **नि:शक्त व्यक्तियों के लिए मुख्य आयुक्त की नियुक्ति** – (1) केन्द्रीय सरकार, अधिसूचना द्वारा, इस अधिनियम के प्रयोजनों के लिए नि:शक्त व्यक्तियों के लिए मुख्य आयुक्त, नियुक्त कर सकेगी ।

(2) कोई व्यक्ति, मुख्य आयुक्त के रूप में नियुक्ति के लिए तभी अर्हित होगा जब उसके पास पुनर्वास से संबंधित विषयों की बाबत विशेष ज्ञान या व्यावहारिक अनुभव हो ।

(3) मुख्य आयुक्त को संदेय वेतन और भत्ते तथा उसकी सेवा के अन्य निबंधन और शर्तें (जिनके अंतर्गत पेंशन, उपदान और अन्य सेवानिवृत्ति फायदे हैं) ऐसी होंगी, जो केन्द्रीय सरकार द्वारा विहित की जाएं ।

(4) केन्द्रीय सरकार, मुख्य आयुक्त को उसके कृत्यों के निर्वहन में सहायता करने के लिए अपेक्षित अधिकारियों और अन्य कर्मचारियों के प्रकार और प्रवर्ग अवधारित करेगी और मुख्य आयुक्त को ऐसे अधिकारी

और अन्य कर्मचारी उपलब्ध कराएगी, जो वह ठीक समझे ।

(5) मुख्य आयुक्त को उपलब्ध कराए गए अधिकारी और कर्मचारी अपने कृत्यों का निर्वहन मुख्य आयुक्त के साधारण अधीक्षण के अधीन करेंगे ।

(6) मुख्य आयुक्त को उपलब्ध कराए गए अधिकारियों और कर्मचारियों के वेतन और भत्ते तथा उनकी सेवा की अन्य शर्तें ऐसी होंगी, जो केन्द्रीय सरकार द्वारा विहित की जाएं ।

58. **मुख्य आयुक्त के कृत्य** – मुख्य आयुक्त, –

(क) आयुक्तों के कार्य का समन्वय करेगा;

(ख) केन्द्रीय सरकार द्वारा संवितरित निधियों के उपयोग को मानीटर करेगा;

(ग) नि:शक्त व्यक्तियों के अधिकारों और उनको उपलब्ध कराई गई सुविधाओं के संरक्षण के लिए कदम उठाएगा;

(घ) अधिनियम के कार्यान्वयन के संबंध में केन्द्रीय सरकार को ऐसे अंतरालों पर, जो वह सरकार विहित करे, रिपोर्टें प्रस्तुत करेगा ।

59. **नि:शक्त व्यक्तियों के अधिकारों से वंचित किए जाने के संबंध में परिवादों की मुख्य आयुक्त द्वारा जांच किया जाना** – धारा 58 के उपबंधों पर प्रतिकूल प्रभाव डाले बिना, मुख्य आयुक्त, स्वप्रेरणा से या किसी व्यक्ति के आवेदन पर या अन्यथा, –

(क) नि:शक्त व्यक्तियों के अधिकारों से वंचित किए जाने,

(ख) समुचित सरकारों और स्थानीय प्राधिकारियों द्वारा नि:शक्त व्यक्तियों के कल्याण और उनके अधिकारों के संरक्षण के लिए बनाई गई विधियों, नियमों, उपविधियों, विनियमों, जारी किए गए कार्यपालक आदेशों, मार्गदर्शक सिद्धांतों या अनुदेशों के कार्यान्वित न किए जाने, से संबंधित मामलों के संबंध में परिवादों की जांच कर सकेगा और मामले को समुचित प्राधिकारियों के समक्ष उठा सकेगा ।

60. **नि:शक्त व्यक्तियों के लिए आयुक्तों की नियुक्ति** – (1) प्रत्येक राज्य सरकार, अधिसूचना द्वारा, इस अधिनियम के प्रयोजनों के लिए, नि:शक्त व्यक्तियों के लिए आयुक्त, नियुक्त कर सकेगी ।

(2) कोई व्यक्ति, आयुक्त के रूप में नियुक्ति के लिए तभी अर्हित होगा जब उसके पास पुनर्वास से संबंधित विषयों की बाबत विशेष ज्ञान या व्यावहारिक अनुभव हो ।

(3) आयुक्त को संदेय वेतन और भत्ते तथा उसकी सेवा के अन्य निर्बंधन और शर्तें (जिनके अंतर्गत पेंशन, उपदान और अन्य सेवानिवृत्ति फायदे हैं) ऐसी होंगी जो राज्य सरकार द्वारा विहित की जाएं ।

(4) राज्य सरकार, आयुक्त को उसके कृत्यों के निर्वहन में सहायता करने के लिए अपेक्षित अधिकारियों और अन्य कर्मचारियों के प्रकार और प्रवर्ग अवधारित करेगी और आयुक्त को ऐसे अधिकारी और अन्य कर्मचारी उपलब्ध कराएगी, जो वह ठीक समझे ।

(5) आयुक्त को उपलब्ध कराए गए अधिकारी और कर्मचारी अपने कृत्यों का निर्वहन आयुक्त के साधारण अधीक्षण के अधीन करेंगे ।

(6) आयुक्त को उपलब्ध कराए गए अधिकारियों और कर्मचारियों के वेतन और भत्ते तथा उनकी सेवा की अन्य शर्तें वे होंगी, जो राज्य सरकार द्वारा विहित की जाएं ।

61. **आयुक्त की शक्तियां** – आयुक्त, राज्य के भीतर, –

(क) नि:शक्त व्यक्तियों के फायदे के लिए कार्यक्रमों और स्कीमों के संबंध में राज्य सरकार के विभागों से समन्वय करेगा;

(ख) राज्य सरकार द्वारा संवितरित निधियों के उपयोग को मानीटर करेगा;

(ग) नि:शक्त व्यक्तियों के अधिकारों और उनको उपलब्ध कराई गई सुविधाओं के संरक्षण के लिए कदम उठाएगा ।

(घ) अधिनियम के कार्यान्वयन के संबंध में राज्य सरकार को ऐसे अंतरालों पर, जो वह सरकार विहित करे, रिपोर्ट प्रस्तुत करेगा और उसकी एक प्रति मुख्य आयुक्त को अग्रेषित करेगा ।

62. **नि:शक्त व्यक्तियों के अधिकारों से वंचित किए जाने से संबंधित मामलों के संबंध में, परिवादों की आयुक्त द्वारा जांच किया जाना** – धारा 61 के उपबंधों पर प्रतिकूल प्रभाव डाले बिना, आयुक्त, स्वप्रेरणा से या किसी व्यथित व्यक्ति के आवेदन पर या अन्यथा, –

(क) नि:शक्त व्यक्तियों के अधिकारों से वंचित किए जाने,

(ख) समुचित सरकारों और स्थानीय प्राधिकारियों द्वारा नि:शक्त व्यक्तियों के कल्याण और उनके अधिकारों के संरक्षण के लिए बनाई गई विधियों, नियमों, उपविधियों, विनियमों, जारी किए गए कार्यपालक आदेशों, मार्गदर्शक सिद्धांतों या अनुदेशों के कार्यान्वित न किए जाने,

से संबंधित मामलों के संबंध में परिवादों की जांच कर सकेगा और मामले को समुचित प्राधिकारियों के समक्ष उठा सकेगा ।

63. **प्राधिकारियों और अधिकारियों को सिविल न्यायालय की कतिपय शक्तियों का होना** – (1) मुख्य आयुक्त और आयुक्तों को, इस अधिनियम के अधीन उनके कृत्यों के निर्वहन के प्रयोजन के लिए, निम्नलिखित विषयों की बाबत वही शक्तियां होंगी जो सिविल प्रक्रिया संहिता, 1908 (1908 का 5) के अधीन किसी वाद का विचारण करते समय, किसी न्यायालय में निहित होती हैं, अर्थात् :–

(क) साक्षियों को समन करना और हाजिर कराना;

(ख) किसी दस्तावेज के प्रकटीकरण और पेश किए जाने की अपेक्षा करना;

(ग) किसी न्यायालय या कार्यालय से किसी लोक अभिलेख या उसकी प्रति की अपेक्षा करना;

(घ) शपथपत्रों पर साक्ष्य ग्रहण करना; और

(ङ) साक्षियों या दस्तावेजों की परीक्षा के लिए कमीशन निकालना ।

(2) मुख्य आयुक्त और आयुक्तों के समक्ष प्रत्येक कार्यवाही, भारतीय दंड संहिता (1860 का 45) की धारा 193 और धारा 228 के

अर्थ में न्यायिक कार्यवाही होगी और मुख्य आयुक्त, आयुक्त, सक्षम प्राधिकारी को दंड प्रक्रिया संहिता, 1973 (1974 का 2) की धारा 195 और अध्याय 26 के प्रयोजनों के लिए सिविल न्यायालय समझा जाएगा ।

64. **वार्षिक रिपोर्ट का मुख्य आयुक्त द्वारा तैयार किया जाना** – (1) मुख्य आयुक्त, ऐसे प्ररूप में और ऐसे समय पर, जो केन्द्रीय सरकार द्वारा विहित किया जाए, प्रत्येक वित्तीय वर्ष के लिए, पूर्ववर्ती वित्तीय वर्ष के दौरान अपने क्रियाकलापों का पूर्ण विवरण देते हुए एक वार्षिक रिपोर्ट तैयार करेगा और उसकी एक प्रति केन्द्रीय सरकार को अग्रेषित करेगा ।

(2) केन्द्रीय सरकार, वार्षिक रिपोर्ट को, संसद् के प्रत्येक सदन के समक्ष रखवाएगी जिसके साथ उसमें की गई सिफारिशों पर, जहां तक कि वे केन्द्रीय सरकार से संबंधित हैं, की गई या किए जाने के लिए प्रस्तावित कार्रवाई और ऐसी किसी सिफारिश या उसके भाग की अस्वीकृति के कारणों को, कोई हो, स्पष्ट करने वाली सिफारिशें होंगी ।

65. **वार्षिक रिपोर्टों का आयुक्तों द्वारा तैयार किया जाना** – (1) आयुक्त, ऐसे प्ररूप में और ऐसे समय पर, जो राज्य सरकार द्वारा विहित किया जाए, प्रत्येक वित्तीय वर्ष के लिए, पूर्ववर्ती वित्तीय वर्ष के दौरान अपने क्रियाकलापों का पूर्ण विवरण देते हुए एक वार्षिक रिपोर्ट तैयार करेगा और उसकी एक प्रति राज्य सरकार को अग्रेषित करेगा ।

(2) राज्य सरकार, वार्षिक रिपोर्ट को, राज्य विधान-मंडल के समक्ष रखवाएगी जिसके साथ उसमें की गई सिफारिशों पर, जहां तक कि वे राज्य सरकार से संबंधित हैं, की गई या किए जाने के लिए प्रस्तावित कार्रवाई और ऐसी किसी सिफारिश या उसके भाग की, यदि कोई हों, स्वीकार न किए जाने के कारणों को स्पष्ट करने वाली सिफारिशें होंगी ।

अध्याय 13

सामाजिक सुरक्षा

66. **समुचित सरकारों और स्थानीय प्राधिकारियों द्वारा पुनर्वास कार्य किया जाना** – (1) समुचित सरकारें और स्थानीय प्राधिकारी, अपनी आर्थिक क्षमता और विकास की सीमाओं के भीतर सभी नि:शक्त

व्यक्तियों का पुनर्वास करेंगे या कराएंगे ।

(2) उपधारा (1) के प्रयोजनों के लिए, समुचित सरकारें और स्थानीय प्राधिकारी, गैर सरकारी संगठनों को वित्तीय सहायता प्रदान करेंगे ।

(3) समुचित सरकारें और स्थानीय प्राधिकारी, पुनर्वास नीतियां बनाते समय, नि:शक्त व्यक्तियों के लिए कार्य कर रहे गैर-सरकारी संगठनों से परामर्श करेंगे ।

67. **नि:शक्त कर्मचारियों के लिए बीमा स्कीम** - (1) समुचित सरकार, अपने नि:शक्त कर्मचारियों के फायदे के लिए एक बीमा स्कीम, अधिसूचना द्वारा, बनाएगी ।

(2) इस धारा में किसी बात के होते हुए भी, समुचित सरकार, कोई बीमा स्कीम बनाने के बदले, अपने नि:शक्त कर्मचारियों के लिए एक आनुकल्पिक सुरक्षा स्कीम बना सकेगी ।

68. **बेरोजगारी भत्ता** – समुचित सरकारें, अपनी आर्थिक क्षमता और विकास की सीमाओं के भीतर, ऐसे नि:शक्त व्यक्तियों के लिए, जो विशेष रोजगार कार्यालय में दो वर्ष से अधिक समय से रजिस्ट्रीकृत हैं और जिन्हें किसी लाभप्रद उपजीविका में नहीं लगाया जा सका है, बेरोजगार भत्ता के संदाय के लिए एक स्कीम, अधिसूचना द्वारा, बनाएंगी ।

अध्याय 14

प्रकीर्ण

69. **नि:शक्त व्यक्तियों के लिए आशयित किसी फायदे का कपटपूर्वक उपभोग करने के लिए दंड** – जो कोई, नि:शक्त व्यक्तियों के लिए आशयित किसी फायदे का कपटपूर्वक उपभोग करेगा या उपभोग करने का प्रयत्न करेगा, वह कारावास से, जिसकी अवधि दो वर्ष तक की हो सकेगी, या जुर्माने से, जो बीस हजार रुपए तक का हो सकेगा, या दोनों से दंडनीय होगा ।

70. **मुख्य आयुक्त, आयुक्तों, अधिकारियों और अन्य कर्मचारिवृन्द**

का लोक सेवक होना – मुख्य आयुक्त, आयुक्तों तथा उनको उपलब्ध कराए गए अन्य अधिकारियों और कर्मचारिवृन्द को भारतीय दंड संहिता (1860 का 45) की धारा 21 के अर्थ में लोक सेवक समझा जाएगा ।

71. **सद्भावपूर्वक की गई कार्रवाई के लिए संरक्षण** – इस अधिनियम और इसके अधीन बनाए गए किन्हीं नियमों या आदेशों के अनुसरण में सद्भावपूर्वक की गई या की जाने के लिए आशयित किसी बात के लिए भी वाद, अभियोजन या अन्य विधिक कार्यवाही केन्द्रीय सरकार, राज्य सरकारों या स्थानीय प्राधिकारियों या सरकार के किसी अधिकारी के विरुद्ध नहीं होगी ।

72. **अधिनियम का किसी अन्य विधि के अतिरिक्त होना न कि उसके अल्पीकरण में** – इस अधिनियम या इसके अधीन बनाए गए नियमों के उपबंध, तत्समय प्रवृत्त किसी अन्य विधि के या नि:शक्त व्यक्तियों के फायदे के लिए अधिनियमित या जारी किए गए किन्हीं नियमों, आदेश या इसके अधीन जारी किए गए किन्हीं अनुदेशों के अतिरिक्त होंगे, न कि उनके अल्पीकरण में ।

73. **नियम बनाने की समुचित सरकार की शक्ति** – (1) समुचित सरकार, इस अधिनियम के उपबंधों को कार्यान्वित करने के लिए नियम, अधिसूचना द्वारा, बना सकेगी ।

(2) विशिष्टतया और पूर्वगामी शक्तियों की व्यापकता पर प्रतिकूल प्रभाव डाले बिना, ऐसे नियमों में निम्नलिखित सभी या किन्हीं विषयों के लिए उपबंध किया जा सकेगा, अर्थात् :–

(क) वह रीति, जिससे, किसी राज्य सरकार या संघ राज्यक्षेत्र को धारा 3 की उपधारा (2) के खंड (ठ) के अधीन चुना जाएगा;

(ख) वे भत्ते जो सदस्य धारा 4 की उपधारा (7) के अधीन प्राप्त करेंगे;

(ग) प्रक्रिया के वे नियम, जिनका केन्द्रीय समन्वयन समिति धारा 7 के अधीन अपने अधिवेशनों में कारबार के संव्यवहार के संबंध में पालन करेगी;

(घ) ऐसे अन्य कृत्य, जिन्हें केन्द्रीय समन्वयन समिति धारा 8 की उपधारा (2) के खंड (ज) के अधीन कर सकेगी;

(ङ) वह रीति जिससे, किसी राज्य सरकार या संघ राज्यक्षेत्र को धारा 9 की उपधारा (2) के खंड (ज) के अधीन चुना जाएगा;

(च) वे भत्ते, जो सदस्य धारा 9 की उपधारा (3) के अधीन प्राप्त करेंगे;

(छ) प्रक्रिया के वे नियम, जिनका केन्द्रीय कार्यपालिका समिति धारा 11 के अधीन अपने अधिवेशनों में कारबार के संव्यवहार के संबंध में पालन करेगी;

(ज) वह रीति और वे प्रयोजन, जिनके लिए किसी व्यक्ति को धारा 12 की उपधारा (1) के अधीन सहयुक्त किया जा सकेगा;

(झ) वे फीस और भत्ते, जिन्हें केन्द्रीय कार्यपालिका समिति से सहयुक्त कोई व्यक्ति धारा 12 की उपधारा (3) के अधीन प्राप्त करेगा;

(ञ) वे भत्ते, जो सदस्य धारा 14 की उपधारा (7) के अधीन प्राप्त करेंगे;

(ट) प्रक्रिया के वे नियम, जिनका राज्य समन्वयन समिति धारा 17 के अधीन अपने अधिवेशनों में कारबार के संव्यवहार के संबंध में पालन करेगी;

(ठ) ऐसे अन्य कृत्य, जिन्हें राज्य समन्वयन समिति धारा 18 की उपधारा (2) के खंड (छ) के अधीन कर सकेगी;

(ड) वे भत्ते, जो सदस्य धारा 19 की उपधारा (3) के अधीन प्राप्त करेंगे;

(ढ) प्रक्रिया के वे नियम, जिनका राज्य कार्यपालिका समिति धारा 21 के अधीन अपने अधिवेशनों में कारबार के संव्यवहार के संबंध में पालन करेगी;

(ण) वह रीति और वे प्रयोजन, जिनके लिए किसी व्यक्ति को

धारा 22 की उपधारा (1) के अधीन सहयुक्त किया जा सकेगा;

(त) वे फीस और भत्ते, जिन्हें राज्य कार्यपालिका समिति से सहयुक्त कोई व्यक्ति धारा 22 की उपधारा (3) के अधीन प्राप्त कर सकेगा;

(थ) वह जानकारी या विवरणी, जो प्रत्येक स्थापन में के नियोजक को देनी होगी और वह विशेष रोजगार कार्यालय जिसको ऐसी जानकारी या विवरणी धारा 34 की उपधारा (1) के अधीन दी जाएगी;

(द) वह प्ररूप जिसमें, और वह रीति, जिससे, अभिलेख किसी नियोजक द्वारा धारा 37 की उपधारा (1) के अधीन रखा जाएगा;

(ध) वह प्ररूप जिसमें, और वह रीति जिससे, धारा 52 की उपधारा (1) के अधीन आवेदन किया जाएगा;

(न) वह रीति जिससे, इंकार करने का आदेश, धारा 52 की उपधारा (2) के अधीन संसूचित किया जाएगा;

(प) ऐसी सुविधाएं या स्तरमान, जो धारा 52 की उपधारा (3) के अधीन दी जानी या बनाए रखी जानी अपेक्षित हैं;

(फ) वह अवधि, जिसके लिए रजिस्ट्रीकरण प्रमाणपत्र धारा 52 की उपधारा (4) के खंड (क) के अधीन विधिमान्य होगा;

(ब) वह प्ररूप, जिसमें और वे शर्तें जिनके अधीन रजिस्ट्रीकरण प्रमाणपत्र, धारा 52 की उपधारा (4) के खंड (ग) के अधीन किया जाएगा;

(भ) वह अवधि, जिसके भीतर कोई अपील धारा 54 की उपधारा (1) के अधीन की जाएगी;

(म) वह रीति जिससे, गंभीर रूप से नि:शक्त व्यक्तियों के लिए कोई संस्था धारा 56 की उपधारा (3) के अधीन अनुरक्षित की जाएगी और वे शर्तें जिन्हें पूरा किया जाएगा;

(य) धारा 57 की उपधारा (3) के अधीन मुख्य आयुक्त के

वेतन, भत्ते तथा उसकी सेवा के अन्य निबंधन और शर्तें;

(यक) धारा 57 की उपधारा (6) के अधीन अधिकारियों और कर्मचारियों के वेतन, भत्ते और उनकी सेवा की अन्य शर्तें;

(यख) वे अंतराल, जिन पर मुख्य आयुक्त धारा 58 के खंड (घ) के अधीन केन्द्रीय सरकार को रिपोर्ट देगा;

(यग) धारा 60 की उपधारा (3) के अधीन आयुक्त के वेतन, भत्ते तथा उसकी सेवा के अन्य निबंधन और शर्तें;

(यघ) धारा 60 की उपधारा (6) के अधीन अधिकारियों और कर्मचारियों के वेतन, भत्ते और उनकी सेवा की अन्य शर्तें;

(यङ) वे अंतराल जिनके भीतर आयुक्त धारा 61 के खंड (घ) के अधीन राज्य सरकार को रिपोर्ट देगा;

(यच) वह प्ररूप जिसमें और वह समय जब वार्षिक रिपोर्ट धारा 64 की उपधारा (1) के अधीन तैयार की जाएगी;

(यछ) वह प्ररूप, जिसमें और वह समय जब वार्षिक रिपोर्ट धारा 65 की उपधारा (1) के अधीन तैयार की जाएगी;

(यज) कोई अन्य विषय, जो विहित किया जाना अपेक्षित है या विहित किया जाए ।

(3) केन्द्रीय सरकार द्वारा धारा 33 के परन्तुक, धारा 47 की उपधारा (2) के परन्तुक के अधीन बनाई गई प्रत्येक अधिसूचना, उसके द्वारा धारा 27, धारा 30, धारा 38 की उपधारा (1), धारा 42, धारा 43, धारा 67, धारा 68 के अधीन बनाई गई प्रत्येक स्कीम और उसके द्वारा उपधारा (1) के अधीन बनाया गया प्रत्येक नियम, बनाए जाने के पश्चात् यथाशीघ्र, संसद् के प्रत्येक सदन के समक्ष, जब वह सत्र में हो, कुल तीस दिन की अवधि के लिए रखा जाएगा । यह अवधि एक सत्र में अथवा दो या अधिक आनुक्रमिक सत्रों में पूरी हो सकेगी । यदि उस सत्र के या पूर्वोक्त आनुक्रमिक सत्रों के ठीक बाद के सत्र के अवसान के पूर्व दोनों सदन उस नियम, अधिसूचना या स्कीम में कोई परिवर्तन करने के लिए सहमत हो जाएं तो तत्पश्चात् वह ऐसे परिवर्तित रूप में ही प्रभावी

होगी । यदि उक्त अवसान के पूर्व दोनों सदन सहमत हो जाएं कि वह नियम, अधिसूचना या स्कीम नहीं बनाई जानी चाहिए तो तत्पश्चात् वह निप्रभाव हो जाएगी । किन्तु नियम, अधिसूचना या स्कीम के ऐसे परिवर्तित या निप्रभाव होने से उसके अधीन पहले की गई किसी बात की विधिमान्यता पर प्रतिकूल प्रभाव नहीं पड़ेगा ।

(4) राज्य सरकार द्वारा धारा 33 के परन्तुक, धारा 47 की उपधारा (2) के परन्तुक के अधीन बनाई गई प्रत्येक अधिसूचना, उसके द्वारा धारा 27, धारा 30, धारा 38 की उपधारा (1), धारा 42, धारा 43, धारा 67, धारा 68 के अधीन बनाई गई प्रत्येक स्कीम और उसके द्वारा उपधारा (1) के अधीन बनाया गया प्रत्येक नियम, बनाए जाने के पश्चात्, यथाशीघ्र, जहां विधान-मंडल दो सदनों से मिलकर बनता है वहां प्रत्येक सदन के समक्ष, या जहां ऐसा विधान-मंडल एक सदन से मिलकर बनता है वहां उस सदन के समक्ष, रखा जाएगा ।

*[74. **1987 के अधिनियम 39 का संशोधन** – विधिक सेवा प्राधिकरण अधिनियम, 1987 की धारा 12 के खंड (घ) के स्थान पर निम्नलिखित खंड रखा जाएगा, अर्थात् :–

"(घ) नि:शक्त व्यक्ति (समान अवसर, अधिकार, संरक्षण और पूर्ण भागीदारी) अधिनियम, 1995 की धारा 2 के खंड (न) में परिभाषित नि:शक्त व्यक्ति है;" ।]

---

* 2001 के अधिनियम सं. 30 की धारा 2 और अनुसूची द्वारा निरसित ।

विधि साहित्य प्रकाशन द्वारा प्रकाशित और विक्रयार्थ उपलब्ध पाठ्य पुस्तकों की सूची

क्रम सं.	पुस्तक का नाम, लेखक का नाम एवं प्रकाशन वर्ष (संस्करण)	पृष्ठ सं.	पुस्तक की मूल मुद्रित कीमत (रुपयों में)	विशेष छूट के पश्चात् पुस्तक की कीमत (रुपयों में)
1.	विधि शास्त्र – डा. शिवदत्त शर्मा – 2004	501	580	145
2.	निर्णय लेखन – न्या. भगवती प्रसाद बेरी – 2019	190	175	–
3.	भारत का सांविधानिक इतिहास - (103वां संविधान संशोधन तक) - श्री चन्द्रशेखर मिश्र	340	325	–
4.	भारतीय संविधान के प्रमुख तत्व - डा. प्रद्युम्न कुमार त्रिपाठी	906	750	–

अन्य महत्वपूर्ण प्रकाशन

1. निर्वाचन विधि निर्देशिका (भाग-1 तथा भाग-2)	नवीनतम संस्करण, 2024	कीमत रु. 2,500
2. भारत का संविधान (पाकेट एडीशन)	2024	कीमत रु. 325

विधि साहित्य प्रकाशन
(विधायी विभाग)
विधि और न्याय मंत्रालय
भारत सरकार
भारतीय विधि संस्थान भवन,
भगवान दास मार्ग, नई दिल्ली-110001
Website : www.lawmin.nic.in
Email : am.vsp-molj@gov.in

भारत के समाचारपत्रों के रजिस्ट्रार द्वारा रजिस्ट्रीकृत रजि. सं. 16288/68

सादर

विधि साहित्य प्रकाशन द्वारा तीन मासिक निर्णय पत्रिकाओं - **उच्चतम न्यायालय निर्णय पत्रिका, उच्च न्यायालय सिविल निर्णय पत्रिका** और **उच्च न्यायालय दांडिक निर्णय पत्रिका** का प्रकाशन किया जाता है । उच्चतम न्यायालय निर्णय पत्रिका में उच्चतम न्यायालय के चयनित महत्वपूर्ण निर्णयों को और उच्च न्यायालय सिविल निर्णय पत्रिका तथा उच्च न्यायालय दांडिक निर्णय पत्रिका में देश के विभिन्न उच्च न्यायालयों के क्रमशः सिविल और दांडिक के चयनित महत्वपूर्ण निर्णयों को हिन्दी में प्रकाशित किया जाता है । उच्चतम न्यायालय निर्णय पत्रिका, उच्च न्यायालय सिविल निर्णय पत्रिका और उच्च न्यायालय दांडिक निर्णय पत्रिका की वार्षिक कीमत क्रमशः ₹ 2,100/-, ₹ 1,300/- और ₹ 1,300/- है । तीनों मासिक निर्णय पत्रिकाओं के नियमित ग्राहक बनकर हिन्दी के प्रचार-प्रसार के इस महान यज्ञ के भागी बन कर अनुगृहीत करें । साथ ही यह भी अवगत कराया जाता है कि केन्द्रीय अधिनियमों, विधि शब्दावली, विधि पत्रिकाओं और अन्य विधि प्रकाशनों को ऑन लाइन **https://bharatkosh.gov.in/product/product** पर प्राप्त किया जा सकता है ।

विधि साहित्य प्रकाशन
(विधायी विभाग)
विधि और न्याय मंत्रालय
भारत सरकार
भारतीय विधि संस्थान भवन,
भगवान दास मार्ग, नई दिल्ली-110001
दूरभाष : 011-23387589, 23385259, 23382105

विक्रेता : सहायक प्रबंधक, कारबार अनुभाग, विधि साहित्य प्रकाशन, विधि और न्याय मंत्रालय, विधायी विभाग, आई. एल. आई. बिल्डिंग, भगवानदास मार्ग, नई दिल्ली-110001 । दूरभाष : 011-23385259, 23387589, फैक्स : 011-23387589, ई-मेल : am.vsp-molj@gov.in